ईक्षु

राजभाषा पत्रिका

वर्ष 2 अंक 1
जनवरी–जून 2013

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch

विजन

प्रभावी, वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्द्धात्मक तथा जीवन्त गन्ना कृषि विकसित करना।

मिशन

भारत में चीनी और ऊर्जा की भावी आवश्यकता को पूरा करने के लिए गन्ने के उत्पादन, उत्पादकता, लाभदेयता तथा टिकाऊपन में वृद्धि करना।

उद्देश्य एवं ध्येय

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा सन् 2001 में अनुमोदित संस्थान का अधिदेश निम्नवत है :

- गन्ने तथा अन्य शर्करा फसलों के उत्पादन एवं सुरक्षा तकनीकों के सभी पक्षों पर मूलभूत एवं प्रयुक्त शोध करना
- गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयम्बटूर के सहयोग से उपोष्ण क्षेत्रों हेतु प्रजातियों के प्रजनन का कार्य करना
- गन्ना में फसल विविधता एवं मूल्य संवर्द्धन पर अनुसंधान
- समन्वित शोध, सूचना तथा प्रजनन सामग्री के परस्पर आदान–प्रदान हेतु राज्य कृषि विश्वविद्यालयों, शोध संस्थानों और अन्य संस्थाओं के साथ सहयोग स्थापित करना।
- क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों पर कृषकों, उद्योगों तथा अन्य उपयोगकर्ताओं को प्रशिक्षण, सलाह और विशेष सेवाएं प्रदान करना।

राजभाषा पत्रिका
वर्ष 2 : अंक 1
जनवरी–जून, 2013

इक्षु

सम्पादक मण्डल

प्रवीण कुमार सिंह
तपेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
सुधीर कुमार शुक्ल
राजेश कुमार सिंह
दिनेश कुमार पांडे
दिलीप कुमार
दीक्षा जोशी
गया करण सिंह
अभिषेक कुमार सिंह

कला एवं छायांकन

श्री योगेश मोहन सिंह

भाकृअनुप
ICAR

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ 226 002

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

© भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं।
संस्थान अथवा राजभाषा प्रकोष्ठ का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

अपने लेख एवं सुझाव भेजें :
संपादक, इक्षु एवं सदस्य–सचिव
राजभाषा प्रकोष्ठ,
भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
पो. आ.–दिलकुशा
लखनऊ 226 002
ई–मेलः ikshuiisr@yahoo.in

प्रकाशक
निदेशक
भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
रायबरेली रोड, पोस्ट : दिलकुशा, लखनऊ 226 002
फोन : 0522 – 2480735 / 36, 37, फैक्स : 0522 – 2480738
ई–मेल : iisrlko@sancharnet.in
वेबसाइट : www.iisr.nic.in

डा. सुशील सोलोमन
निदेशक

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ - 226 002

निदेशक की लेखनी से.....

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान से प्रकाशित हुई राजभाषा पत्रिका 'इक्षु' का प्रथम अंक आपने पढ़ा होगा। मुझे उम्मीद ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास भी है कि आपको यह प्रयास अच्छा लगा होगा। इसी क्रम में द्वितीय अंक आपके समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है। राजभाषा हिंदी के माध्यम से लोगों को बौद्धिक एवं सामाजिक पठन सामग्री उपलब्ध कराने का प्रयास किया गया है। गन्ना विषय के साथ ही अन्य विषयों को भी समाहित करके 'इक्षु' को और बेहतर बनाने का प्रयास निरंतर जारी है।

भारत में कृषि आधारित उद्योग में गन्ने का दूसरा स्थान है, जीडीपी में राष्ट्रीय स्तर पर इसका एक प्रतिशत का योगदान है। गन्ना एक नकदी फसल है, और ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कृषकों को सीधे लाभ पहुँचाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। विगत वर्ष में चीनी उद्योग द्वारा केन्द्रीय और राज्य स्तर पर 2500 करोड़ रूपये का कर प्राप्त हुआ था। अनुमानतः 6 करोड़ लोग इस उद्योग से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से जुड़े हैं, जिसमें करीब 500 चीनी मिलों का भी महत्त्वपूर्ण योगदान है। गन्ना उद्योग ने ग्रामीण भारत में तकरीबन 7.5 प्रतिशत लोगों को रोजगार दे रखा है। चीनी की जरूरत घरेलु उपयोग के लिए सन् 2030 तक 35 मिलियन टन होगी, जिसके लिए करीब 520 मिलियन टन गन्ने की जरूरत पड़ेगी। यह तभी संभव है जब गन्ने के विकास के लिए नई परियोजनाएँ, अनुसंधान और रणनीति बनाई जाय। इसके लिए यह संस्थान अपने सामरिक एवं बौद्धिक महत्त्व को भली प्रकार समझते हुए, विकास के पथ पर सदैव अग्रसर रहेगा।

संस्थान द्वारा विकसित कोलख 9709 किस्म, उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा संस्तुत की गई तथा इसकी अधिसूचना जारी कर दी गई है। पिछले साठ साल में इस संस्थान ने अनेकों किस्मों, तकनीकों जैसे केन नोड तकनीक, बडचिप तकनीक, सीड केन तकनीक, व्हाईट ग्रब के लिए फेरोमोन ट्रैप, स्पेस्ड ट्रांसप्लांटिंग तकनीक (एस.टी.पी.), स्वस्थ बीज गन्ना उत्पादन प्रौद्योगिकी, गन्ने में अर्न्तसस्य हेतु प्रौद्योगिकी पैकेज, गोल–गड्ढ़ा विधि द्वारा बुवाई, ट्रैन्च विधि द्वारा बुवाई, फर्बविधि द्वारा बुवाई की विधियों को विकसित किया है तथा गन्ने की खेती का यंत्रीकरण करने के लिए अनेक यंत्र विकसित किए हैं, जिसमें रिजर स्लीप शुगरकेन कटर–प्लांटर, तीन–पंक्ति बहुउद्देशीय गन्ना कटर–प्लान्टर, द्विपंक्ति गन्ना कटर–प्लांटर, रेज्ड बैड सीडर, रेज्ड बैड सीडर–कम–शुगरकेन कटर प्लान्टर, पेड़ी प्रबंधन यंत्र इत्यादि प्रमुख हैं।

'इक्षु' के इस अंक को नया रूप देने में जिन लोगों का योगदान है मैं उन सभी को हार्दिक बधाई देता हूँ। आज की इस भाग–दौड़ भरी जिंदगी में जहाँ व्यक्ति सांसारिक, भौतिक एवं मानसिक कष्टों के वशीभूत है, वहीं पर जीवन का आनंद भी कुछ छोटी–छोटी चीजों से ही मिलता है। जरूरत है उन छोटी–छोटी चीजों को इकट्ठा करने की ताकि उसे यादों के रूप में अपने मन में बसाया जा सके। मुझे यह उम्मीद है कि राजभाषा को समर्पित यह 'इक्षु' पत्रिका आपके विचारों को एक दिशा देने में सक्षम होगी और इस अंक में समाहित समाज, साहित्य और जीवन के अन्य पहलुओं, आरोग्य, आमोद–प्रमोद इत्यादि से संबंधित लेख आपको पसंद आएँगे। मेरा यह भी विश्वास है कि हम सबका यह प्रयास आपको कुछ समय के लिए आनंदित करने में सफल होगा।

शुभकामनाओं सहित,

लखनऊ
29 जून, 2013

(सुशील सोलोमन)

डा. प्रवीण कुमार सिंह
प्रधान वैज्ञानिक (फसल सुधार)
संपादक (इक्षु) एवं प्रभारी (राजभाषा प्रभाग)

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ - 226 002

'इक्षु सार'

गंगा–यमुना द्वारा सिंचित इस बृहद् क्षेत्र में जहाँ हमारी राजभाषा हिन्दी, जनभाषा के रूप में सुशोभित है, वहीं मिठास की फसल 'इक्षु' (गन्ना) ने भी अपनी पहचान एवं महत्ता स्थापित की है। आज केवल उत्तर प्रदेश में 30 लाख से भी ज्यादा कृषक गन्ने की खेती द्वारा लाभ कमा रहे हैं एवं अपने जीवन में ऊर्जा की पूर्ति भी कर रहे हैं। गन्ना उत्पादन जहाँ एक तरफ किसानों की लगन और मेहनत पर निर्भर है वहीं इसको निरंतर बढ़ाने मे नई–नई तकनीकों का भी बराबर महत्व है। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान उन्नत तकनीकों के विकास में पिछले 60 वर्षों में जिस अग्रणी भूमिका निभाते हुए अपनी स्थापना को हीरक जयंती मना रहा हैं। इस अवसर पर संस्थान द्वारा विकसित नवीनतम तकनीकी ज्ञान अन्य उपयोगी सामग्री को जन साधारण तक प्रभावी ढंग से पहुँचाने के उद्देश्य से 'इक्षु' पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ है। हमारा यह प्रयास पाठकों को अवश्य ज्ञानवर्धर एवं रूचिकर लगेगा ऐसा हमारा विश्वास है।

उत्तराखण्ड में हाल ही में घटी प्राकृतिक आपदा इस बात की द्योतक है कि मौसम में बड़े बदलाव हो रहे हैं। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम प्रकृति के अनुकूल/फसल प्रबंधन तकनीकों का विकास, प्रचार और प्रसार करें। उचित किस्मों का चयन, जल–प्रबंधन, रसायनों का समुचित प्रयोग, प्राकृतिक संसाधनों का सीमित दोहन इत्यादि कुछ ऐसे उपाय है जिन्हें हम एक सार्थक पहल कह सकते है। इक्षु के इस अंक में कुछ ऐसे ही विषयों के साथ–साथ अन्य रोचक, समीचीन एवं तथ्यात्मक लेख समाहित करने की कोशिश की गई है।

पत्रिका को एक नए कलेवर में प्रस्तुत किया जा रहा है जिसके अंतर्गत लेखों एवं अन्य पठन सामग्रियों को अलग–अलग प्रभागों में स्थान दिया गया है। ज्ञान–विज्ञान प्रभाग, आरोग्य एवं संजीवनी, आमोद–प्रामोद, समाचार प्रभाग इत्यादि को राजभाषा प्रभाग के साथ इस मंशा से तैयार किया गया है जिससे की पत्रिका ज्ञान और रोचकता का अद्भुत संगम बन सके। हमें उम्मीद है कि इक्षु–रसपान के उपरांत जो भी अनुभूति होगी, वह हम तक 'आपके विचार' के रूप में अवश्य पहुँचेगी और हम 'इक्षु' को और भी मधुर बनाने में सक्षम होंगे।

लखनऊ
29 जून, 2013

(प्रवीण कुमार सिंह)

राजभाषा पत्रिका

राजभाषा प्रकोष्ठ की अर्धवार्षिक पत्रिका
वर्ष 2 : अंक 1
जनवरी–जून, 2013

विषय–वस्तु

राजभाषा प्रभाग

राष्ट्रपति के आदेश, 1960 (गृह मंत्रालय की दि. 27 अप्रैल, 1960 की अधिसूचना संख्या 2/8/60–रा.भा., की प्रतिलिपि) 1

संकलन : अभिषेक कुमार सिंह

हिन्दी का मानकीकरण एवं आधुनिकीकरण 6

अभिषेक कुमार सिंह, धीरज शर्मा एवं अखिलेश कुमार सिंह

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

वनस्पति शास्त्र के विकास में गन्ने के अनुसंधान का योगदान 9

अशोक कुमार श्रीवास्तव, सोमेन्द्र प्रसाद शुक्ला, अनीता सावनानी एवं सुशील सोलोमन

कम पानी से अधिक गन्ना उपज की उन्नत सिंचाई तकनीक 11

ईश्वर सिंह एवं कामता प्रसाद

गन्ने में पोषक तत्वों का प्रबंधन 16

राम रतन वर्मा एवं ईश्वर सिंह

ट्राइकोडर्मा एवं ग्लूकोन एसीटोबैक्टर का गन्ने की वृद्धि तथा मृदा स्वास्थ्य पर प्रभाव 19

एस.के. अवस्थी एवं सुधीर कुमार शुक्ला

गन्ने के प्रमुख रोग एवं कीट तथा उनका समेकित प्रबन्धन 22

रामजी लाल, दिनेश चन्द्र रजक एवं सत्यानन्द सुशील

गन्ने में विभिन्न अजैविक प्रतिबलों को कम करने की क्षमता का आंकलन 28

रमाकान्त राय, पुष्पा सिंह, अमरेश चन्द्रा एवं एस. सोलोमन

उत्तम गुड़ उत्पादन के लिए गन्ने के रस की सफाई एवं सान्द्रीकरण 30

रमन बनर्जी

चुकंदर की वैज्ञानिक खेती 32

अर्चना सिरारी, अभिषेक कुमार सिंह, जे. सिंह एवं प्रवीण कुमार सिंह

धान में लगने वाले प्रमुख रोग 36

अतुल कुमार एवं सोनी कुमारी

पौधा किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 2001 में कृषकों के अधिकार 40
अर्चना सिरारी, प्रवीण कुमार सिंह एवं जे. सिंह
भारत में लाख उत्पादन : वस्तुस्थिति, समस्यायें एवं निदान 42
गोविन्द पाल, आर.के. सिंह एवं आर.के. योगी
भारतीय परिदृश्य में बौद्धिक सम्पदा अधिकार 44
मोहम्मद अशफाक, ब्रह्म प्रकाश एवं अश्विनी कुमार शर्मा
ग्रीष्म ऋतु की गहरी जुताई : काम एक लाभ अनेक 46
अजीत सिंह, जगन्नाथ पाठक एवं भूपेन्द्र सिंह
भारत में वृक्ष आधारित गोंद का उत्पादन व विपणन 48
गोविन्द पाल, आर.के. सिंह एवं एस.के.एस. यादव
मृदा परीक्षण एवं फसलों में संतुलित उर्वरक की अनुशंसा 52
मनोज कुमार सिंह एवं डी.के. राघव
बीजोपचार की बीज उत्पादन में अहम भूमिका 54
अतुल कुमार, सोनी कुमारी, ईश्वर सिंह सोलंकी एवं कुन्दन कुमार जायसवाल
जल प्रबंधन : समय की माँग 57
आर.के. सिंह एवं अभिषेक कुमार सिंह
कीटनाशकों का प्रयोग करते समय सावधानियाँ 59
अरूण बैठा, दिनेश चन्द्र रजक, श्रीकृष्ण गंगवार एवं बुद्धी लाल
थनैला : पशुओं में होने वाला एक घातक रोग 63
सत्यव्रत सिंह, रमाकान्त एवं जितेन्द्र प्रताप सिंह
पशुओं में नवजात बच्चों की मृत्युदर रोकने के उपाय 65
राकेश कुमार सिंह, आर.के. सिंह एवं अखिलेश कुमार सिंह
पशुओं में होने वाले ऐन्थ्रक्स रोग के कारण, लक्षण, उपचार एवं बचाव 67
रमाकान्त, सत्यव्रत सिंह एवं जितेन्द्र प्रताप सिंह

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

गन्ने की प्राचीन प्रजातियाँ तथा उनके भेषज्य गुण 68
अशोक श्रीवास्तव, सुशील सोलोमन, अनीता सावनानी, गोपी कृष्ण गुप्त एवं सोमेन्द्र शुक्ल
गन्ना तेरे उत्पाद अनेक : गन्ना तेरे उपयोग अनेक 70
राजेन्द्र गुप्ता एवं रश्मि गुप्ता
बहुपयोगी पोदीना 73
विनीका सिंह, शालिनी ठाकुर एवं दीपक राय

गुणकारी पुदीना 76
मिथलेश तिवारी एवं जसवंत सिंह
मानव भोजन में प्रोटीन का महत्व 77
ब्रह्म प्रकाश, अश्विनी कुमार शर्मा एवं मोहम्मद अशफाक
सेहत की संजीवनी 80
मिथिलेश तिवारी एवं जसवंत सिंह

आमोद–प्रमोद प्रभाग

तीन मुक्तक 82
सुधीर कुमार शुक्ल
मुझे याद है 82
योगेश मोहन सिंह
मरने की उतावली क्यों? 83
ब्रह्म प्रकाश
जन्म दिन 84
अपरेश मुखर्जी
ग़ज़लें 85
एस.आई. अनवर
ऊँ चक्षु देवाय नमः 87
साहबदीन
भारतीय संस्कृति का विश्व व्यापी विस्तार 88
मालती शर्मा एवं दीपक राय
जीवन की सार्थकता 91
सुधीर कुमार शुक्ल
नैतिकता का पतन 91
चन्द्र प्रकाश सिंह
शार्टकट् का प्रयोग करेंः समय की बचत करें 92
धर्मेंद्र चंद पंत, अरविन्द कुमार यादव एवं नागचंद
लघु कहानियाँ एवं जानकारियाँ 93
दिलदार हुसैन
चुटकुला (कन्फ्यूजन) 94
एस.आई. अनवर
आपके पत्र 95
समाचार प्रभाग 97

राष्ट्रपति के आदेश, 1960
(गृह मंत्रालय की दि. 27 अप्रैल, 1960 की अधिसूचना संख्या 2/8/60–रा.भा., की प्रतिलिपि)

अधिसूचना

राष्ट्रपति का निम्नलिखित आदेश आम जानकारी के लिए प्रकाशित किया जाता है :–

नई दिल्ली, दिनांक 27 अप्रैल, 1960

आदेश

लोकसभा के 20 सदस्यों और राज्य सभा के 10 सदस्यों की एक समिति प्रथम–राजभाषा आयोग की सिफारिशों पर विचार करने लिए और उनके विषय में अपनी राय राष्ट्रपति के समक्ष पेश करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 344 के खंड (4) के उपबंधों के अनुसार नियुक्त की गई थी। समिति ने अपनी रिर्पोट राष्ट्रपति के समक्ष 8 फरवरी, 1959 को पेश कर दी। नीचे रिर्पोट की कुछ मुख्य बातें दी जा रही हैं जिनसे समिति के सामान्य दृष्टिकोण का परिचय मिल सकता है :–

(क) राजभाषा के बारे में संविधान में बड़ी समन्वित योजना दी हुई है। इसमें योजना के दायरे से बाहर जाए बिना स्थिति के अनुसार परिवर्तन करने की गुंजाइश है।

(ख) विभिन्न प्रादेशिक भाषाएं राज्यों में शिक्षा और सरकारी काम–काज के माध्यम के रूप में तेजी से अंग्रेजी का स्थान ले रही हैं। यह स्वाभाविक ही है कि प्रादेशिक भाषाएं अपना उचित स्थान प्राप्त करें। अतः व्यवहारिक दृष्टि से यह बात आवश्यक हो गई है कि संघ के प्रयोजनों के लिए कोई एक भारतीय भाषा काम में लाई जाए। किन्तु यह आवश्यक नहीं है कि यह परिर्वतन किसी नियत तारीख को ही हो। यह परिवर्तन धीरे–धीरे इस प्रकार किया जाना चाहिए कि कोई गड़बड़ी न हो और कम से कम असुविधा हो।

(ग) 1965 तक अंग्रेजी मुख्य राजभाषा और हिन्दी सहायक राजभाषा रहनी चाहिए। 1965 के उपरान्त जब हिन्दी संघ की मुख्य राजभाषा हो जाएगी अंग्रेजी सहायक राजभाषा के रूप में ही चलती रहनी चाहिए।

(घ) संघ के प्रयोजनों में से किसी के लिए अंग्रेजी के प्रयोग पर कोई रोक इस समय नहीं लगाई जानी चाहिए और अनुच्छेद 343 के खंड (3) के अनुसार इस बात की व्यवस्था की जानी चाहिए कि 1965 के उपरान्त भी अंग्रेजी का प्रयोग इन प्रयोजनों के लिए, जिन्हें संसद विधि द्वारा उल्लिखित करें तब तक होता रहे जब तक वैसा करना आवश्यक रहे।

(ङ) अनुच्छेद 351 का यह उपबन्ध कि हिन्दी का विकास ऐसे किया जाए कि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सब तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके, अत्यन्त महत्वपूर्ण है और इस बात के लिए पूरा प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए कि सरल और सुबोध शब्द काम में लाए जाएं।

रिपोर्ट की प्रतियां संसद के दोनों सदनों के पटल पर 1959 के अप्रैल मास में रख दी गई थीं और रिपोर्ट पर विचार–विमर्श लोक सभा में 2 सितम्बर से 4 सितम्बर, 1959 तक और राज्य सभा में 8 और 9 सितम्बर, 1959 को हुआ था। लोक सभा में इस पर विचार–विमर्श के समय प्रधानमंत्री ने 4 सितम्बर, 1959 को एक भाषण दिया था। राजभाषा के प्रश्न पर सरकार का जो दृष्टिकोण है उसे उन्होंने अपने इस भाषण में मोटे तौर पर व्यक्त कर दिया था।

अनुच्छेद 344 के खंड (6) द्वारा दी गई शक्तियों का प्रयोग करते हुए राष्ट्रपति ने समिति की रिपोर्ट पर विचार किया है और राजभाषा आयोग की सिफारिशों पर समिति द्वारा अभिव्यक्त राय को ध्यान में रखकर, इसके बाद निम्नलिखित निदेश जारी किए हैं।

शब्दावली

आयोग की जिन मुख्य सिफारिशों को समिति ने मान लिया वे ये हैं–

(क) शब्दावली तैयार करने में मुख्य लक्ष्य उसकी स्पष्टता, यथार्थता और सरलता होनी चाहिए।

(ख) अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली अपनाई जाए, या जहां भी आवश्यक हो, अनुकूलन कर लिया जाए।

(ग) सब भारतीय भाषाओं के लिए शब्दावली का विकास करते समय लक्ष्य यह होना चाहिए कि उसमें जहां तक हो सके अधिकतम एकरूपता हो; और

(घ) हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं की शब्दावली के विकास के लिए जो प्रयत्न केन्द्र और राज्यों में हो

रहे हैं उनमें समन्वय स्थापित करने के लिए समुचित प्रबन्ध किए जाने चाहिए। इसके अतिरिक्त समिति का यह मत है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में सब भारतीय भाषाओं में जहां तक हो सके एकरूपता होनी चाहिए और शब्दावली लगभग अंग्रेजी या अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली जैसी होनी चाहिए। इस दृष्टि से समिति ने यह सुझाव दिया है कि वे इस क्षेत्र में विभिन्न संस्थाओं द्वारा किए गए काम में समन्वय स्थापित करने और उसकी देखरेख के लिए और सब भारतीय भाषाओं को प्रयोग में लाने की दृष्टि से एक प्रामाणिक शब्दकोश निकालने के लिए ऐसा स्थाई आयोग कायम किया जाए जिसके सदस्य मुख्यतः वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी–विद हों।

शिक्षा मंत्रालय निम्नलिखित विषय में कार्यवाही करें –

(क) अब तक किए गए काम पर पुनःविचार और समिति द्वारा स्वीकृत सामान्य सिद्धान्तों के अनुकूल शब्दावली का विकास, विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में वे शब्द, जिनका प्रयोग अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में होता है, कम से कम परिवर्तन के साथ अपना लिए जाएं, अर्थात मूल शब्द वे होने चाहिए जो कि आजकल अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली में काम आते हैं। उनसे व्युत्पन्न शब्दों का जहां भी आवश्यक हो भारतीयकरण किया जा सकता है।

(ख) शब्दावली तैयार करने के काम में समन्वय स्थापित करने के लिए प्रबन्ध करने के विषय में सुझाव देना, और

(ग) विज्ञान और तकनीकी शब्दावली के विकास के लिए समिति के सुझाव के अनुसार स्थाई आयोग का निर्माण।

प्रशासनिक संहिताओं और अन्य कार्य–विधि साहित्य का अनुवाद–

इस आवश्यकता को दृष्टि में रखकर कि संहिताओं और अन्य कार्यविधि साहित्य के अनुवाद में प्रयुक्त भाषा में किसी हद तक एकरूपता होनी चाहिए, समिति ने आयोग की यह सिफारिश मान ली है कि सारा काम एक अभिकरण को सौंप दिया जाए।

शिक्षा मंत्रालय सांविधिक नियमों, विनियम और आदेशों के अलावा बाकी सब संहिताओं और अन्य कार्यविधि साहित्य का अनुवाद करे। सांविधिक नियमों, विनियमों और आदेशों का अनुवाद संविधियों के अनुवाद के साथ घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है, इसलिए यह काम विधि मंत्रालय करे। इस बात का पूरा प्रयत्न होना चाहिए कि सब भारतीय भाषाओं में इन अनुवादों को शब्दावली में जहां तक हो सके एकरूपता रखी जाए।

प्रशासनिक कर्मचारी वर्ग को हिन्दी का प्रशिक्षण

(क) समिति द्वारा अभिव्यक्त मत के अनुसार 45 वर्ष से कम आयु वाले सब केन्द्रीय कर्मचारियों के लिए सेवा कालीन हिन्दी प्रशिक्षण प्राप्त करना अनिवार्य कर दिया जाना चाहिए। तृतीय श्रेणी के ग्रेड से नीचे के कर्मचारियों और औद्योगिक संस्थाएं और कार्य प्रभारित कर्मचारियों के संबंध में यह बात लागू न होगी। इस योजना के अन्तर्गत नियत तारीख तक विहित योग्यता प्राप्त कर सकने के लिए कर्मचारी को कोई दंड नहीं दिया जाना चाहिए। हिन्दी भाषा की पढ़ाई के लिए सुविधाएं प्रशिक्षणार्थियों को मुफ्त मिलती रहनी चाहिए।

(ख) गृह मंत्रालय उन टाइपकारों और आशुलिपिकों को हिन्दी टाइपराइटिंग और आशुलिपि प्रशिक्षण देने के लिए आवश्यक प्रबन्ध करे जो केन्द्रीय सरकार की नौकरी में हैं।

(ग) शिक्षा मंत्रालय हिन्दी टाइपराइटरों के मानक की–बोर्ड (कुंजीपटल) के विकास के लिए शीघ्र कदम उठाए।

हिन्दी प्रचार

(क) आयोग की इस सिफारिश से कि यह काम करने की जिम्मेदारी अब सरकार उठाए, समिति सहमत हो गई है। जिन क्षेत्रों में प्रभावी रूप से काम करने वाली गैर सरकारी संस्थाएं पहले से ही विद्यमान हैं उनमें उन संस्थाओं को वित्तीय और अन्य प्रकार की सहायता दी जाए और जहां ऐसी संस्थाएं नहीं हैं वहां सरकार आवश्यक संगठन कायम करे।

शिक्षा मंत्रालय इस बात की समीक्षा करे कि हिन्दी प्रचार के लिए जो वर्तमान व्यवस्था है वह कैसी चल रही है। साथ ही वह समिति द्वारा सुझाई गई दिशाओं में आगे कार्रवाई करे।

(ख) शिक्षा मंत्रालय और वैज्ञानिक अनुसंधान और सांस्कृतिक कार्य मंत्रालय परस्पर मिलकर भारतीय भाषा, विज्ञान भाषा–शास्त्र और साहित्य सम्बन्धी अध्ययन और अनुसंधान को प्रोत्साहन देने के लिए समिति द्वारा सुझाए गए तरीके से आवश्यक कार्रवाई करें और

विभिन्न भारतीय भाषाओं को परस्पर निकट लाने के लिए अनुच्छेद 351 में दिए गए निदेश के अनुसार हिन्दी का विकास करने के लिए आवश्यक योजना तैयार करें।

केन्द्रीय सरकारी विभाग के स्थानीय कार्यालयों के लिए भर्ती

(क) समिति की राय है कि केन्द्रीय सरकारी विभागों के स्थानीय कार्यालय अपने आन्तरिक कामकाज के लिए हिन्दी का प्रयोग करें और जनता के साथ पत्र–व्यवहार में उन प्रदेशों की प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग करें। अपने स्थानीय कार्यालयों में अंग्रेजी के अतिरिक्त हिन्दी का उत्तरोत्तर अधिक प्रयोग करने के वास्ते योजना तैयार करने में केन्द्रीय सरकारी विभाग इस आवश्यकता को ध्यान में रखें कि यथासंभव अधिक से अधिक मात्रा में प्रादेशिक भाषाओं में फार्म और विभागीय साहित्य उपलब्ध करा कर वहां की जनता को पूरी सुविधाएं प्रदान की जानी चाहिए।

(ख) समिति की राय है कि केन्द्रीय सरकार के प्रशासनिक अभिकरणों और विभागों में कर्मचारियों की वर्तमान व्यवस्था पर पुनर्विचार किया जाए, कर्मचारियों का प्रादेशिक आधार पर विकेन्द्रीकरण कर दिया जाए, इसके लिए भर्ती के तरीकों और अर्हताओं में उपयुक्त संशोधन करना होगा।

स्थानीय कार्यालयों में जिन कोटियों के पदों पर कार्य करने वालों की बदली मामूली तौर पर प्रदेश के बाहर नहीं होती उन कोटियों के सम्बन्ध में यह सुझाव, कोई अधिवास सम्बन्धी प्रतिबन्ध लगाए बिना, सिद्धान्तःमान लिया जाना चाहिए।

(ग) समिति आयोग की इस सिफारिश से सहमत है कि केन्द्रीय सरकार के लिए यह विहित कर देना न्यायसम्मत होगा कि उसकी नौकरियों में लगने के लिए अर्हता यह भी होगी कि उम्मीदवार को हिन्दी भाषा का सम्यक ज्ञान हो। पर ऐसा तभी किया जाना चाहिए जबकि इसके लिए काफी पहले से ही सूचना दे दी गई हो और भाषा–योग्यता का विहित स्तर मामूली हो और इस बारे में जो भी कमी हो उसे सेवाकालीन प्रशिक्षण द्वारा पूरा किया जा सकता है।

यह सिफारिश अभी हिन्दी भाषी क्षेत्रों के केन्द्रीय सरकारी विभागों में ही कार्यान्वित की जाए, हिन्दीतर भाषा–भाषी क्षेत्रों के स्थानीय कार्यालयों में नहीं।

(क), (ख) और (ग) में दिए गए निदेश भारतीय लेखा–परीक्षा और लेखा विभाग के अधीन कार्यालयों के सम्बन्ध में लागू न होंगे।

प्रशिक्षण संस्थान

(क) समिति ने यह सुझाव दिया है कि नेशनल डिफेंस एकेडमी जैसे प्रशिक्षण संस्थानों में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी ही बना रहे किन्तु शिक्षा सम्बन्धी कुछ या सभी प्रयोजनों के लिए माध्यम के रूप में हिन्दी का प्रयोग शुरू करने के लिए उचित कदम उठाए जाएं।

रक्षा मंत्रालय अनुदेश पुस्तिकाओं इत्यादि के हिन्दी प्रकाशन आदि के रूप में समुचित प्रारम्भिक कारवाई करें, ताकि जहां भी व्यवहार्य हो शिक्षा के माध्यम के रूप में हिन्दी का प्रयोग सम्भव हो जाए।

(ख) समिति ने सुझाव दिया कि प्रशिक्षण संस्थानों में प्रवेश के लिए, अंग्रेजी और हिन्दी दोनों ही परीक्षा के माध्यम हों, किन्तु परिक्षार्थियों का यह विकल्प रहे कि वे सब या कुछ परीक्षा पत्रों के लिए उनमें से किसी एक भाषा को चुन लें और एक विशेष समिति यह जांच करने के लिए नियुक्त की जाए कि नियत कोटा प्रणाली अपनाए बिना प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग परीक्षा के माध्यम के रूप में कहां तक शुरू किया जा सकता है।

रक्षा मंत्रालय को चाहिए कि वह प्रवेश परीक्षाओं में वैकल्पिक माध्यम के रूप में हिन्दी का प्रयोग शुरू करने के लिए आवश्यक कारवाई करे और कोई नियत कोटा प्रणाली अपनाए बिना परीक्षा के माध्यम के रूप में प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग आरम्भ करने के प्रश्न पर विचार करने के लिए एक विशेषज्ञ समिति नियुक्त करे।

अखिल भारतीय सेवाओं और उच्चतर केन्द्रीय सेवाओं में भर्ती

(क) परीक्षा का माध्यम

समिति कि राय है कि

क परीक्षा का माध्यम अंग्रेजी बना रहे और कुछ समय पश्चात् हिन्दी वैकल्पिक माध्यम के रूप में अपना ली जाए। उसके बाद जब तक आवश्यक हो अंग्रेजी और हिन्दी दोनों ही परीक्षार्थी के विकल्पानुसार परीक्षा के माध्यम के रूप में अपनाने की छूट हो; और

ख किसी प्रकार की नियत कोटा प्रणाली अपनाए बिना परीक्षा के माध्यम के रूप में विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग शुरू करने की व्यवहार्यता की जांच करने के लिए एक विशेषज्ञ समिति नियुक्त की जाए।

कुछ समय के पश्चात वैकल्पिक माध्यम के रूप में हिन्दी का प्रयोग शुरू

करने के लिए संघ लोक सेवा आयोग के साथ परामर्श कर गृह मंत्रालय आवश्यक कारवाई करे। वैकल्पिक माध्यम के रूप में विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग करने से गम्भीर कठिनाइयां पैदा होने की संभावना है, इसलिए वैकल्पिक माध्यम के रूप में विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग शुरू करने की व्यवहार्यता की जांच करने के लिए विशेषज्ञ समिति नियुक्त करना आवश्यक नहीं है।

(ख) भाषा विषयक प्रश्न–पत्र

समिति की राय है कि सम्यक सूचना के बाद समान स्तर के दो अनिवार्य प्रश्न–पत्र होने चाहिए जिनमें से एक हिन्दी और दूसरा हिन्दी से भिन्न किसी भारतीय भाषा का होना चाहिए और परीक्षार्थी को यह स्वतंत्रता होनी चाहिए कि वह इनमें से किसी एक को चुन ले।

अभी केवल एक ऐच्छिक हिन्दी परीक्षा पत्र शुरू किया जाए। प्रतियोगिता के फल पर चुने गए जो परीक्षार्थी इस परीक्षा पत्र में उत्तीर्ण हो गए हों, उन्हें भर्ती के बाद जो विभागीय हिन्दी परीक्षा देनी होती है उसमें बैठने और उसमें उत्तीर्ण होने की शर्त से छूट दी जाए।

अंक

जैसा कि समिति का सुझाव है केन्द्रीय मंत्रालयों का हिन्दी प्रकाशनों में अन्तर्राष्ट्रीय अंकों के अतिरिक्त देवनागरी अंकों के प्रयोग के सम्बन्ध में एक आधारभूत नीति अपनाई जाए, जिसका निर्धारण इस आधार पर किया जाए कि वे प्रकाशन किस प्रकार की जनता के लिए हैं और उसकी विषयवस्तु क्या है। वैज्ञानिक, औद्योगिक और सांख्यिकीय प्रकाशनों में, जिसमें केन्द्रीय सरकार का बजट सम्बन्धी साहित्य भी शामिल है, बराबर अन्तर्राष्ट्रीय अंकों का प्रयोग किया जाए।

अधिनियमों, विधेयकों इत्यादि की भाषा

(क) समिति ने राय दी है कि संसदीय विधियां अंग्रेजी में बनती रहें किन्तु उनका प्रमाणिक हिन्दी अनुवाद उपलब्ध कराया जाए। संसदीय विधियां अंग्रेजी में तो रहें पर उसके प्रामाणिक हिन्दी अनुवाद की व्यवस्था करने के वास्ते विधि मंत्रालय आवश्यक विधेयक उचित समय पर पेश करे। संसदीय विधियों का प्रादेशिक भाषाओं में अनुवाद कराने का प्रबन्ध भी विधि मंत्रालय करे।

(ख) समिति ने राय जाहिर की है जहां कहीं राज्य विधान मण्डल में पेश किए गए विधेयकों या पास किए गए अधिनियमों का मूल पाठ हिन्दी में से भिन्न किसी भाषा में है, वहां अनुच्छेद 348 के खण्ड (3) के अनुसार अंग्रेजी अनुवाद के अलावा उसका हिन्दी अनुवाद भी प्रकाशित किया जाए।

राज्य की राजभाषा में पाठ के साथ–साथ राज्य विधेयकों, अधिनियमों और अन्य सांविधिक लिखतों के हिन्दी अनुवाद के प्रकाशन के लिए आवश्यक विधेयक उचित समय पर पेश किया जाए।

उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय की भाषा

राजभाषा आयोग ने सिफारिश की थी कि जहां तक उच्चतम न्यायालय की भाषा का सवाल है उसकी भाषा इस परिर्वतन का समय आने पर अन्ततः हिन्दी होनी चाहिए। समिति ने यह सिफारिश मान ली है।

आयोग ने उच्च न्यायालयों की भाषा के विषय में प्रादेशिक भाषाओं और हिन्दी के पक्ष–विपक्ष में विचार किया और सिफारिश की कि जब भी इस परिवर्तन का समय आए, उच्च न्यायालयों के निर्णयों, आज्ञप्तियों (डिक्रियों) और आदेशों की भाषा जब प्रदेशों में हिन्दी होनी चाहिए किन्तु समिति की राय है कि राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से आवश्यक विधेयक पेश करके यह व्यवस्था करने की गुंजाइश रहे कि उच्च न्यायालयों के निर्णयों, आज्ञप्तियों (डिक्रियों) और आदेशों के लिए उच्च न्यायालय में हिन्दी और राज्यों की राजभाषाएं विकल्पत प्रयोग में लाई जा सकेंगी।

समिति की राय है कि उच्चतम न्यायालय अन्ततः अपना सब काम हिन्दी में करे, यह सिद्धान्त रूप में स्वीकार्य है और इसके संबंध में समुचित कार्यवाही उसी समय अपेक्षित होगी जब कि इस परिवर्तन के लिए समय आ जाएगा।

जैसा कि आयोग की सिफारिश की तरमीम करते हुए समिति ने सुझाव दिया है, उच्च न्यायालयों की भाषा के विषय में यह व्यवस्था करने के लिए आवश्यक विधेयक विधि मंत्रालय उचित समय पर राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से पेश करे कि निर्णयों, डिक्रियों और आदेशों के प्रयोजनों के लिए हिन्दी और राज्यों की राजभाषाओं का प्रयोग विकल्पतः किया जा सकेगा।

विधि क्षेत्र में हिन्दी में काम करने के लिए आवश्यक आरम्भिक कदम

मानक विधि शब्दकोश तैयार करने, केन्द्र तथा राज्य के विधान निर्माण से संबंधित सांविधिक ग्रंथ का अधिनियम करने, विधि शब्दावली तैयार करने की योजना बनाने और जिस संक्रमण काल में सांविधिक ग्रंथ और साथ ही निर्णय

विधि अंशतः हिन्दी और अंग्रेजी में होंगे, उस अवधि में प्रारम्भिक कदम उठाने के बारे में आयोग ने जो सिफारिश की थी उन्हें समिति ने मान लिया है। साथ ही समिति ने यह सुझाव भी दिया है कि संविधियों के अनुवाद और विधि शब्दावली तथा कोशों से संबंधित सर्म्पूण कार्यक्रम की समुचित योजना बनाने और उसे कार्यान्वित करने के लिए भारत की विभिन्न राष्ट्रभाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले विशेषज्ञों का एक स्थाई आयोग या इस प्रकार कोई उच्च स्तरीय निकाय बनाया जाए। समिति ने यह राय भी जाहिर की है कि राज्य सरकारों को परामर्श दिया जाए कि वे भी केन्द्रीय सरकार से राय लेकर इस संबंध में आवश्यक कारवाई करें। समिति के सुझाव को दृष्टि में रखकर विधि मंत्रालय यथासंभव सब भारतीय भाषाओं में प्रयोग के लिए सर्वमान्य विधि शब्दावली की तैयारी और संविधियों के हिन्दी में अनुवाद संबंधी पूरे काम के लिए समुचित योजना बनाने और पूरा करने के लिए विधि विशेषज्ञों के एक स्थाई आयोग का निर्माण करे।

हिन्दी के प्रगामी प्रयोग के लिए योजना का कार्यक्रम

समिति ने यह सुझाव दिया है कि संघ की राजभाषा के रूप में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग की योजना संघ सरकार बनाए और कार्यान्वित करे। संघ के राजकीय प्रयोजनों में से किसी के लिए अंग्रेजी के प्रयोग पर इस समय कोई रोक न लगाई जाए।

तद्नुसार गृह मंत्रालय एक योजना कार्यक्रम तैयार करे और उसे अमल में लाने के संबंध में आवश्यक कारवाई करे। इस योजना का उद्देश्य होगा संघीय प्रशासन में बिना कठिनाई के हिन्दी के प्रगामी प्रयोग के लिए प्रारम्भिक कदम उठाना और संविधान के अनुच्छेद 343 खंड (2) में किए गए उपबन्ध के अनुसार संघ के विभिन्न कार्यों में अंग्रेजी के साथ–साथ हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देना, अंग्रेजी के अतिरिक्त हिन्दी का प्रयोग कहां तक किया जा सकता है यह बात इन प्रारम्भिक कारवाईयों की सफलता पर बहुत कुछ निर्भर करेगी। इस बीच प्राप्त अनुभव के आधार पर अंग्रेजी के अतिरिक्त हिन्दी के वास्तविक प्रयोग की योजना पर समय–समय पर पुनर्विचार और उसमें हेर–फेर करना होगा।

संकलन :

अभिषेक कुमार सिंह

अखिल भारत के परस्पर व्यवहार के लिये ऐसी भाषा की आवश्यकता है जिसे जनता का अधिकतम भाग पहले से ही जानता समझता है।

महात्मा गाँधी

सरकारी कामकाज में सरल हिन्दी भाषा का प्रयोग होना चाहिए। हिन्दी एक जानदार भाषा है वह जितनी ही बढ़ेगी, देश का उतना ही कल्याण होगा।

पं. जवाहर लाल नेहरू

हिन्दी का मानकीकरण एवं आधुनिकीकरण

अभिषेक कुमार सिंह[1], धीरज शर्मा[2] एवं अखिलेश कुमार सिंह[1]

[1]भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
[2]केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

यदि हम देव नागरी लिपि पर चर्चा करते हैं और ध्यान देतें हैं तो यह पायेंगे कि यह लिपि विश्व की सबसे अधिक वैज्ञानिक लिपि है। इसका लेखन एवं उच्चारण की एकरूपता, मात्राओं का प्रयोग इत्यादि ऐसी विशेषताएं है जो नागरी को अन्य लिपियों से विशिष्ट एवं श्रेष्ठ सिद्ध करती है। इससे हमें यह अर्थ नहीं निकालना चहिए कि देव नागरी लिपि में परिवर्तन नहीं किया जा सकता है इसमें भी कुछ परिवर्तन की जरूरत है। ऐसा नहीं है कि इस लिपि में परिवर्तन नहीं हुआ है। इसे यहाँ तक पहुँचने में काफी परिवर्तन देखना पड़ा है। देवनागरी लिपि को और अधिक लोकप्रिय बनाने के लिए जरूरी है कि इसका सरलीकरण किया जाय। इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखकर इस लिपि का भी मानकीकरण किया गया है।

संविधान के अनुच्छेद 343 (1) के अनुसार संध की राजभाषा हिन्दी और उसकी लिपि देवनागरी होगी। अंको का रूप भारतीय अंकों का अन्तर्राष्ट्रीय होगा। हिन्दी का प्रयोग एक विस्तृत भूखंड के साथ ही साथ बहुभाषी समाज द्वारा किया जाता है। हिन्दी को कुछ अन्य राज्य सरकारों ने भी अपने राज्य की भाषा के रूप में मान्यता दिया है। हिन्दी वर्तनी में एकरूपता लाने के लिए भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय ने सन् 1961 में एक विशेषज्ञ समिति नियुक्त की थी। समिति ने अप्रैल 1962 में अपनी सिफारिश प्रस्तुत की राजभाषा के रूप में जब हिन्दी को चुना गया तो यह बहुत जरूरी था कि हिंदी में लिपि, वर्तनी और अंको का स्वरूप एक हो इसके लिए विभिन्न प्रयास किये गये, तब जाकर सन् 1966 में शिक्षा मंत्रालय ने मानक देवनागरी वर्णमाला प्रकाशित की। इसके अनुसार देवनागरी के जो वर्ण एक से अधिक रूपों में प्रयोग में आते थे उनके प्रत्येक वर्ण का एक मानक रूप दिया गया। शिक्षा मंत्रालय ने अनेक भाषाविदों के सहयोग से सन् 1967 में हिन्दी वर्त्तनी का मानकीकरण नामक एक पुस्तक का प्रकाशन किया। जिसमें सभी वर्ण एक मानक बना दिया गया। इसके बाद भी इसमें मतभेद बना रहा, लेकिन टंकण, लेखन और मुद्रण के लिए हिन्दी भाषा का मानकीकरण किया गया ताकि सभी लोग एक तरह से भाषा का प्रयोग करें।

शब्दः दो या दो से अधिक प्रतीकों को मिलाकर शब्द बनाया गया।

भाषाः मनुष्य के उच्चारण अवयव से बाहर निकली ध्वनियों के प्रतीकों के माध्यम से किसी समुदाय के लोग अपने विचारों को आदान–प्रदान करते हैं।

ध्वनिः मनुष्य के उच्चारण अवयव से निःसृत हो वह ध्वनि कहलाती है। ध्वनि बोली जाती है और सुनी जाती है।

वर्णः ध्वनि के लिए जिस प्रतीक का प्रयोग किया जाता है उसे वर्ण कहते हैं। वर्ण अविभाज्य होता है। वर्णो के समूह को वर्णमाला कहते हैं।

अक्षरः एक सांस में उच्चारित वर्णो के समूह को अक्षर कहते है। अक्षर विभाज्य होता है, शब्द अक्षर में टूटता है। वर्ण के समूह को अक्षर कहते है।

लिपिः भाषा के लिखित रूप लिपि कहलाता है।

स्वरः जिनका उच्चारण बिना किसी व्यंजना की सहायता से किया जाय, इस प्रकार के वर्ण को स्वर कहते है। स्वर को चार भागों में बॉट सकते है।

क. ह्रस्व ख. दीध्र ग. प्लुत घ. संयुक्त

ह्रस्वः जिस स्वर के उच्चारण में कम समय लगे उसे ह्रस्व कहते हैं।

दीर्धः जिस स्वर के उच्चारण में अधिक समय लगें उसे दीर्ध कहते है।

प्लुतः जिस स्वर के उच्चारण में तीगुना सांस का समय लगे उसे प्लुत कहते है। वैदिक मंत्र में प्लुत स्वर का प्रयोग करते हैं

संयुक्त स्वरः दो स्वरों के मिले हुए रूप को संयुक्त स्वर कहते है। जैसे– अ़ इ– ए

इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखकर केन्द्रीय हिंदी निदेशालय, शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा सन् 1989 में प्रकाशित पुस्तक से प्रकाशित अनुशंसाओं को आगे प्रस्तुत किया जायेगा।

अक्षरों का मानकीकरण

स्वरः अ आ इ ई उ ऊ ऋ ए ऐ ओ औ

मात्राएँः ा ि ी ु ू ृ े ै ो ौ

अनुस्वरः ं (अं)

विसर्गः ः (अः)

अनुनासिकता चिह्नः ँ

व्यंजनः

क ख ग घ ङ.

च छ ज झ ञ

ट ठ ड ढ ण

त थ द ध न

प फ ब भ म

य र ल व

ष ष स ह

संयुक्त व्यंजनः क्ष त्र ज्ञ श्र

हल् – चिह्नः ्

देवनागरी अंकः

1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 0

भारतीय अंकों का अन्तर्राष्ट्रीय रूप

1 2 3 4 5 6 7 8 9 0

साथ आवश्यकता के अनुसार रोमन i, ii, iii आदि का प्रयोग किया जा सकता है।

क से घ : कंठ से उच्चारित किया गया, इसे क वर्ग की ध्वनि कहते है।

च से झ : तालु से उच्चारित किया गया हैं इसे तालव्य ध्वनि कहते है।

ट से ढ़ : मूर्द्धा (मूर्धा) से उच्चारित किया गया है, इसे मूर्धन्य ध्वनि कहते हैं।

त से ध : दाँत से उच्चारित किया जाता है, इसे दंत्य ध्वनियाँ कहते हैं।

प से भ : ओठ से उच्चारित किया गया

क वर्ग से प वर्ग की अंतिम तीन ध्वनि घोष हैं। जैसे ग, घ, ङ., ज, झ, ञ, ड, ढ, ण, द, ध, न, ब भ और म।

अघोष ध्वनियॉः जिन ध्वनि के उच्चारण में स्वर तंतिया दूर होतु हुए कम्पन्न नहीं उत्पन्न होगें उसे अघोष ध्वनियॉ कहते हैं। जैसेः क, ख, च, छ, ट, ठ, त, थ, प, फ।

य वर्ग की ध्वनियाँः यह ध्वनियाँ कभी स्वर तो कभी व्यंजन की तरह प्रयोग में लायी जाती हैं। इसलिए इन ध्वनियों को अंतःस्थ ध्वनि कहते है। इन्हें अर्धव्यंजन भी कहीं जाती है। जैसे– नयी, में य को इ पढ़ा जाता है।

एक से सौ तक संख्यावाचक शब्दों का मानक रूप

एक	दो	तीन	चार	पाँच	छह	सात	आठ	नौ	दस
ग्यारह	बारह	तेरह	चौदह	पंद्रह	सोलह	सत्रह	अठारह	उन्नीस	बीस
इक्कीस	बाईस	तेईस	चौबीस	पच्चीस	छब्बीस	सत्ताईस	अट्ठाईस	उनतीस	तीस
इकतीस	बतीस	तैंतीस	चौंतीस	पैंतीस	छत्तीस	सैंतीस	अड़तीस	उनतालीस	चालीस
इकतालीस	बयालीस	तैंतालीस	चवालीस	पैंतालीस	छियालीस	सैंतालीस	अड़तालीस	उनचास	पचास
इक्यावन	बावन	तिरपन	चौवन	पचपन	छप्पन	सतावन	अठावन	उनसठ	साठ
इकसठ	बासठ	तिरसठ	चौंसठ	पैंसठ	छियासठ	सड़सठ	अड़सठ	उनहत्तर	सत्तर
इक्हत्तर	बहत्तर	तिहत्तर	चौहत्तर	पचहत्तर	छिहत्तर	सतहत्तर	अठहत्तर	उनासी	अस्सी
इक्यासी	बयासी	तिरासी	चौरासी	पचासी	छियासी	सतासी	अठासी	नवासी	नब्बे
इक्यानवे	बानवे	तिरानवे	चौरानवे	पचानवे	छियानवे	सतानवे	अठानवे	निन्यानवे	सौ

पैराग्राफों आदि के विभाजन में सूचक वर्णो तथा अंको का प्रयोग

केंद्रीय हिंदी निदेशालय ने इसी विषय पर भाषा–विशेषज्ञों की दिनांक 5–6 फरवरी, 1980 की बैठक में विचार–विमर्श के बाद यह निर्णय किया है कि A, B, C अथवा a, b, c के लिए हिंदी में सर्वत्र क, ख, ग का प्रयोग किया जाए। जहाँ रोमन वर्ण कोष्ठक में हो वहाँ देवनागरी वर्णो को भी कोष्ठक में रखा जाए। विषय के विभाजन, उपविभाजन, पैराओं या उपपैराओं के लिए अंतर्राष्ट्रीय अंकों अर्थात् 1,2,3 के प्रयोग के साथ–

है, इसे ओष्ठय ध्वनियाँ कहते हैं।

ड., त्र, ण, न, मः पंचम वर्ण नाक से बोला जाता है, अतः उसे नासिक्य ध्वनि कहते है।

धोषत्व के आधार पर ध्वनियों को दो भाग में बॉट सकते हैं।

1. धोष ध्वनियाँ 2. अधोष ध्वनियाँ

धोष ध्वनियाँः ऐसी ध्वनि जिनके उच्चारण में कम्पन्न हो, उसे धोष ध्वनियाँ कहते हैं। जिन ध्वनियों में स्वर तंतिया पास में आते हुए उसमें कम्पन्न हो उसे धोष ध्वनियाँ कहते है।

य वर्ग की समस्त ध्वनि अधोष है।

श वर्ग की समस्त ध्वनि धोष है।

सभी स्वर धोष है।

अ, आ का उच्चारण कंठ से; इ, ई का उच्चारण तालव्य से; उ, ऊ का उच्चारण ओष्ठ से; ऋ का उच्चारण मूध न्य से; ए, ऐ का उच्चारण कंठ तालव्य से; ओ, औ का कंठ ओष्ठ से होता है

अनुस्वरः ं– अनुस्वर वह ध्वनि है, जो स्वर के बाद आती है। जैसं अंक, कंगन

अनुनाशिकः ँ ध्वनि के उच्चारण में मुँह

और नाशिक का प्रयोग होता है और यह भी स्वर के बाद होता है। जैसे – चाँद

विसर्गः : विसर्ग स्वर के बाद आता है। जैसे– अतः

हल चिन्हः यह व्यंजन के अंत में आता है, इसमें स्वर नहीं होता है।

इसी के साथ–साथ जैसे– जैसे हिन्दी का प्रयोग बढ़ने लगा उसमें उसका आधुनिकीकरण होने लगा और उसका निम्न प्रकार से मानकीकरण किया गया।

- हिंदी का प्रयोग लिखने में हमेशा उपर से नीचे के तरफ करते है।
- जब 'क' और 'फ' को संयुक्त किया जाता है तो उस समय 'क' और 'फ' को छोटा कर देना चहिए। जैसे– पक्का और दफ्तर
- खडी पाई वाले व्यंजन को संयुक्त करते समय खड़ी पाई (।) को हटा देना चहिए। जैसे– छज्जा, ख्वाब, ग्वाला
- जिसमें 'ट' जैसी रचना जैसे ड., छ, ट, ठ, ड, ढ, द और ह उसे संयुक्त करते समय हल चिन्ह का प्रयोग करना चहिए। जैसे– विद्या, पद्म, बुद्धिमान
- जिन व्यंजनों में खड़ी पाई की रचना हो उसमें 'र' बदल कर ⌐" हो जाता है। जैसे क्रम
- संयुक्त 'र' के प्रचलित तीनों रूप यथावत् रहेंगे। जैसे –प्रकार, धर्म, राष्ट्र
- हल् चिह्न युक्त वर्ण से बनने वाले संयुक्ताक्षर के द्वितीय व्यंजन के साथ 'इ' की मात्रा का प्रयोग संबंधित व्यंजन के तत्काल पूर्व ही किया जाएगा। जैसे– बुद्धिमान, चिह्नित आदि।
- 'ट' और 'ड' में 'र' को संयुक्त करते समय ' ् ' हो जाता है। जैसे– ट्राम, ड्रम
- जब 'त्' और 'र' को संयुक्त किया जाता है तो वह 'त्र' बन जाता है। जैसे– त्रिनेत्र
- जब 'श' और 'र' को संयुक्त किया जाता है तो वह 'श्र' बन जाता है। जैसे– श्रीमान
- जब दो व्यंजन संयुक्त हो और पहले व्यंजन में हल् चिन्ह लगा हो और उसमें 'ि' लगाना हो तो वह दूसरे व्यंजन से ठीक पहले लगेगा। जैसे– द्वितीय, पद्मिनि
- संस्कृत में कहा गया है कि यदि पंचम वर्ण का वर्ण हो तो उसके बाद उसी वर्ग का वर्ण रहता है तो पंचम वर्ण को हटाकर अनुस्वर लगा दिया जाता है। जैसे– मण्डल– मंडल, सम्बन्ध– संबंध, मन्दिर– मंदिर
- यदि पंचम वर्ण के बाद उसी वर्ग का वर्ण नही रहता है तो अनुस्वर नहीं लगेगा। जैसे – सन्मार्ग
- संयुक्त व्यंजन के रूप में जहॉ पंचामांक्षर के बाद सवर्गीय शेष चार वर्णो में से कोई वर्ण हो तो एकरूपता के लिए अनुस्वार का प्रयोग किया जाता है।
- यदि संज्ञा में विभक्ति–चिह्न लगाया जायेगा तो वह उससे पृथक् लिखा जायेगा जैसे रमेश ने, रमेश को, रमेश से। उसी प्रकार यदि सर्वनाम में उससे मिलाकर लिखा जायेगा, जैसे– उसने, उसको, उससे आदि।
- सर्वनामों के साथ यदि दो विभक्ति–चिह्न है तो उसमें से पहला को मिलाकर तथा दूसरे को अलग करके लिखा जाए, जैसे– उसके लिए
- सर्वनाम और विभक्ति के बीच यदि 'ही', 'तक' आदि का निपात हो तो उस स्थिति में विभक्ति को अलग लिखा जाए, जैसे– आप ही के लिए।
- द्वंद्व समास में पदो के बीच में हाइफन रखा जाए, जैसे– खेलना–कूदना, खाना–पीना।
- जहाँ पर सा का प्रयोग किया जाएगा वहॉ पर उसके पूर्व हाइफन रखा जाए, जैसे चाकू–से तीखे।
- तत्पुरुष समास में हाइफन का प्रयोग वहाँ पर किया जाता है जहाँ भ्रम होने की स्थिति हो अन्यथा नहीं किया जाए, जैसे– भू–तत्व
- शिरोरेखा का प्रयोग प्रचलित रहेगा तथा पूर्ण विराम के लिए खड़ी पाई (।) का प्रयोग किया जाए।

वनस्पति शास्त्र के विकास में गन्ने के अनुसंधान का योगदान

अशोक कुमार श्रीवास्तव, सोमेन्द्र प्रसाद शुक्ला, अनीता सावनानी एवं सुशील सोलोमन

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

गन्ना हमारे देश की प्रमुख नकदी फसल है। यह एक बीजपत्री पौधों में घास कुल का सदस्य है जिसे "बाइनोमियल नोमेनक्लेचर' के प्रणेता कार्ल लिनियस द्वारा सन् 1743 में *सैकेरम ऑफिसिनेरम* नाम दिया गया। इसका उद्भव पापुआ न्यूगिनी तथा भारत–चीन के क्षेत्रों में हुआ। इसमें किल्ले उत्पादन तथा शर्करा एकत्रित करने की अभूतपूर्व क्षमता है। एक कलिका से 144 मिल–योग्य गन्ने (मिलेबल केन) तक प्राप्त किये गये हैं। बावक था। पेड़ी फसल के काटने के बाद खेत में बचे ठूँठों की भूमिगत कलिकाओं से उत्पन्न फसल को पेड़ी कहते हैं। चीन के फ्यूजीयॉन प्रान्त में एक गन्ने का खेत सन् 1757 में बोया गया था इससे प्रतिवर्ष आज भी अच्छी उपज ली जाती है। यह दर्शाता है कि गन्ने में अभूतपर्व पेड़ी क्षमता होती है। इसमें कुछ अनुवांशिक विशिष्टताएँ भी पायी जाती है जैसे यह एक अत्यधिक हिटिरो जाइगस पॉलीप्लौएड पौधा है, इसमें 2n + n गैमीट एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को जाते है (2n + n ट्रांसमीशन) तथा गुण सूत्रों (क्रोमोसोम) का एक ग्रुप कोशिका विभाजन पर स्पिंडल बनने के दौरान गायब हो जाता है (ऐन–ब्लॉक एलिमिनेशन)। गन्ने की नवविकसित पत्तियों में कैम्बियम जैसी कोशिकाएँ जाइलम व फ्लोएम के बीच पायी जाती है। ये तेजी से विभाजन करती है।

पौधों, जन्तुओं तथा सूक्ष्म जीवाणुओं पर किये गये व्यापक शोध कार्यों से बहुत से प्राकृतिक रहस्यों का उद्घाटन होने के साथ–साथ वनस्पति शास्त्र भी समृद्ध हुआ। गन्ने में किये गये मूलभूत अनुसंधानों से भी वनस्पति शास्त्र समृद्ध हुआ इनमें कुछ निम्नवत् हैं:–

अन्तः प्रजातीय तथा अन्तः वंशीय संकरण

गन्ने में सर्वप्रथम इस विधा का प्रयोग गन्ने (*सैकेरम ऑफिसिनेरम*) का संकरण अन्य सम्बन्धित स्पीशीज जैसे– *सैकरम बारबेराई* तथा *सैकरम स्पॉटेनियम* से तथा अन्य जेनेरा जैसे *नारेंगा पोरफाइरोकामा, सोरघम*(ज्वार) तथा बांस (बैम्बू) से किया गया। इस विधा में गन्ने की किस्मों के विकास की दिशा में क्रान्ति ला दी तथा गन्ने व शर्करा के उत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान किया। भारत में पहली संकर प्रजाति को 205, *सैकेरम ऑफिसिनेरम* व *सैकेरम स्पॉन्टेनियम* के संकरण से सर टी.एस. वेकंटरमन द्वारा विकसित की गयी।

प्रकाश संश्लेषण क्रिया की सी$_4$ प्रक्रम की खोज

सामान्यतया जिन पौधों में प्राथमिक कार्बाक्सीकरण से 3 कार्बन वाले यौगिक बनते हैं इन्हें सी$_3$ पौधे कहते है। परन्तु गन्ने की पत्तियों में प्राथमिक कार्बाक्सीकरण से 4 कार्बन वाले यौगिक मिलने पर सी$_4$ प्रकाश संश्लेषण क्रिया की सी$_4$ प्रक्रम की खोज एम. डी. हैच तथा सी. आर. स्लैक द्वारा 1966–67 में की गयी।

शर्करा का निर्माण तथा पौधों में संचरण

सन् 1930 के आस–पास मैडम कॉन्सटेन्स हार्ट तथा उनके सहयोगियों ने गन्ने में शर्करा के निर्माण तथा संचरण पर हवाई में अनुसंधान किये जो हमारे इस विषय में उपलब्ध ज्ञान के आधार स्तम्भ हैं।

कृषि क्षेत्र में सूत्र कृमि विज्ञान

नाथन ऑगस्टस कॉब ने, जोकि मूलतः रसायनविद् थे, 20वीं सदी के आरम्भ में हवाई में गन्ने पर सूत्रकृमियों पर अध्ययन प्रारम्भ किया। इसके बाद अन्य फसलों में इस विषय पर अनुसंधान किये गये। इनके द्वारा एक प्रयोगशाला मैन्युअल *'एस्टीमेटिंग दी नीमा पॉपुलेशन ऑफ सोइल'* सन् 1918 में लिखी गयी। नाथन ऑगस्टस कॉब को 'फादर ऑफ निमेटोलॉजी' भी कहा जाता है।

क्रॉप लॉगिंग

इस विधा में मृदा से पोषक तत्वों की उपलब्धता, पत्ती में पोषक तत्वों व जल की मात्रा के विश्लेषण तथा फसल की उपज व शर्करा की मात्रा के विस्तश्त आंकड़ों के आधार पर फसल की अधिकतम उपज (व शर्करा) प्राप्त करने के लिए उचित संशोधन किया जाता है। यह विधा सर्वप्रथम गन्ने में हवाई में हैमिल्टन एजी ने प्रारम्भ की तथा हैरी एफ. क्लीमेंटस ने आगे बढ़ाई। आगे चलकर इस विधा से पोषक तत्वों के

निदान संस्तुति तथा एकीकृत प्रणाली (डाइग्नोसिस रिकमेंडेशन एण्ड इन्टीग्रेटेड सिस्टम, ड्रिस) तथा गन्ना पोषक तत्व विश्लेषण कार्यक्रम (सुगरकेन न्यूट्रीशनल एनेलिसिस प्रोग्राम, स्नैप) विकसित हुए है।

पौधों में डाइएजोट्राफिक नाइट्रोजन स्थिरीकरण विधा

सामान्यतया हम दलहनी फसलों में (सहजीवी) सिम्बायोटिक नाइट्रोजन स्थिरीकरण से परिचित हैं। ब्राजील की जोना डोबरनियर ने गन्ने में डाइएजोट्राफिक नाइट्रोजन स्थिरीकरण की खोज की। बाद में इसे अन्य एक बीज पत्री पौधों में भी देखा गया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वनस्पति शास्त्र के विकास तथा संवर्धन में गन्ने में किये गये आधारभूत अनुसंधानों का विशिष्ट महत्व एवं योगदान हैं।

बरषहिं जलद भूमि निअराएँ। जथा नवहिं बुध बिद्या पाएँ।

बूँद अघात सहहिं गिरि कैसें। खल के बचन संत सह जैसें।।

भावार्थः— *बादल पृथ्वी के समीप आकर (नीचे उतरकर) बरस रहे हैं, जैसे विद्या पाकर विद्वान नम्र हो जाते हैं। बूँदों की चोट पर्वत कैसे सहते हैं, जैसे दुष्टों के वचन संत सहते हैं।*

छुद्र नदीं भरि चलीं तोराई। जस थोरेहुँ धन खल इतराई।

भूमि परत भा ढाबर पानी। जनु जीवहि माया लपटानी।।

भावार्थः— *छोटी नदियाँ भरकर (किनारों को) तुड़ाती हुई चलीं, जैसे थोड़े धन से भी दुष्ट इतरा जाते हैं। (मर्यादा का त्याग कर देते हैं)। पृथ्वी पर पड़ते ही पानी गंदला हो गया है, जैसे शुद्ध जीव के माया लिपट गई हो।*

स्रोत : रामायण किषकिन्धा काण्ड

कम पानी से अधिक गन्ना उपज की उन्नत सिंचाई तकनीक

ईश्वर सिंह एवं कामता प्रसाद

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

पानी, पौधों को दिये जाने वाले दूसरे पोषक तत्वों से भिन्न है। यह ऐसा प्राकृतिक संसाधन हैं जिसकी आवश्यकता पौधो को सबसे अधिक होती है। एक किलो ग्राम गन्ना पैदा करने के लिए हमें 200 से 250 लीटर पानी की आवश्यकता होती है। पौधों को दिया गया पानी का 1.0 प्रतिशत से कम भाग ही पौधें मे रहता है तथा ऐसा 99 प्रतिशत से अधिक भाग पौधो के रास्ते वाष्पोत्सर्जन के द्वारा वायुमण्डल मे चला जाता है। इसे हम दूसरे पोषक तत्व जैसे–नत्रजन, फास्फोरस व पोटाश की तरह एक या दो किस्तों में नही दे सकतें इसे एक निश्चित अंतराल पर निरंतर देने की आवश्यकता होती है। किसी भी पौधे को अपना जीवन चक्र पूरा करने के लिए पानी की आवश्यकता होती है। पानी की आवश्यकता वाष्पीकरण के रूप में, पौधों मे जैव–रासायनिक क्रियाओं के लिए, सिंचाई द्वारा न होने वाले पानी की हानि इत्यादि मिलाकर कुल पानी की आवश्यकता मापी जाती है।

गन्ने की फसल को अन्य फसलों की तुलना में अधिक पानी की आवश्यकता है क्योंकि, यह लम्बी अवधि वाली फसल है तथा गर्मी के उन दिनों खेत में रहती है जब वायुमण्डल अधिक गर्म व शुष्कं होता है जिसके कारण वाष्पन व वाष्पोत्सर्जन से भारी मात्रा मे जल ह्रास होता हैं। गन्ने की प्रारम्भिक वृद्धि के समय अधिक गर्मी होने के कारण जल्दी–जल्दी सिंचाई करने की आवश्यकता होती है। इस प्रकार भूमि, जलवायु व फसल की अवस्था के अनुसार गन्ने में लगभग 150–250 हे. से. (150–200 लाख लीटर प्रति हेक्टेयर) सिंचाई जल की आवश्यकता होती है तथा गन्ने की कुल जल आवश्यकता की लगभग आधी मात्रा वर्षा द्वारा पूरी हो जाती है तथा शेष आधी मात्रा 8–10 सिंचाइयों द्वारा पूरी की जाती है। सिंचाई की आवश्यकता क्षेत्र विशेष पर निर्भर करती है। क्योंकि भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में मौसम (वर्षा की मात्रा व वाष्पीकरण की मांग) भिन्न होता है। मिट्टी के प्रकार व पौधों की बढ़वार व अवस्था पर भी सिंचाई की मात्रा निर्भर करती है। यदि सिंचाई के लिए उपयुक्त जल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है तो गर्मी के मौसम में भूमि की दशा को देखते हुए हर 15 से 20 दिन पर पानी देते रहना चाहिए। सिंचाई के बाद एक या दो गुड़ाई करने से खेत में नमी अधिक दिनों तक बनी रहती है और खरपतवार भी नष्ट हो जाते हैं। साधारणतः यह देखा गया है कि उत्तरी भारत में गन्ने की सिंचाई 6–8 बार वर्षा से पहले और 1–2 बार वर्षा के बाद करने की आवश्यकता पड़ती है। सिंचाई 8 से 10 सेमी. गहरी करनी चाहिए। प्रयोगों द्वारा सिद्ध हो चुका है कि अधिक गहरी सिंचाई देने की अपेक्षा जल्दी–जल्दी और कम गहरी सिंचाई देने से पैदावार अधिक होती है। अतः पानी की पर्याप्त उपलब्धता की स्थिति में भी इतनी गहरी सिंचाई नहीं करनी चाहिए जिससे खेत में जल भराव की स्थिति पैदा हो जाए।

गन्ना एक सिंचित फसल है एवं लगभग 95 प्रतिशत गन्ना सिंचित दशाओं में उगाया जाता है। गन्ना बोने वाले क्षेत्रों में 80 प्रतिशत से अधिक सिंचाई क्षेत्र में सिंचाई भूजल से पूरी की जाती है। केन्द्रीय भूजल बोर्ड, भारत सरकार के अनुमानुसार केवल 162 बिलियन क्यूबिक मीटर प्रति वर्ष ही भूजल भविष्य की सिंचाई के लिए उपलब्ध है जिसमें से 40 बिलियन क्यूबिक मीटर भूजल गन्ना लेने वाले क्षेत्रों मे उपलब्ध है। यह भूजल दूसरी फसलों मे सिंचाई हेतु भी प्रयोग किया जाता है। भारतवर्ष में गन्ना लगभग 50 लाख हेक्टेयर भूमि पर लिया जाता है। जिसे सिंचाई देने के लिए प्रतिवर्ष 100 बिलियन क्यूबिक मीटर पानी की आवश्यकता होती है। इस तरह हमारा भूजल स्तर प्रतिवर्ष घटता जा रहा है।

उत्तर व उत्तर–पश्चिम क्षेत्रों मे भूजल स्तर की विकट समस्या है जहां लगभग 18 बिलियन क्यूबिक मीटर शेष रह गया है। गन्ने में जल उपयोग स्तर, 20 हजार किलोलीटर प्रति हेक्टेयर के अनुसार मुख्य गन्ना उत्पादक राज्यों जैसे–उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र व कर्नाटक में हम 2015 तक ही भूजल से गन्ना की जल आपूर्ति कर सकते हैं। कम वर्षा वाले क्षेत्रों मे अधिक पानी की आवश्यकता वाली फसलें जैसे–धान व गन्ना लेने से भूजल स्तर कम हो रहा है। भूजल स्तर की कमी का दूसरा कारण शहरीकरण भी है। गन्ने को लम्बी अवधि तक लेने तथा इसकी उत्पादकता बनाये रखने के लिए हमें ऐसी गन्ना उत्पादन तकनीक का प्रयोग करना होगा जो कि कम पानी का उपयोग करके अधिक उपज दे सके। जो निम्न हैं:–

(क) सिंचाई देने की विधियाँ जिसमें पानी की आवश्यकता कम होती है:

1. एकान्तर नाली सिंचाई विधि
2. बूँद–बूँद सिंचाई विधि।

(ख) कम पानी की आवश्यकता वाली गन्ना बोने की विधियांः–1. गड्ढा बुआई विधि 2. फर्ब विधि द्वारा गेहूँ+गन्ना फसल पद्धति।

(ग) भूमि स्तर से पानी का वाष्पीकरण कम करने वाली विधि–पताई बिछाना।

(घ) गन्ने की क्रान्तिक वृद्धि अवस्थाओं पर सिंचाई।

(ङ) सूखा सहन करने व कम पानी की आवश्यकता वाली गन्ने की किस्मों का चयन।

(च) खेत को समतल रखना जिससे प्रति सिंचाई पानी की मात्रा कम लगती है तथा पानी की हानि भी कम होती है।

(क) सिंचाई देने की विधियाँ जिसमें पानी की आवश्यकता कम होती है

एकान्तर नाली सिंचाई विधि–

साधारणतया किसान प्रवाह विधि से सिंचाई करते हैं जिससे पूरे खेत में पानी भर जाता है। इस प्रकार सिंचाई करने से भूमि स्तर से वाष्पीकरण द्वारा काफी पानी उड़ जाता है तथा पानी की हानि होती है। पानी की कमी की स्थिति में गन्ना समतल बोने की अपेक्षा नालियों में बोना ज्यादा अच्छा रहता है। जिससे नालियों में सिंचाई की जा सके। गन्ने को गहरी नालियों में बोने से गन्ने की जड़े अधिक गहराई तक की मिट्टी से नमी सोख लेती है। जिससे पौधों में सूखा सहन करने की क्षमता बढ़ जाती है।

एकान्तर नाली सिंचाई विधि में पूरी भूमि के स्तर को पानी नहीं दिया जाता है। इस विधि में हर दूसरी व तीसरी पंक्तियों के मध्य नाली बनाई जाती हैं और इन्हीं नालियों द्वारा सिंचाई की जाती है। इस प्रकार जिन गन्ने की दो पंक्तियों के बीच में नाली नही बनती है वह जगह सूखी रहती है जिससे 30–40 प्रतिशत तक सिंचाई जल की बचत हो जाती है। अतः इस बचे हुए पानी को दूसरे खेतों की सिंचाई के लिए उपयोग किया जा सकता है। इस विधि में गन्ने की बुआई समतल विधि से करते है तथा गन्ने के जमाव के बाद प्रत्येक दूसरी व तीसरी पंक्ति के मध्य 45 से0मी0 चौड़ी व 15 से0मी0 गहरी नालियां बना देते हैं और इन्हीं नालियों में सिंचाई करते हैं।

लाभ

- इस विधि से सिंचाई करने से 35–40 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत होती है।
- सिंचाई जल उपयोग क्षमता में 60–65 प्रतिशत तक की बढ़ोत्तरी हो जाती है।
- खरपतवारों का काफी हद तक नियन्त्रण हो जाता है।
- कम पानी से गन्ने की सामान्य उपज प्राप्त हो जाती है तथा गन्ने की गुणवत्ता में भी कमी नहीं होती है।
- खरपतवारों के नियन्त्रण हेतु कम अथवा दवा का प्रयोग न करने से व कम पानी लगने के कारण उत्पादन लागत में कमी आ जाती है।
- किसानों को अधिक लाभ मिलता है।

बूँद–बूँद सिंचाई विधि

सीमित मात्रा में सिंचाई की उपलब्धता, जल्दी–जल्दी सूखा पड़ना तथा दूसरी फसलों, घरेलू व औद्योगिक क्षेत्रों में पानी की माँग के कारण गन्ने में पानी का बुद्धिमतापूर्वक उपयोग करना बहुत आवश्यक है जिससे पानी की उपयोग क्षमता बढ़ाई जा सके तथा गन्ने के उत्पादन में विपरीत प्रभाव न पडे। बूँद–बूँद सिंचाई विधि से पानी की हानि बहुत कम होती है। जिससे 50–60 प्रतिशत पानी की बचत होती है। पानी की बचत के साथ–साथ गन्ने की उपज में भी 15–20 प्रतिशत की बढोत्तरी पाई गई है। इस विधि का एक और लाभ यह है कि हम तरल उवर्रक भी बूँद–बूँद सिंचाई के साथ दे सकते हैं जिससे गन्ने की पैदावार में वृद्धि होती है तथा उर्वरक की मात्रा में बचत होती है।

(ख) कम पानी की आवश्यकता वाली गन्ना बोने की विधियां

गड्ढ़ा बुआई विधि

गन्ना बुआई के बाद प्राप्त फसल में मातृ गन्ने एवं किल्ले दो होते हैं। मातृ गन्ने बुआई के 30–35 दिनों के बाद निकलतें हैं जब कि किल्ले मातृ गन्ने निकलने के 45–60 दिनों के बाद निकलते हैं। इस कारण मातृ गन्नों की तुलना मे किल्ले कमजोर होते हैं तथा इनकी लम्बाई, मोटाई व वजन भी कम होता है। दक्षिण भारत में अधिक उपज के कारणों का विश्लेषण करने पर यह पता चलता है कि वहां गन्ने का जमाव 60–80 प्रतिशत हो जाता है जबकि उत्तर भारत में यह जमाव लगभग 33 प्रतिशत ही होता है। इस प्रकार दक्षिण भारत में प्रति हेक्टेयर प्राप्त एक लाख गन्नों में लगभग 70 हजार मातृ गन्ने होते हैं जबकि उत्तर भारत में मातृ गन्नों की संख्या केवल 33 हजार ही होती है, बाकी गन्ने किल्लों से बनते हैं जो कम वजन के होते हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि प्रति हेक्टेयर अधिक से अधिक मातृ गन्ने प्राप्त किये जाऐं। प्रति इकाई क्षेत्रफल में अधिक से अधिक मातृ गन्ने प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि बुआई के समय अधिक से अधिक गन्ने के टुकड़ों को बोया जाए। इन बातों को ध्यान में रखते

हुए गोल गड्ढ़ों में समान्य से अधिक गहराई पर गन्ने के टुकड़ो को विशेष प्रकार से बोया जाता है जिससे अधिक से अधिक मातृ गन्ने बने व कम से कम या नहीं के बराबर किल्ले निकले। इस विधि को ''किल्ला रहित तकनीक'' भी कहते हैं।

गड़्ढा बुआई विधि के लाभ

- अधिक उपज सामान्य विधि की अपेक्षा इस विधि द्वारा डेढ़ से दो गुना अधिक प्राप्त होती है।
- सिंचाई जल बचतः सिर्फ गड्ढ़ों में ही सिंचाई करने के कारण 30–40 प्रतिशत तक सिंचाई जल की बचत होती है।
- निवेश उपयोग क्षमता में वृद्धिः जल उपयोग क्षमता में 30–40 प्रतिशत तथा पोषक उपयोग क्षमता में 30–35 प्रतिशत तक वृद्धि होती है।
- चीनी परता में वृद्धिः चूंकि मातृ गन्नों में शर्करा मात्रा किल्लों से बने गन्ने की अपेक्षा अधिक होती है, इसलिए इस विधि से प्राप्त गन्नों की पेराई करने पर चीनी परता 0.5 इकाई अधिक प्राप्त होता है।

फर्ब विधि द्वारा गेहूँ + गन्ना फसल पद्धति

भारत में अनुमानतः 3 लाख हैक्टेयर भूमि पर गेहूँ – गन्ना – पेड़ी – गेहूँ का फसल चक्र लिया जाता है। उत्तर – पश्चिम भारत में अधिकतर किसान गन्ने की बुवाई गेहूँ की फसल लेने के बाद करते है। जिससे गन्ने की बुवाई में देरी हो जाती है। जबकि गन्ने की बुवाई का उपयुक्त समय फरवरी का महीना है। गेहूँ के बाद गन्ना लेने से गन्ने की बुवाई अप्रैल के आखिरी सप्ताह या मई के प्रथम पखवाड़े में ही हो पाती है। गेहूँ की फसल के बाद लगाये गये गन्ने की पैदावार में फरवरी में लगाये गये गन्ने की अपेक्षा लगभग 35 से 50 प्रतिशत की कमी हो जाती है। गेहूँ–गन्ना फसल चक्र में गन्ने की उत्पादकता बढ़ाने के लिए भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ द्वारा फर्ब प्रणाली में ओवर लैपिंग फसल पद्धति से गेहूँ व गन्ना लेने की तकनीक विकसित की गई हैं जिसमें गेहूँ की फसल रेज्ड बेड पर ली जाती है तथा गन्ने की बुवाई गेहूँ की खड़ी फसल में नालियों में फरवरी माह में कर देते है।

इस पद्धति में प्रत्येक रेज्ड बेड पर जो कि लगभग 50 से.मी. चौड़ी होती है, गेहूँ की तीन पंक्तियों की बुवाई 17 से. मी. की दूरी पर बुवाई के उपयुक्त समय नवम्बर या दिसम्बर के प्रथम सप्ताह में की जाती है। बीज दर 75 से 80 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर उपयुक्त रहता है। रेज्ड बेड व नालियॉ बनाने के लिए संस्थान द्वारा ट्रैक्टर चालित रेज्ड बेड मेकर कम फर्टी सीड ड्रिल भी विकसित की गई है जो रेज्ड बेड व नालियाँ बनाने के साथ–साथ खाद डालने व गेहूँ बोने का काम भी एक साथ कर देती है। गेहूँ के अच्छे जमाव के लिए नालियों में पहली हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए । पहली सिंचाई में पानी की मात्रा नालियों में तीन चौथाई की ऊँचाई से ज्यादा भरने की आवश्यकता नहीं होती है। बाद की सिंचाईयाँ भी नालियों में ही दी जाती है। शोध कार्यों से निष्कर्ष निकला है कि पहली हल्की सिंचाई के बाद 5.0 से 6.0 सें.मी. की प्रत्येक सिंचाई उपयुक्त रहती है। रेज्ड बेड पर मिट्टी की दशा अच्छी होने के कारण गेहूँ का जमाव, कल्ले व बढ़वार अपेक्षाकृत अच्छी होती है तथा पैदावार भी अच्छी आती है ।

गन्ने की बुआई भी नवम्बर माह में 80 से. मी. की दूरी पर स्थित नालियों में गेहूँ बोने के तुरंत बाद हल्की सिंचाई के साथ कर देते हैं। गन्ने के टुकड़ों को सिंचित नालियों में डालते हुए पैर से दबाते हुए चलते हैं। दिसंबर माह में गेहूं बुवाई की दशा में गन्ने की बुवाई गेहूँ की खड़ी फसल में 80 से.मी. दूरी पर स्थित नालियों में फरवरी माह में की जाती है जो कि उपोष्ण कटिबन्धीय भारत में बसन्त कालीन गन्ना बोने का उपयुक्त समय है। गन्ने की बुवाई गेहूँ में सिंचाई के साथ की जाती है। गेहूँ में सिंचाई सायं काल को की जाती है तथा दूसरे दिन जब मिट्टी फूल जाती है तथा हल्का पानी नालियों में रहता है तब गन्ने के 2 या 3 ऑखों वाले टुकडों को डाल कर पैरों से कीचड़युक्त नालियों में दबाते हुये चलते हैं। भारी मिट्टियों में नालियों में मिट्टी को ढीला करने के लिए सिंचाई से पहले व्हील हो चला देते है जिससे गन्ने के टुकड़े मिट्टी में अच्छी तरह दब जाते हैं। इस विधि से गन्ने की बुवाई गेहूँ – गन्ना फसल चक्र के अपेक्षाकृत 50 से 60 दिन पहले उपयुक्त समय पर कर सकते है। गन्ने की बुवाई के बाद की सिंचाईयाँ गेहूँ की आवश्यकता के अनुसार नालियों में दी जाती है तथा गेहूँ की कटाई के बाद भी इन नालियों को सिंचाई के लिए उपयोग में लाया जाता है।

फर्ब तकनीक के लाभ

- सबसे पहला लाभ यह है कि इस पद्धति में गन्ने की बुवाई उपयुक्त समय (फरवरी) में की जाती है जबकि गेहूँ – गन्ना फसल चक्र में गन्ने की बुवाई अप्रैल के आखिरी सप्ताह या मई के प्रथम पखवाड़े तक हो पाती है। इस प्रकार इस पद्धति में गेहूँ की अच्छी पैदावार लेने के साथ–साथ गन्ने की पैदावार में देर से बोये गये गन्ने की अपेक्षा 35 से 40 प्रतिशत की बढ़ोतरी

होती है।

- इस पद्धति में गन्ने की बुवाई के लिए अलग से पलेवा व खेत तैयार करने की आवश्यकता नही होती है। गेहूँ की कटाई के समय तक गेहूँ में दिया गया पानी ही दोनों फसलों के लिए पानी की आवश्यकता पूरा कर देता है।
- इस पद्धति में सिंचाई केवल नालियों में दी जाती हैं जिससे प्रत्येक सिंचाई में क्यारियों में सिंचाई की अपेक्षा पानी की मात्रा लगभग 20 प्रतिशत कम लगती है और जल उपयोग क्षमता 16.5 प्रतिशत बढ़ जाती है।
- इस पद्धति में खरपतवार रेज्ड बेड के बजाय नालियों में आते हैं जिससे फसल को अधिक नुकसान नहीं पहुँचा पाते। खरपतवार अधिकतर नालियों में ही आते हैं जिसको निराई करके या खरपतवार नाशी दवाइयों का छिड़काव करके नियन्त्रित किया जा सकता है।
- इस प्रकार फर्ब प्रणाली में ओवरलैपिंग पद्धति से गेहूँ व गन्ना लेने से उत्पादन खर्च कम होने के साथ–साथ गन्ने का उत्पादन 35 से 40 प्रतिशत बढ़ जाता है।

(ग) भूमि स्तर से पानी का वाष्पीकरण कम करने वाली विधि

पतार्इ बिछाना

गर्मी के मौसम में गन्ने की फसल में सिंचाई द्वारा दिये गये पानी का बहुत थोड़ा भाग फसल के उपयोग में आता है। बाकी बहुत बड़ा भाग तो गर्म एवं शुष्क मौसम के कारण वाष्पन व वाष्पोत्सर्जन से भारी मात्रा में ह्रास होता हैं। गन्ने की पंक्तियों के बीच की खुली भूमि पर गन्ने की पत्तियों की पतवार (8 से0 मी0 मोटी) बिछा दी जाए तो काफी हद तक पानी के नुकसान को रोका जा सकता है और सिंचाई की मात्रा में कटौती की जा सकती है। पानी की बचत के साथ–साथ इस पतवार से 25 से 30 प्रतिशत उपज में भी वृद्धि होती है।

अधिकतर किसान गन्ने की सूखी पत्तियों को या तो खेतों में जला देते हैं अथवा दूसरे उपयोग जैसे छप्पर बनाने व ईंधन के रूप में प्रयोग करते हैं। जलाने से जो गर्मी निकलती है उससे मिट्टी में रहने वाले लाभदायक सूक्ष्म जीव मर जाते हैं साथ ही पत्तियों में पाये जाने वाले पोषक तत्व भी नष्ट हो जाते हैं। यदि इन सूखी पत्तियों की एक पतली परत (8 से 10 सेमी0) खेतों में बिछा दी जाए तो मिट्टी की सतह से पानी का वाष्पीकरण कम होता है जिससे सिंचाई जल में बचत होती है। जब यह पत्तियां खेतों में सड़ती है तो मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ और पोषक तत्वों में बढ़ोत्तरी होती है। इस प्रकार गन्ने की पैदावार बढ़ती है और मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार होता है। सामान्यता सूखी पत्तियां गन्ने की उपज का 10–12 प्रतिशत होती हैं। इनमे 0.42 प्रतिशत नत्रजन, 0.15 प्रतिशत फास्फोरस, 0.5 प्रतिशत पोटाश होते हैं।

सूखी पत्ती बिछाने के लाभ

- गन्ने की सूखी पत्तियां बिछाने की जगह पर पानी का वाष्पीकरण कम होता है जिससे 35 से 45 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत होती है।
- गर्मी में मृदा का तापमान कम हो जाता है और सर्दी में मृदा का तापमान बढ़ जाता है। साथ ही मृदा में पर्याप्त मात्रा में नमी अधिक समय तक बनी रहती है जिससे मृदा में पाये जाने वाले लाभदायक सूक्ष्म जीवों की क्रियाशीलता से पौधों के लिए नत्रजन व फास्फोरस की उपलब्धता बढ़ जाती है।
- गन्ने की आँख की फुटाव में तेजी आ जाती है और किल्लों का मरना कम हो जाता है।
- खरपतवारों का प्रकोप कम हो जाता है।
- मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा और मिट्टी की उर्वराशक्ति बढ़ जाती है।

(घ) गन्ने की क्रान्तिक वृद्धि अवस्थाओं पर सिंचाई

गन्ने की अच्छी उपज लेने के लिए प्रारम्भिक वृद्धि अवस्था के समय भूमि में उचित नमी बनाये रखना अति अवश्यक है। परीक्षणों के परिणामों से यह स्पष्ट हो गया है कि गन्ने के पूरे जीवनकाल में कुछ निश्चित वृद्धि अवस्थायें होती हैं जिन पर सिंचाई न करने से उपज पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इन अवस्थाओं को क्रान्तिक वृद्धि अवस्थायें कहते हैं। यह अवस्थायें अंकुरण या प्रस्फुरण और किल्ले बनने की प्रथम, द्वितीय व तृतीय अवस्थायें हैं। यदि सिंचाई के लिए उपलब्ध जल की मात्रा सीमित हो तो सिंचाई की मात्रा का वितरण इस प्रकार करना चाहिए कि पौधे की सबसे अधिक आवश्यकता वाली अवस्थाओं में सिंचाई अवश्य हो जाए। यदि इन क्रान्तिक अवस्थाओं पर सिंचाई नहीं की जाती है तो गन्ने की पैदावार और गुणवत्ता पर बहुत बुरा असर पड़ता है यदि उपलब्ध पानी की मात्रा केवल एक सिंचाई के लिए ही पर्याप्त है तो इसे किल्ले फूटने की तीसरी अवस्था पर देना चाहिए। यह स्थिति मई माह के अन्तिम सप्ताह पर आती है। यदि दो सिंचाई के लिए पानी उपलब्ध है तो गन्ने में किल्ले फुटने की दूसरी और तीसरी अवस्थाओं पर सिंचाई

देना चाहिए जो कि अप्रैल और मई माह के अन्तिम सप्ताह पर आती है। यदि तीन सिंचाई के लिए पानी उपलब्ध है तो उपरोक्त समय के अलावा किल्ला फूटने की प्रथम अवस्था पर भी गन्ने में सिंचाई देनी चाहिए। चार सिंचाइयों के लिए पानी उपलब्ध होने की परिस्थिति में चार सिंचाइयां क्रमशः गन्ना जमने के बाद, किल्ला फूटने की प्रत्येक (पहली, दूसरी और तीसरी) अवस्था पर करनी चाहिए।

(ङ) सूखा सहन करने व कम पानी की आवश्यकता वाली गन्ने की किस्मों का चयन

पानी की सीमित उपलब्धता कभी–कभी सूखा जैसी अवस्था बना देता है, इसलिए अपेक्षाकृत कम पानी मॉगने तथा सूखा सहन करने वाली गन्ने की किस्मों का चयन करना ही इसका इलाज है। इन किस्मों में पानी की कमी होने के कारण उपज में कमी अपेक्षाकृत कम होती है तथा पैदावार अच्छी बनी रहती है।

(च) खेत को समतल रखना

खेत को समतल करके सिंचाई देने से पानी की बचत के साथ–साथ सिंचाई देने के समय में भी बचत होती है। समतल खेत में पानी सभी स्थानों में समान मात्रा में फैल जाता है तथा मिट्टी में नमी भी समान मात्रा में बनी रहती है जिससे गन्ने की बढ़वार व पैदावार अच्छी होती है। लेजर विधि द्वारा खेत को समतल करके सिंचाई करने से हमे लगभग 33 प्रतिशत पानी की बचत होती है तथा सिंचाई देने की क्षमता भी 60–80 प्रतिशत बढ़ जाती है तथा पानी का मिट्टी में फैलाव भी 80–92 प्रतिशत तक समान होता है। इसके साथ–साथ पानी की उत्पादक क्षमता (किग्रा0 उपज प्रति घन ली0 पानी) 0.49 से बढ़कर 0.61 तक पहुॅच गई। लेजर विधि द्वारा खेत समतल करके पानी देने से उर्वरक उपयोग क्षमता में भी बढ़ोत्तरी पायी गई जिससे फसल का उत्पादन बढ़ गया।

उपरोक्त तथ्यों से यह निष्कर्ष निकलता है कि परिस्थितियों को देखते हुए ऐसी सिंचाई विधि व गन्ना बोने की विधि का चुनाव करना चाहिए जिससे पानी कम से कम मात्रा में लगे साथ ही यह भी ध्यान रखे कि पौधे की क्रान्तिक अवस्थाओं पर सिंचाई अवश्य हो। यदि इन बातों का ध्यान रखेंगे तो कम से कम मात्रा में पानी का उपयोग करते हुए अधिक उपज प्राप्त कर सकते हैं।

यह सच है कि कोई भी देश अपनी मातृभाषा के द्वारा ही आगे बढ़ सकता है। हम दूसरी भाषा सीख सकते हैं लेकिन विचार इसमें पैदा नहीं होते। नये विचार केवल अपनी मातृभाषा के द्वारा ही निकल सकते है। हम चाहते है कि जल्दी से जल्दी भारत के सभी लोग अगर हिन्दी न बोल सकें तो कम से कम समझ सकें।

इन्दिरा गांधी

राष्ट्र के एकीकरण के लिए सर्वमान्य भाषा से अधिक बलशाली कोई तत्व नहीं है। मेरे विचार में हिन्दी ही ऐसी भाषा है।

लोकमान्य तिलक

गन्ने में पोषक तत्वों का प्रबंधन

राम रतन वर्मा एवं ईश्वर सिंह

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

गन्ना एक कृषि उद्योग आधारित नगदी फसल हैं जो चीनी का प्रमुख स्रोत है। गन्ने की खेती विषुवत रेखा के 36.7^0 उत्तरी अक्षांश तथा 31^0 दक्षिणी अक्षांश के बीच स्थित लगभग 110 देशों में होती है। भारत का गन्ना उत्पादन की दृष्टि से विश्व में ब्राजील के बाद दूसरा स्थान है। अपने देश में वर्ष 2011–12 में गन्ना उत्पादन (3576 लाख टन) व उत्पादकता (70.3 टन प्रति हेक्टेयर) वर्ष 1950–51 (क्रमशः 548.20 लाख टन व 32.1 प्रति हेक्टेयर) की तुलना में क्रमशः छः गुने एवं दो गुने से अधिक स्तर पर पहुँच गयी। परन्तु देश की निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या को ध्यान में रखते हुए वर्ष 2020 में 41.50 लाख हेक्टेयर भूमि से 4150 लाख टन गन्ना उत्पादन करने की आवश्यकता पड़ेगी जो वर्तमान उत्पादकता को 100 टन प्रति हेक्टेयर तक बढ़ाकर पूरा किया जा सकता है। देश में गन्ना प्रमुख रूप से उष्ण एवं उपोष्ण जलवायु में उगाया जाता है। उत्तर भारत में गन्ना उपोष्ण जलवायु के अन्तर्गत विभिन्न फसल प्रणालियों के अन्तर्गत उगाया जाता है, जिनमें धान और गेहूँ की फसलें प्रमुख है। धान्य फसलों पर आधारित फसल प्रणालियों, दलहनों का फसल चक्र में अभाव तथा कार्बनिक खादों के मृदा में प्रयोग की कमी के कारण मृदा में प्रमुख एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों तथा कार्बनिक कार्बन में कमी हुई है। जबकि गन्ना एक अधिक पोषक तत्वों की आवश्यकता वाली फसल है। एक हेक्टेयर खेत से 100 टन गन्ना उत्पादन के लिए लगभग 208, 53, 280, 3.4, 1.2, 0.6 और 0.2 किग्रा. प्रति हेक्टेयर नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश, आयरन, मैग्नीज, जिंक और कापर (जस्ता) की आवश्यकता पड़ती है। यदि उपरोक्त प्रमुख एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों को सही मात्रा में फसल को न दिया जाए तो फसल की पैदावार पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

गन्ने में लगभग 60 तत्व होते हैं इनमें से गन्ना फसल की उचित वृद्धि एवं विकास के लिए 17 तत्व आवश्यक हैं इन तत्वों में क्रमशः कार्बन, हाइड्रोजन, आक्सीजन, नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश, कैल्शियम, मैग्नीशियम, सल्फर, जस्ता, लौह, मैग्नीज, कॉपर, मेलिब्डिनम और बोरान है इसके अतिरिक्त क्लोरीन भी पौधों के लिए सूक्ष्म पोषक तत्व है सोडियम केवल उन पौधों के लिए आवश्यक हैं, जिनमें प्रकाश संश्लेषण सी फोर की विधा होती है। कार्बन, हाइड्रोजन, आक्सीजन, नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश, कैल्शियम, मैग्नीशियम, सल्फर, प्रमुख पोषक तत्व है। कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन को पौधे जल तथा वायु से ग्रहण करते है। नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश पौधों द्वारा अधिक मात्रा में लिए जाते हैं। कैल्शियम, मैग्नीशियम और गंधक अपेक्षाकृत कम मात्रा में लिए जाते है। जस्ता, लौह, मैग्नीज, कॉपर (ताम्र), मोलिब्डिनम और बोरान सूक्ष्म पोषक तत्व जो कि बहुत ही कम मात्रा में लिए जाते है पर पौधों में आवश्यक कार्य सम्पादित करते है। उपरोक्त पोषक तत्वों में से नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश (प्रमुख पोषक तत्व) व जस्ता, लौह, मैग्नीज व कॉपर (सूक्ष्म पोषक तत्व) गन्ने की बढ़वार व विकास में बहुत ही अहम् भूमिका अदा करते है तथा मृदा में इनकी कमी को पूरा करने के लिए इन्हें उर्वरक के माध्यम से दिया जाता है।

गन्ने में पोषक तत्वों का महत्व, कमी के लक्षण एवं संस्तुति

नाइट्रोजन

नाइट्रोजन के कारण गन्ने में वानस्पतिक वृद्धि के साथ–साथ किल्लों की संख्या में वृद्धि होती है। पौधों में पानी की अधिकता रहती है तथा नाइट्रोजन से पौधों की जड़ों का विकास होता है जिससे मृदा से पोषक तत्वों का अवशोषण करने की क्षमता में वृद्धि होती है।

इसकी कमी से पौधे पीले पड़ जाते है, पौधों की लम्बाई कम रह जाती है, गन्ने के तनें की मोटाई कम रह जाती है व पुरानी पत्तियाँ समय से पूर्व ही सूख कर गिर जाती है। जड़ें ज्यादा गहराई तक चली जाती हैं तथा उनकी मोटाई कम रह जाती है। जिससे मृदा में उचित नमी के बाद भी फसल मुरझाई हुई दिखाई देती है।

उत्तर एवं दक्षिण भारत में गन्ना फसल की समयावधि (12–18 महीने) के आधार पर नाइट्रोजन के उपयोग (112–504 किग्रा./हे.) में बहुत अधिक अंतर है। शोध के आधार पर यह पाया गया है कि उत्तर भारत में गन्ने की उचित पैदावार लेने के लिए 150 किग्रा. नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है। नाइट्रोजन की इस आवश्यकता को जैविक, कार्बनिक उर्वरकों एवं रसायनिक उर्वरकों के माध्यम से पूर्ति की जा सकती है। बाजार में रसायनिक उर्वरकों में यूरिया (46% नाइट्रोजन) एवं डी.ए.पी. (18% नाइट्रोजन) आसानी से मिल जातें है। नाइट्रोजन की 1/3 मात्रा गन्ने की बुवाई

के समय तथा बची हुई मात्रा को दो बराबर मात्रा में, पहली किल्ले निकलने के समय (पहली सिंचाई के बाद) लगभग बुवाई के 60–65 दिन पर तथा बची हुई मात्रा को लगभग 90–95 दिन पर मानसून से पूर्व दे देनी चाहिए। गन्ने की पेड़ी से भरपूर पैदावार लेने के लिए बावक फसल की अपेक्षा 25 प्रतिशत अधिक नाइट्रोजन दी जानी चाहिए।

फास्फोरस

इसके प्रभाव से गन्ने में जड़ों की संख्या में वृद्धि हो जाती है जिससे जड़ों का बाह्य क्षेत्रफल अधिक हो जाता है एवं जड़ों द्वारा मृदा से पोषक तत्वों को ग्रहण करने की क्षमता में बढ़ोत्तरी हो जाती है। फास्फोरस से किल्लों की संख्या में बढ़ोत्तरी होती है, तने को मजबूती प्रदान करता है और उसे गिरने से रोकता है। पौधो को बिमारियों से बचने के लिए प्रतिरोधक क्षमता विकसित करता है। यह कोशिका विभाजन के लिए आवश्यक होता है, जिससे कि पौधे का विकास होता है। यह प्रकाश संशलेषण की क्रियाओं को बढ़ाने के साथ–साथ गन्ने के तनों में चीनी बनाने व उसके भण्डारण को भी नियमित करता है। यह नाइट्रोजन के अधिक उपयोग से रस की गुणवत्ता पर पड़ने वाले विपरीत प्रभाव को भी नियंत्रित करता है।

इसकी कमी से पत्तियां हरे रंग के साथ नीला रंग लिए हुए कम चौड़ी व छोटी रह जाती है। पुरानी पत्तियां चोटी व किनारों से सूखना शुरू कर देती है। तना छोटा, पतला और ऊपर वाले हिस्से से बहुत पतला होने लगता है। किल्लों की संख्या एवं पोरियों की लम्बाई कम हो जाती है। जड़ का विकास ठीक से नहीं होता है और तना एवं जड़ का अनुपात भी कम हो जाता है।

उत्तर भारत में सफल गन्ना उत्पादन के लिए फास्फोरस की 60 किग्रा./हे. मात्रा की आवश्यकता होती है जिसकी पूर्ति कार्बनिक एवं रसायनिक खादों के माध्यम से की जा सकती है। बाजार में रसायनिक उर्वरकों में डी.ए.पी. (46% फास्फोरस) एवं सिंगल सूपर फास्फेट (16% फास्फोरस) आसानी से मिल जातें हैं यद्यपि यह सलाह दी जाती है कि फास्फोरस की ज्यादा से ज्यादा मात्रा कार्बनिक खादों के माध्यम से दी जाय। फास्फोरस की पूरी मात्रा गन्ने की बुवाई के समय देनी चाहिए।

पोटाश

पोटाश गन्ना उत्पादन हेतु बहुत ही महत्वपूर्ण पोषक तत्व है यह पौधों में रोग प्रतिरोधक क्षमता विकसित करता है। नियमित कोशिका विभाजन एवं आकार को सुनिश्चित करता है और टरगर दबाव को बनाये रखता है। यह स्टोमेटा के अन्दर ऑशमेटिक प्रेशर को नियमित रखता है जिससे कम पानी की अवस्था में भी स्टोमेटा खुला रहते है तथा प्रकाश संशलेषण की प्रक्रिया नियमित रहती है तथा पौधों को सूखे से बचाता है। पोटाश पौधों को पाले के कुप्रभाव से भी बचाता है। पौधों के तनों को मजबूती प्रदान करता है जिससे पौधे गिरते नहीं है। यह कई अमीनों अम्ल जैसे पायरूविक काइनेज, फ्रक्टोकाइनेज आदि के लिए उत्प्रेरक का काम करता है जो कि कार्बोहाइड्रेड मेटाबोलिज्म, पाली न्यूक्लियोंटाइड, फास्फोरिलेज आदि न्यूक्लिक अम्ल के मेटोबोलिज्म और अम्ल प्रोटीन के बनने में भाग लेते है। यह पोषक तत्व कार्बन के एसाइमिलेशन, फोटोशिंथेशिस, प्रोटीन के बनने, पानी के अवशोषण और जड़ों के सामान्य विकास में आवश्यक होता है। यह गन्ने के तने में रस की मात्रा को बढ़ाता है, जिससे चीनी की परता बढ़ जाती है।

पोटाश की कमी से पौधों का विकास कम हो जाता हैं, पत्तियां किनारों और चोटी से सूखना शुरू कर देती हैं। पुरानी पत्तियां पीला रंग दर्शाने के साथ दाग धब्बे दर्शाने लगती हैं तथा लाल रंग में परिवर्तित होने लगती हैं, तना पतला रह जाता है और शर्करा की मात्रा कम रह जाती है। पत्तियों से श्वसन और फोटोसिंथेटेस का जड़ों की तरफ स्थानान्तरण प्रभावित हो जाता है। कभी–कभी पोटाश की कमी से पौधों में लोहे की मात्रा नुकसान देय स्तर तक हो जाती है।

सामान्यतः किसानों द्वारा इस पोषक तत्व का प्रयोग गन्ना फसल उत्पादन में बहुत कम मात्रा में या कभी–कभी नहीं भी किया जाता है जबकि यह पोषक तत्व गन्ना उत्पादन हेतु बहुत ही महत्वपूर्ण है। देश के अलग–अलग भागों में इसकी अलग–अलग मात्राएं संस्तुत की गयी है लेकिन उत्तर भारत में पोटाश की 60 किग्रा./हे. मात्रा सफल गन्ना उत्पादन के लिए आवश्यक पायी गयी है, जिसकी पूर्ति कार्बनिक खादों एवं रसायनिक उर्वरकों के माध्यम से की जा सकती है। बाजार में रसायनिक उर्वरकों में एम.ओ. पी. (60% पोटाश) उर्वरक आसानी से मिल जाता है। इसकी पूरी मात्रा गन्ने की बुवाई के समय ही दे देनी चाहिए।

सल्फर

यह जड़ों के विकास एवं क्लोरोफिल के बनने में मदद करता है। यह मेटाबोलिक क्रियाओं में महत्वपूर्ण कार्य करता है।

सल्फर की कमी के लक्षण बिल्कुल नाइट्रोजन की कमी की तरह ही होते है जबकि पत्तियां कम चौड़ी और छोटी रह जाती हैं।

वर्तमान समय में सल्फर की कमी

भारतीय मृदाओं में अधिक पायी जा रही है। कुछ अनुसंधान प्रयोगों में यह पाया है कि इस पोषक तत्व की 40 किग्रा./हे. मात्रा गन्ना उत्पादन हेतु लाभदायक सिद्ध हुई है। सल्फर (गंधक) की पूर्ति रसायनिक उर्वरक जिंक सल्फेट के माध्यम से की जा सकती है।

लोहा

यह क्लोरोफिल बनाने, आक्सीडेशन रिडक्शन क्रिया और प्रोटीन के बनने में आवश्यक होता हैं।

आयरन की कमी से नयी पत्तियों में अन्तःनसों के बीच पीलापन हो जाता है। अधिक कमी होने की दशा में पत्तियां सफेद हो जाती है और जड़ें उथली रह जाती हैं।

सामान्यतः इस पोषक तत्व की कमी मृदाओं में नहीं पायी जाती है लेकिन यदि किसी विशेष प्रकार की मृदा में इस पोषक तत्व की कमी के लक्षण दिखायी दें तो इस पोषक तत्व का प्रयोग इसकी कमी दूर करने के लिए किया जाए।

मैग्नीज

यह आक्सीडेशन रिडक्शन क्रियाओं में उत्प्रेरक की तरह और बहुत से एन्जाइम्स को सक्रिय करने के लिए आवश्यक होता है। यह आयरन और नाइट्रोजन के मेटाबोलिज्म, क्लेरोफिल बनाने और प्रोटीन के सिंथेशिश और प्रोटीन केटूटने में मदद करता है।

मैग्नीज की कमी से अन्तः नसों में क्लोरोटिक पट्टी विकसित होती है, जो कि मध्य किनारे तक ही सीमित होती है।

सामान्यतः इस पोषक तत्व की कमी मृदाओं में नहीं पायी जाती है लेकिन यदि किसी विशेष परिस्थितियों में इस पोषक तत्व की कमी के लक्षण पौधों पर दिखायी दें तो इस पोषक तत्व का प्रयोग किया जाना आवश्यक है।

जस्ता

यह पौधों के विकास के लिए हार्मोन्स विकसित करने और एन्जाइम की रासायनिक क्रियाओं में आवश्यक होता है।

जस्ता की कमी के कारण पत्तियों की शिराओं के साथ–साथ किनारे पर हल्का हरा रंग दिखायी देता है।

वर्तमान समय में ज्यादातर भारतीय मृदाओं में इस पोषक तत्व की कमी देखी जा रही है और कुछ अनुसंधान परीक्षणों में यह पाया गया है कि यदि जिंक को 30–40 किग्रा./हे. गन्ना बुवाई के समय मिट्टी में डाला जाए तो यह फसल उत्पादन हेतु लाभदायक पाया गया है। सल्फर (गंधक) की पूर्ति रसायनिक उर्वरक जिंक सल्फेट के माध्यम से की जा सकती है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त पोषक तत्वों की संस्तुत मात्राएं उत्तर भारत (उपोष्ण क्षेत्र) के लिए की गयी है। जबकि देश के अलग–अलग भागों के लिए पोषक तत्वों की अलग–अलग मात्राएं संस्तुत की गयी है यद्यपि ये मात्राएं अनुसंधान परिणामों के आधार पर है फिर भी यह सलाह दी जाती है कि किसान भाई अपने खेत से मिट्टी का नमूना लेकर उसकी जांच मृदा परीक्षण प्रयोगशाला से कराएं और परीक्षण के परिणाम के आधार पर संस्तुत की गयी पोषक तत्वों की मात्रा खेत में डालें। जिससे की सभी पोषक तत्वों की उचित मात्रा को गन्ने की फसल को उपलब्ध कराया जा सके। इसके अतिरिक्त यह भी सुझाव दिया जाता है कि पोषक तत्वों की कुल आवश्यकता का लगभग 25–30% भाग की पूर्ति कार्बनिक/जैविक खादों के माध्यम से की जाए। कार्बनिक खादों के प्रयोग से फसलों के जरूरत के पोषक तत्व मिलने के साथ ही साथ मृदा की भौतिक गुणवत्ता में भी सुधार होता है और मृदा की जल धारण क्षमता में वृद्धि होती है।

उपरोक्त बातों को ध्यान में रखकर गन्ने की फसल में पोषक तत्वों का प्रबंधन फसल की गुणवत्ता में वृद्धि के साथ ही साथ मृदा के माध्यम से फसल को सही मात्रा में पोषक तत्वों के उपलब्ध होने से मिलेबल केन (मिल योग्य गन्ने) की संख्या में बढ़ोत्तरी होगी और प्रति यूनिट क्षेत्रफल से अधिक उपज मिलेगी जिससे गन्ना फसल की उत्पादकता में बढ़ोत्तरी होगी और अन्ततः गन्ना उत्पादकों को गन्ने की खेती से अधिक लाभ प्राप्त होगा तथा बढ़ती हुई जनसंख्या की चीनी की आवश्यकता को भी पूरा किया जा सकता है।

ट्राइकोडर्मा एवं *ग्लूकोन एसीटोबैक्टर* का गन्ने की वृद्धि तथा मृदा स्वास्थ्य पर प्रभाव

एस.के. अवस्थी एवं सुधीर कुमार शुक्ल

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारत में गन्ने का उत्पादन लगभग 50 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में किया जाता है। लेकिन प्रयुक्त क्षेत्रफल के अनुपात में गन्ने का उत्पादन नहीं हो पा रहा है। गन्ने की कम उत्पादकता के लिए कई कारक उत्तरदायी हैं, जैसे कि उच्च उत्पादन मूल्य, अपर्याप्त सिंचाई सुविधायें, प्रजातियों की व्याधियों के लिए प्रतिरोधकता में कमी व अन्य प्राकृतिक आपदायें इत्यादि। हाल के वर्षों में, जैव कीटनाशकों तथा वनस्पतियों के व्युत्पन्नों के उपयोग ने बीमारियों के प्रबंधन व उत्पादकता बढ़ाने हेतु ध्यानाकर्षित किया है। क्योंकि इनका उपयोग संकटरहित व शीघ्र विघटनकारी होता है तथा इनका जैव संचयन नहीं होता है। चीनी उत्पादन बढ़ाने में अधिक चीनी तथा बीमारियों के लिये प्रतिरोधी प्रजातियों की कमी एक प्रमुख व्यवधान है। गन्ने में लगने वाले कीट व व्याधियों से लगभग 15–20 प्रतिशत उत्पादन में प्रतिवर्ष कमी हो जाती है तथा व्याधियों के कारण रोगग्रसित गन्ने के रस के गुणों में ह्रास होता है, इस कारण चीनी की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इन समस्याओं से निपटने के लिए अभी तक आमतौर पर किसानों द्वारा केवल रसायनों का ही प्रयोग किया जा रहा है। जो खर्चीले होने के साथ–साथ वातावरण, मृदा तथा जल को भी प्रदूषित करते हैं। इतना ही नहीं इनके निरंतर प्रयोग से खरपतवार, कीट व रोगों में सहनशक्ति पैदा हो रही है। इससे किसानों द्वारा और अधिक रसायनों का प्रयोग किया जा रहा है। इसके अलावा रसायनों के प्रयोग से कीटों के प्राकृतिक शत्रु कहे जाने वाले मित्र कीट भी प्रभावित हो रहे हैं। कीटनाशक रसायनों के कुप्रभावों से बचने के लिए बायो एजेंट (जैवकारकों) व बायो पेस्टीसाइड (जैव कीटनाशी) का प्रयोग अत्यंत आवश्यक हो गया है। जीवों एवं वनस्पतियों पर आधारित होने के कारण जैवकारक लगभग एक माह में भूमि में मिलकर अपघटित हो जाते हैं और इनका कोई अंश अवशेष नहीं रहता है। जैविक कीट नाशकों के उपयोग से कीट व रोगों में सहनशीलता एवं प्रतिरोध उत्पन्न नहीं होता है तथा फसल को भूमि से होने वाले फफूंदी जनित रोगों में भी कमी आती है।

उपरोक्त के क्रम में गन्ने के उत्पादन में *ट्राईकोडर्मा* व *ग्लूकोन एमीटोबैक्टर* की उपयोगिता परखने हेतु भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान में विभिन्न सफल प्रयोग किए गए हैं।

ट्राईकोडर्मा प्रभेद अवसरवादी, अनुग्र व सहजीवी की तरह कार्य करते हैं तथा जड़ों, मृदा व पर्णीय वातावरण में पाये जाते है। यह रोग जनको के लिये पोषण व निवास हेतु अत्याधिक प्रतिस्पर्धी होते है। यह काइटिन व सेल्यूकोज विधटित करने वाले इंजाइमों तथा बहुत से जीवाणु नाशक रसायनों को उत्पान्न करते है। जिससे अन्य हानिकारक कवक तन्तु नष्ट हो जाते है। *ट्राईकोडर्मा* पौधों की जड़ों, तनों और उपज में वृद्धि करते है। इनमें पर्ण जनित व मृदाजनित रोगों के लिए प्रतिरोधी जीन पाये जाते हैं। *ट्राइकोडर्मा हारजियानम* पत्तियों के रोग कारकों तथा मृदाजनित रोग कारकों के विरूद्ध गन्ने की फसलों में प्रतिरोधी क्षमता बढ़ाता हैं। *ट्राईकोडर्मा* में उपरोक्त फंफूदी विरोधी क्षमता एंडोकाइटिनेज उत्पन्न करके प्राप्त होती है। जड़ों के पास होने से अवकर्षण क्षमता अधिक पायी जाती है। ये कवक जाल फैलाकर एंटीबायोसिस द्वारा कवकीय पराजीविता (माइको पैरासिटिजम) का उपयोग करके रोगजनकों को नष्ट करते है। *ट्राइकोडर्मा* की कवक विरोधी क्षमता को रसायनिक नियंत्रण के विकल्प के रूप मे प्रयोग किया जा सकता है। *ट्राईकोड्रर्मा* में सूत्र कृमिजनित पौध–रोगों को भी नियंत्रित करने की क्षमता पायी गयी है।

ट्राईकोडर्मा के उपयोग द्वारा उत्पादन व उत्पादकता बढ़ाने हेतु गन्ना एक आदर्श फसल है क्योंकि गन्ने की बावक व पेड़ी फसल एक ही खेत में कई वर्षों तक उत्पादित की जाती है। गन्ने की एकल खेती में *ट्राईकोडर्मा* लगातार बढ़ता रहता है। गन्ने के व्यावसायिक उत्पादन में *ट्राईकोडर्मा* का उपयोग बड़ी सफलता पूर्वक किया जा सकता है। *टी. हाराजियानम* व *टी. विरडी* के प्रयोग द्वारा गन्ने की प्रमुख व्याधियों का प्रबंधन तथा वृद्धि करके गन्ने की उत्पादन व रस की गुणवत्ता बढ़ायी जा सकती है। गन्ने की खेती में *ट्राईकोडर्मा* की भूमिका को निम्न प्रकार से संक्षेपित किया जा सकता है।

सूखी पत्तियों के शीघ्र अवकर्षण व वृद्धिकारक के रूप में

ट्राईकोडर्मा मिश्रित जीवाणु समूह का गन्ने की सूखी पत्तियों (ट्रेश) पर उपयोग करने से अवकर्षण की क्रिया को बढ़ाया जा सकता है। साथ ही यह अन्य कार्बनिक पदार्थों ठूठों तथा फसल अवशेषों के शीघ्र अवकर्षण में सहायक

होता है। फलस्वरूप मृदा में कार्बन की मात्रा 0.47 से 0.63 प्रतिशत तक बढ़ोत्तरी होती है। सूक्ष्म जीवी नत्रजन में 8.8 से 18.4 मि.ग्रा/कि.ग्रा. तथा सूक्ष्मजीवी कार्बन 64.7 से 213.4 मि.ग्रा/हैक्टर/दिवस तक बढ़ोत्तरी होती है। पताई बिछाकर *टी. विरडी*–(ट्रेश मल्च *टी. विरडी*) से उपचारित करने पर अच्छी पेड़ी प्राप्त होती है। जिसमें मिल योग्य गन्नों की संख्या गन्ने का औसत वजन तथा उत्पादन में वृद्धि होती है। *टी. हारजियानम* व *टी. विरिडी* के जीवाणु रस को 2.5 प्रतिशत की दर से बुआई में पहले उपचारित करने पर जमाव में 12 प्रतिशत, मिलयोग्य गन्नों की संख्या में 24.5 प्रतिशत उत्पादन में 45 प्रतिशत बढ़ोत्तरी पायी गयी है।

जैव कीटनाशी तथा रोग प्रबंधन की भूमिका में

ट्राईकोडर्मा के कई वियुक्त (*आइसोलेट*) गन्ने के लाल सड़न रोग के कारक (*कोलैटोट्राइकम फैल्केटम*) तथा म्लानी रोगकारक (*यूसेरियम मोनोलीफॉरमी*) के प्रबल विरोधी पाये गये हैं। *टी. हारजियेनम* प्रभेदों के जीवाणु घोल (106 बीजाणु 1 मि.ली.) की दर से गन्ने के बीज के टुकड़ों को उपचारित किया जाता है। अथवा गोबर की खाद आधारित (*ट्राईकोडर्मा* 20 कि.ग्रा. हैक्टेयर की दर से) मृदा उपचार किया जाता है। तब रोग सुग्राही जातियों में 40–45 प्रतिशत गन्नों को लाल सड़न रोग से सुरक्षा मिल पाती है। (सिंह व अवस्थी, 2006)।

वातावरणीय मित्र की भूमिका में

*ट्राईकोडर्मा*के उपयोग से रसायनिक कवकनाशियों के विपरीत अवशोषी विषाक्तता नहीं पायी जाती है। फलस्वरूप इसका उपयोग मृदा व जल प्रदूषण योजनाओं का अंग बन सकती है। यह फफूंदी विषाक्तकों के लिये काफी प्रतिरोधी होते हैं। तथा सायनायड जैसे घातक रसायनों को विघटित कर देते है।

औषधीय गुण

ट्राईकोडर्मा द्वारा काइटिन अवकर्षित उत्पादों का औषधियों में उपयोग किया जाता है।

ग्लूकोन एसीटो बैक्टर (बैक्टीरिया) में नाइट्रोजन को स्थिरीकृत करने की शक्ति पायी जाती है। ये गन्ने में आन्तरिक (एन्डोफाइट) रूप से पाये जाते है। ये गन्ने की जड़ों, तनों व पत्तियों में पाये जाते है। ये पौधों के विकास, लम्बाई में वृद्धि, नाइट्रोजिनेस की क्रियाशीलता, बायोमास (जैवभार) को बढ़ाने तथा उपज को बढ़ाने में सहायता करते है। इनकी सहायता से फास्फोरस आसानी से प्राप्त होता है। पौध वृद्धि हारमोन (आई.ए.ए) स्रावित किया जाता है तथा लाल सड़न रोग में कमी होती है। (मुथु कुमारास्वामी व सहयोगी, 1999) उपरोक्त प्रयासों के क्रम में किए गए भारतीय गन्ना अनुसंधान में एक प्रयोग में (एफ वाई एम) गोबर की खाद आधारित *ट्राईकोडर्मा विरिडी*

गन्ना पेड़ी की उपज पर विभिन्न उपचार के प्रभाव

उपचार	मिल योग्य गन्ने की संख्या (000/हे.)	गन्ने की लम्बाई (से.मी.)	गन्ने की मोटाई (व्यास) (से.मी.)	गन्ने का वजन (ग्राम)	उपज (ट/हे.)
नत्रजन	92.73	191.0	2.15	818.8	62.27
नत्रजन फास्फोरस (एन.पी.के) पोटाश	100.00	194.5	2.23	885.7	71.48
गोबर की खाद	95.25	188.0	2.21	889.3	63.00
एन.पी.के.ग्लूकोन एसीटोबैक्टर	105.7	198.8	2.21	906.2	72.61
एन.पीके.ट्राइकोडर्मा	107.4	199.2	2.21	916.2	74.93
गोबर की खाद एसीटोबैक्टर	99.03	197.3	2.25	891.6	68.96
गोबर की खाद ट्राइकोडर्मा	100.4	188.7	2.27	898.0	65.23
गोबर की खाद ट्राइकोडर्मा.ग्लूकोन एसीटोबैक्टर	103.4	196.6	2.29	928.2	70.24
सीडी–(पी=0.05)	6.35	7.10	1.10	11.50	6.90

स्रोतः शुक्ला एवं सहयोगी (2008)

के उपयोग से जहाँ एन.पी. के 200. 60. 80 कि.ग्रा./हे. की दर से प्रयोग की गयी थी मिल योग्य गन्नों की संख्या अधिकतम (107400/हे.) तथा पेड़ी की उपज (74.93 टन/हे.) प्राप्त की गयी। गोबर की खाद (15 टन/हे.) *ट्राईकोडर्मा विरिडी ग्लूकोन एसीटोबैक्टर डाइजोट्रोफीकस* के प्रयोग से उत्पादित गन्ने अत्याधिक मोटे (2.29 सेमी) तथा 928.2 ग्राम भार तक के गन्ने प्राप्त हुए हुँ। इस प्रकार इसमें पेड़ की अधिकतम उपज (70.24 टन/हे.) प्राप्त हुई। (शुक्ला व सहयोगी–2008)।

गोबर की खाद युक्त जैव कारकों के प्रयोग से जल धारण क्षमता में वृद्धि होती है। जिसमें पर्याप्त नमी लम्बे समय तक बनी रहती है इनके प्रयोग से पोषक तत्व धीरे–धीरे निकलते/उपलब्ध होते है। अतः पोषक तत्व फसल काटने के समय तक उपलब्ध रहते हैं।

इनके प्रयोग से मृदा में जैविक कार्बन में बढ़ोत्तरी होती है। जिससे मृदा की गुणवत्ता लम्बे समय तक बनी रहती है। इनके उपयोग से मृदा में कार्बन व नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ जाती है परिणाम स्वरूप गन्ने की उपज में वृद्धि होती है। *ट्राईकोडर्मा*द्वारा बढ़वार प्रेरित करने वाल पदार्थों के स्रावण के कारण तथा *ग्लूकोन एसीटोबैक्टर* द्वारा नाइट्रोजन के स्थिरीकरण करने के कारण पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है। परिणाम स्वरूप गन्ने की उपज में वृद्धि होती है।

ट्राईकोडर्मा द्वारा शीघ्र अवर्कषण से पौध–मृदा वातावरण का अनुकूलन हो जाता है। जिसमें *ग्लूकोन एसीटोबैक्टर* के नाइट्रोजन स्थिरीकरण की क्षमता में वृद्धि होती है।

अतः *ट्राइकोडर्मा* व *ग्लूकोन एसीटोबैक्टर*के प्रयोग द्वारा मृदा में जैविक कार्बन में, पोषक तत्वों की उपलब्धता में, अमोनियम एवं नाइट्रेट नत्रजन में बदलने वाले जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होने से मृदा की गुणवत्ता में वृद्धि हो जाती है। परिणाम स्वरूप, मृदा की उच्च गुणवत्ता लम्बे समय तक बनी रहती है। जोकि पेड़ी की उपज के साथ ही चीनी का उत्पादन बढ़ाती है।

कथनी मीठी खाँड़ सी, करनी विष की लोय।

कथनी से करनी करे, विष से अमृत होय।।

अर्थात् *: जिन लोगों की बोली खाँड़ के समान मधुर होती है; परन्तु उनकी करनी जहर जैसी, ऐसी बोली बहुत कष्टदायी होती है। लेकिन जिनकी कथनी और करनी एक होती है, ऐसे लोग अत्यन्त श्रेष्ठ होते हैं। अतः कथनी और करनी में अन्तर नहीं रहना चाहिए।*

गन्ने के प्रमुख रोग एवं कीट तथा उनका समेकित प्रबन्धन

रामजी लाल, दिनेश चन्द्र रजक एवं सत्यानन्द सुशील

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

गन्ना एक प्रमुख नकदी, व्यवसायिक और ऊर्जा श्रोत की फसल है और पूरे वर्ष खेत में रहती है। वानस्पतिक सम्वर्धन की वजह से रोगाणु फसल दर फसल बढ़ते और हानि पहुँचाते रहते है। देश में गन्ना लगभग 5.0 लाख हे. क्षेत्र पर उगाया जाता है और पैदावार को चीनी, खांडसरी, इथेनाल और बिजली बनाने में प्रयोग किया जाता है। उत्तर भारत में 40–65 तथा दक्षिण भारत में 90–130 टन प्रति हे. की उपज प्राप्त होती है। पैदावार में कमी के कई कारण है। उनमें रोग एवं कीट प्रमुख है। जिससे उपज में 20 प्रतिशत की कमी एवं चीनी उद्योग को 15 प्रतिशत की हानि का अनुमान लगाया गया है।

प्रमुख रोग

लाल सड़न *(कोलिटोट्राइकम फैलकेटम)*

इस रोग के लक्षण पौधों की पत्तियों और गन्ने (वृन्त) पर दिखाई पड़ते हैं। ग्रसित गन्ने की ऊपर से तीसरी या चौथी पत्ती किनारे या अग्र भाग की ओर से सूखने लगती है। धीरे–धीरे सभी पत्तियॉ सूख जाती हैं। रोगग्रसित गन्ने को मध्य से चीर कर देखने पर उसके ऊतकों का रंग लाल होता है और उसमें जगह–जगह चौड़ाई में सफेद रंग के धब्बे दिखाई देते है। रोगग्रसित गन्नें के ऊतकों से खट्टे सिरके की गन्ध आती है। ग्रसित गन्नों के सूखनें पर उनकी गांठों और पोरी की वाह्य त्वचा पर अनेक छोटे–छोटे एसरबुलस बनते हैं जिनमें रोगजनक के बीजाणु (कोनेडिया) भरे होते है। रोगग्रसित फसल के अगोले सूख जाते हैं जिससे चारे की कमी हो जाती है। बीज का अंकुरण कम हो जाता है जिससे खेत में जगह–जगह खाली स्थान दिखाई देते है। चीनी की मात्रा में कमी एवं शीरे की मात्रा में वृद्धि होती है। फसल को 10–100 प्रतिशत तक हानि होती है।

म्लानि या उकठा रोग *(फ्यूजेरियम मोनेलीफार्मी)*

इससे रोग ग्रसित पौधे बौने और पीले पड़ जाते है। आरंभ में पत्तियों की मध्य शिरा पीली पड़ने लगती है परन्तु पर्णपटल हरा बना रहता है। बाद में पूरी पत्ती पीली पड़ कर सूखने लगती है। फसल के अन्तिम दिनों में पौधे सूखने लगते हैं जिसके फलस्वरूप गन्ना हल्का और अन्दर से खोखला हो जाता है। गन्नों को लम्बाई से चीरकर देखा जाए तो निचली पोरियों के उत्तकों का रंग कत्थई और गॉठ के बीच का रंग गहरा कत्थई होता है। रोगग्रस्त पौधों से एक प्रकार की गन्ध आती है जो लाल सड़न की गन्ध से भिन्न होती है। गन्ने की उपज में कमी के साथ–साथ गन्नें में रस की मात्रा तथा गुणों में ह्रास होता है। गन्नें में जब यह रोग अन्य कीटों जैसे गन्ना बेधक या शल्क कीट के साथ लगता है तो फसल को अत्यधिक हानि होती है।

कंडुआ *(आस्टिलेगो साइटिमिनिया)*

रोगग्रस्त गन्नें के शीर्ष भाग (अंगोले) से एक पतली, लम्बी, अशाखित, काली चाबुकनुमा कमची निकलती है, कभी–कभी कमची बहुत छोटी होती है और पर्णच्छंद के अन्दर ही रह जाती है। कमची मृदूतक कोशिकाओं तथा संवहन ऊतक की बनी होती है। आरंभ में यह एक सफेद पारदर्शक झिल्ली से ढकी रहती है। झिल्ली के नीचे एक काली परत होती है जिसमें असंख्य कंडबीजाणु भरे होते हैं जो झिल्ली के फटते ही हवा द्वारा बिखर जाते है। इस रोग से गन्नें की पैदावार घट जाती है क्योंकि रोगग्रसित गन्नें बढ़ते नहीं है और उनकी प्रति कूंड़ संख्या भी कम हो जाती है। रोगी गन्नों में रेशों और अपचायक शर्करा की मात्रा बढ़ जाती है तथा सुक्रोज की मात्रा घट जाती है। स्वस्थ गन्ने की अपेक्षा रोगग्रस्त गन्ने में 10 प्रतिशत रस और 3–7 प्रतिशत चीनी कम होती है।

पेड़ी कुंठन रोग *(लिफसोनिया जाइलाई सब स्पीसीज जाइलाई)*

रोगग्रस्त थान के गन्ने की वृद्धि एवं उनकी संख्या कम होती है। गन्नें की पोरियां छोटी एवं पतली होती हैं और पौधों का जड़ तंत्र कम विकसित होता है। रोग के प्रमुख लक्षण परिपक्व गन्नों को लम्बाई मे चीरने के बाद गांठ पर दिखाई पड़ते है। निचली गांठों के संवहन बन्डलों का रंग गहरा लाल या गुलाबी हो जाता है। रोगग्रस्त गन्नों का अंकुरण कम हो जाता है। रोगग्रस्त फसल में उपज कम होती है।

पर्णदाह *(जैन्थोमोनास एल्ब्यूलाइनेन्स)*

ग्रसित गन्ने की रोगी पत्तियों एवं पर्णच्छदों की शिराओ के ऊपर या समीप सफेद धारियॉ बनती है जो धीरे धीरे मिल कर एक चौडी धारी बनती है पहले पत्ती का ऊपरी भाग और बाद में निचला भाग सूख जाता हैं। गन्ने की गाठों पर स्थित ऑखो का नीचे से ऊपर की ओर अकुंरण होने लगता है। इस रोग से गन्ने

में 25 प्रतिशत उपज कम हो जाती है। रोग रासित गन्ने की गुणवत्ता भी घट जाती है।

धासी प्ररोह *(माइकोप्लाज्मा)*

रोगग्रस्त पौधा धास के समान प्रतीत होता है। रोगग्रस्त थान में बौने प्ररोहों के समूह निकलते है, जिनकी पत्तियॉ पतली, कम चौडी तथा छोटी होती हैं। कुछ रोगग्रस्त पौधों की पत्तियो में हरिमाहीनता के लक्षण दिखाई देते है। रोगग्रस्त पौधो में कम गन्ने बनते है तथा उनकी पोरियो की मोटाई बहुत कम होती है। यह रोग डेलटोसिफेलिस बळगेरिस कीट द्वारा फैलता है। गन्ने की उपज 30–70 प्रतिशत तक कम हो जाती है। रोगग्रस्त गन्ने से प्राप्त रस में अपचायक शर्कराओ की मात्रा बढ जाती है और चीनी की मात्रा कम हो जाती है।

मोजेइक

रोगग्रस्त पौधे की पत्तियों पर असंख्य हल्के पीले रंग के धब्बे बन जाते हैं। कभी–कभी बड़े धब्बे पत्ती की पतली लम्बी शिराओ के मध्य बनते हैं। गन्ने की उपज में 15–20 प्रतिशत हानि होती हैं। क्लोरोफिल की मात्रा घट जाती है।

समेकित प्रबन्धन

- गन्ना केवल उन्हीं खेतों में बोना चाहिए जिनमे पानी की निकासी का उचित प्रबंध हो क्योंकि जल भराव वाले क्षेत्रों में लाल सड़न रोग का प्रकोप अधिक होता है।
- फसल काटने के पश्चात सूखी पत्तियों, घास–फूस और गन्ने के टुकड़ों, ठूठों को एकत्रित करके जला देना चाहिए।
- स्वस्थ एवं शुद्ध बीज का प्रयोग करें।
- रोगग्रसित फसल की पेड़ी नहीं लेनी चाहिए।
- रोगग्रसित थान को निकालकर जला देना चाहिए।
- रोगग्रसित भूमि में दो तीन साल तक धान की फसल लेनें से लाल सड़न रोग का प्रकोप कम हो जाता है।
- बीज बोने से पहले उसे कार्बेन्डाजिम (0.2 प्रतिशत) रसायन से 30 मि. तक उपचारित करनें से बीज जनित रोगों का प्रकोप कम हो जाता है।
- गन्ने की रोगरोधी किस्में ही उगाएं।
- गन्ने की फसल में ट्राइकोडर्मा जैवकारक (20 किलोग्राम टी. एम. सी./हे0) का प्रयोग करनें से लाल सड़न एवं उकठा रोगों का प्रकोप कम हो जाता है।
- गन्नें की खेती के साथ अरहर एवं धनिया की खेती करने से उकठा तथा कण्डुवा रोगों का संक्रमण बहुत कम हो जाता है ।
- गन्ने के टुकड़ें को काटते समय दराती को बीच–बीच में आग पर तपा लेना चाहिए या 0.1 प्रतिशत लाईसोल के घोल में डुबाना चाहिए जिससे पेड़ी कुंचन का द्वितीयक फैलाव नहीं होता है
- रोगग्रसित पौधों का निष्कासन करके रोगों पर नियंत्राण करें।
- रोग वाहक कीटों के रोकथाम के लिए 0.1 प्रतिशत मेटासिस्टॉक्स का छिड़काव 10–15 दिनो के अन्तर पर करना चाहिए जिससे मोजेइक एवं घासी प्ररोह रोगों का प्रकोप कम हो जाता है।

प्रमुख कीट

गन्ना एक अधिक समय अवधि की फसल होने के कारण बुबाई से कटाई के मध्य करीब 125 कीट आक्रमण करते हैं जिसमें लगभग 2 दर्जन प्रमुख कीट हैं जो अत्यधिक हानि पहुॅचाते हैं।

दीमक *(ओडोन्टोटर्मस स्पीसीज)*

गन्ने की बुआई के तुरन्त बाद से फसल की कटाई तक दीमक का प्रकोप बना रहता है। इसके प्रकोप से गन्ने का अंकुरण 30–60 प्रतिशत, पैदावार 20–50 प्रतिशत तथा चीनी का परता 4–5 प्रतिशत कम हो जाता है और खेत में रिक्त स्थान दिखाई पड़ता है। दीमक, बोये हुए गन्ने के टुकड़ों के दोनों सिरों से घुसकर अन्दर का मुलायम भाग खाकर उसमें मिट्टी भर देते हैं। दीमक से ग्रसित पौधों की बाहरी पत्तियॉ पहले सूखती है तथा धीरे–धीरे अंदर की पत्तियॉ भी सूख जाती हैं और गन्ना नष्ट हो जाता है। यदि ऐसे पौधों को खींचा जाये तो पूरा पौधा आसानी से उखड़ जाता है और उसके साथ कर्मी दीमक भी दिखाई पड़ते हैं, ऐसे पौधों से दुर्गन्ध नहीं आती। खेत में सूखे एवं कच्चे गोबर की खाद डालने से दीमक का प्रकोप बढ़ जाता है।

सफेद लट *(होलोट्राइकिया कन्सनगुनिया* और *होलोट्राइकिया सेर्राटा)*

यह कीट राजस्थान एवं गुजरात में बहुतायत से पाया जाता है। यह फसल को 80 से 100 प्रतिशत तक नुकसान पहुॅचाता है। इसकी सूॅड़ी– गन्ने की जड़ तथा प्रौढ– बेर, नीम, शीशम आदि की पत्तियों को खाता है। इस कीट के प्रभाव से पौधे उकठकर धीरे–धीरे सूख जाते हैं। प्रभावित गन्ने का थान जड़ से गिर जाता है। बिहार प्रान्त में इस कीट की प्रजातियाँ जैसे–*हेटरोनाइचस स्पीसीज, हेटरोनाइचस सबलेविस* और *हेटरोनाइचस रोबसटस* पायी जाती हैं जिसकी सूॅड़ी एवं प्रौढ़ दोनों ही गन्ने की जड़ को खाते हैं। इसके अलावा

एलीसोनोटम इम्प्रेसिकोल एवं *पेन्टोडान* स्पीशीज भी गन्ने को नुकसान पहुँचाते हैं।

जड़ बेधक *(पालियोका डिप्रेशेला)*

इस कीट की सूँडी का प्रकोप छोटे एवं बड़े पौधों पर पाया जाता है। इसके द्वारा उपज 10 प्रतिशत, सुक्रोज 0.3 अंक तथा प्ररोह 52 प्रतिशत नष्ट हो जाता है। इसकी सूँड़ी जमीन की सतह से लगे हुए गन्ने के प्ररोह में एक छिद्र बनाकर घुस जाती है तथा ऊपर की तरफ न बढ़कर गन्ने के आधार में बनी रहती है। इसके प्रकोप से बने हुए मृतसार से कोई दुर्गन्ध नहीं निकलती तथा इसे आसानी से निकाला नहीं जा सकता।

प्ररोह बेधक *(काइलो इन्फसकैटलस)*

इसके प्रकोप से पैदावार में 22 से 30 प्रतिशत, चीनी 12 प्रतिशत और गुड़ 27 प्रतिशत कम हो जाता है। इसका प्रकोप बरसात के मौसम से पहले अप्रैल से जून के महीने में अधिक होता है। इस कीट की सूँड़ी छोटे गन्ने में जमीन की सतह से थोड़ी सी ऊपर एक या अधिक छेद करके घुस जाती है। यह ऊपर एवं नीचे की तरफ चलकर गन्ने के बढ़वार बिन्दु को खाकर नष्ट कर देती हैं जिससे मृतसार (डेडहर्ट) बन जाता है। इसका मृतसार पुआल के रंग का हो जाता है और सूखने पर सड़ी हुई दुर्गन्ध देता है। इसके डेडहर्ट का मुख्य लक्षण – केन्द्र की पत्ती पहले सूखती है और बाहर की पत्तियाँ धीरे–धीरे सूखती हैं। बड़े गन्ने में इसके प्रकोप से डेडहर्ट कभी–कभी बनता है। इस कीट की आर्थिक क्षति –सीमा (इकोनामिक थ्रेसोल्ड लेवेल) 15 से 22 प्रतिशत आपतन है। इसका प्रकोप अधिक तापमान और कम आर्द्रता की स्थिति में अधिक होता है।

चोटी बेधक *(सिरपोफैगा एक्सर्पटैलिस)*

हमारे देश के उपोष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र का यह सबसे अधिक नुकसान पहुँचाने वाला कीट है, जो गन्ने की सभी बढ़वार अवस्था में पाया जाता है। इस कीट की मादा अपने अण्डों को पत्तियों की निचली सतह पर समूह में देती है जो भूरे रंग के बालों से ढके रहते हैं। नवजात सूँड़ी पत्ती के मध्य सिरा के नीचे की ओर से प्रवेश करती है और धीरे–धीरे बारीक सुरंग बनाते हुए गोफ में पहुँच जाती है जहाँ यह बढ़वार बिन्दु को खाकर नष्ट कर देती है जिससे मृतसार बन जाता है जो खींचने पर सरलतापूर्वक नहीं निकलता। जब गन्ने का बढ़वार बिन्दु क्षतिग्रस्त हाने के फलस्वरूप ऑखों से फुटान हो जाने के कारण बंचीटाप (शाखा युक्त) बन जाती हैं और गन्ना छोटा रह जाता है।

तना बेधक *(काइलो ओरिसिलियस)*

इस कीट की सूँड़ियों द्वारा गन्ने को नुकसान होता है। अण्डे से सूँड़ी निकलने के बाद पत्ती पर थोड़ी देर इधर–उधर घूमती है उसके बाद गोफ में पहुँच जाती है और वहाँ पर लीफ–शीथ के पास खुरचकर खाती है। पत्ती के मध्य सिरा पर ऊपर से नीचे तक नारंगी पीली रंग की लम्बी रेखा बन जाती है। इसकी तीसरी पीढ़ी की सूँड़ी प्ररोह एवं पोरियों में छेद करके अन्दर ही अन्दर मुलायम भाग को खाती रहती है। इसकी वजह से गन्ने की गुणात्मक एवं मात्रात्मक क्षति होती है। तना बेधक की आर्थिक क्षति –सीमा– 12 से 16 सूँड़ी प्रति 6 मीटर प्रति पंक्ति है।

पोरी बेधक *(काइलो सैकरीफैगस इन्डिकस)*

इस कीट की नई सूँड़ी लीफशीथ को खुरचकर खाती है इसके बाद गन्ने की नरम पोरियों पर छेद बनाकर अन्दर ही अन्दर खाती है और मल बाहर निकाल देती है। क्षतिग्रस्त पोरियॉ छोटी एवं कठोर हो जाती हैं जिसकी पेराई कठिन होती है। इससे 10.7 प्रतिशत फसल तथा 1.12 प्रतिशत चीनी परता का नुकसान होता है। आर्थिक क्षति–सीमा–17 से 28 छिद्रित गन्ना प्रति 6 मीटर/पंक्ति है।

गुरदासपुर बेधक *(एसीगोना स्टेनियेलस)*

इस कीट का प्रथम आक्रमण गुरदासपुर, पंजाब में 1925 में पाया गया। इसकी सूँड़ी झुन्ड एवं एकल रूप में पायी जाती है। अण्डे से निकली हुई सूँड़ी गन्ने की ऊपरी 3 पोरीयों में झुंड में घुसकर कुछ दिन खाती है इसके बाद निकल कर अलग–अलग पोरियों में जाकर खाती है। पैदावार में 5 से 10 प्रतिशत, सुक्रोज 29 प्रतिशत और संपूर्ण ठोस पदार्थ में 17 प्रतिशत की कमी पायी गयी है।

प्लासी बेधक *(काइलोट्युमिडी कास्टैलिस)*

यह कीट 2 प्रकार से नुकसान करता है प्राथमिक एवं द्वितीयक। प्राथमिक प्रकोप में सूँड़ियॉ अण्ड समूह से निकलकर गन्ने में ऊपर की तीन से पॉच पोरियों में प्रवेश कर जाती हैं उसके बाद वहाँ खाती रहती हैं और भीगा हुआ चमकदार लाल रंग का मल बाहर निकालती हैं। क्षतिग्रस्त पोरियों के पास वाली पोरी से जड़ें निकल आती हैं। गन्ने की ऊपरी सभी पत्तियॉ सूख जाती हैं और अंगोला आसानी से टूट जाता है। द्वितीयक प्रकोप में विकसित सूँड़ी दूसरे गन्ने या थान में चली जाती है और वहाँ नुकसान करती हैं। पैदावार में 8.1 से 48.6 प्रतिशत तथा चीनी परता में 10.7 से 48.6 प्रतिशत की कमी हो जाती है।

पायरिला *(पायरिला परप्युसिला)*

इस कीट के शिशु एवं वयस्क दोनों ही पत्तियों की निचली सतह से रस चूसकर नुकसान पहुँचाते हैं जिसके कारण पत्तियॉ पीली पड़ जाती हैं और इन कीड़ों द्वारा छोड़े गये लसलसे पदार्थ से पत्तियों पर काली फफूँद विकसित हो जाती है जिससे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया बाधित होती है। आर्थिक क्षति –सीमा 3 से 5 शिशु व प्रौढ़ प्रति पत्ती है। अधिक प्रकोप होने पर गुड़ एवं चीनी की मात्रा में कमी हो जाती है। पायरिला के प्रकोप से पैदावार 28.1 प्रतिशत, सुक्रोज 1.6 अंक तथा गुड़ 2.2 से 4.5 प्रतिशत की कमी हो जाती है। इस कीट के प्रकोप के लिए उपयुक्त परिस्थितियॉ जैसे–अच्छा बढ़ा हुआ गन्ना एवं बरसात के बीच में लम्बे समय तक सूखा का आना है।

काला चिकटा *(कवलेरियस स्वीटी और डाइमार्फोपटेरस गिब्बस)*

यह कीट मुख्यतः बरसात के पहले पेड़ी की फसल में लगता है इसके शिशु एवं वयस्क दोनों ही गोफ के अन्दर रस चूसते हैं जिसके कारण पत्तियॉ पीली एवं गहरे भूरे धब्बे पड़ जाती हैं। पत्तियों की अगली नोंक और किनारा सूखने लगता है और कभी–कभी पूरा गन्ना सूख जाता है। रस की गुणवत्ता भी खराब हो जाती है। जिस खेत की सफाई नहीं होती उसमें इसका प्रकोप अधिक होता है।

शल्क कीट *(मेलैनैसपिस ग्लोमराटा)*

इस कीट का प्रकोप उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रों में अधिक पाया जाता है। यह कीट हल्के भूरे रंग का होता है। इसका प्रकोप गन्ने की गॉठों के पास पत्ती के नीचे होता है। इसके प्रभाव से गन्ने की बढ़वार कम तथा पोरियां छोटी हो जाती है। इससे पैदावार 25 से 30 टन प्रतिहे0, रस 0.3 से 41.1 प्रतिशत, सुक्रोज 5.9 से 7.2 प्रतिशत, अंकुरण–33.3 प्रतिशत, बढ़वार–5.5 से 29.3 प्रतिशत तथा मोटाई–2.8 से 12.1 प्रतिशत तक कम हो जाती है।

ऊनी मॉहू *(सेरैटोवैकुना लैनीजेरा)*

इस कीट का प्रकोप महामारी के रूप में वर्ष 2003–04 में महाराष्ट्र कर्नाटक एवं आन्ध्र प्रदेश में दिखाई पड़ा। इस कीट का प्रकोप बिहार, उत्तर प्रदेश तथा उत्तराखण्ड में भी मिलता है। शिशु एवं वयस्क दोनों गन्ने की पत्तियों से रस चूसते हैं। खेत में सफेद चादर जैसी बिछी हुई दिखाई पड़ती है। इसके द्वारा मीठे द्रव्य का उत्सर्जन होता है जिससे फॅफूद विकसित हो जाते हैं और पत्तियॉ काली पड़ जाती हैं तथा प्रकाश संश्लेषण की क्रिया बाधित होती है। इसके प्रभाव से गन्ने में चीनी का परता कम हो जाता है।

श्वेत मक्खी *(अल्युरोलोबस बैरोडेन्सिस)*

इससे प्रकोपित गन्ने की पत्तियॉ पीली पड़ जाती हैं जो बाद में सूख जाती है। जब इसका प्रभाव अधिक होता है उस समय पत्तियों पर सूटीमोल्ड विकसित हो जाता है जिससे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया बाधित होती है एवं पौधों की बढ़वार और चीनी की मात्रात्मक कमी हो जाती है।

मिलीबग *(सैकरीकोकस सैकरी, सूडोकोकस सैकरीफोली)*

इस कीट का शिशु अण्डाकार चिपटा हुआ होता है और गन्ने की गॉठ के पास पत्ती के नीचे पाया जाता है। इसका शिशु एवं प्रौढ़ गन्ने के रस को चूसता है।

समेकित प्रबन्धन

बीज का चुनाव

स्वस्थ एवं शुद्ध बीज का प्रयोग करें। जिस खेत में कीड़ों का प्रकोप 20 प्रतिशत से ज्यादा हो उस खेत से बीज नहीं लेना चाहिए। प्रकोपित गन्ने के टुकड़े को छॉटकर निकाल देना चाहिए।

बीज शोधन

शल्क कीट से बचाव के लिये डाइक्लोरवास 76 ई0सी0 का 1 मि. ली. / ली. के घोल में कम से कम 15 मिनट तक बीज को डुबोकर रखने के बाद बुवाई करें।

बुवाई के समय

दीमक, प्ररोह बेधक व मूल बेधक के प्रकोप से बचने के लिए क्लोरपायरीफॉस 20 ई0सी0 का 6.25 ली0 / हे0 या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस0एल0 का 350 मि0 ली0 / हे0 या क्लोरैट्रनीलीप्रोल 18.5 एस0सी0 का 500–625 मि0 ली0 / हे0 पानी में घोलकर फौव्वारे द्वारा कूड़ों में गन्ने के टुकड़ों पर डालने के उपरान्त कूड़ों को बन्द कर देना चाहिए।

जून माह से अक्टूबर माह तक

प्ररोह बेधक

- अण्ड परजीवी *ट्राइकोग्रामा किलोनिस* का 50 हजार प्रौढ़ / हे0 के हिसाब से सात दिन के अन्तर पर खेतों में निर्मुक्त करना चाहिए।
- प्ररोह बेधक ग्रेन्यूलोसिस वाइरस का 107–109 आई0 बी0 / मिलीलीटर का छिड़काव प्रान्त में करना चाहिए।
- *स्टर्मियोप्सिस इनफेरेन्स* का 125 गर्भित मादा / हे0 की दर से तटीय तमिलनाडु में निर्मुक्त करें।

चोटी बेधक

- अण्ड समूह को इकट्ठा करके उनसे परजीवी निकालकर नष्ट कर दें।
- जिस समय कीड़े के प्रौढ़ निकल रहे हों उस समय सिंचाई कम कर देना चाहिए।
- कार्बोफ्यूरॉन 3जी का 33 किलोग्राम/हे0 या फोरेट 10जी का 30 किलोग्राम/हे0 या क्लोरैट्रनीलीप्रोल 18.5 एस0सी0 का 375 मि.ली. लीटर/हे0 को गन्ने के जड़ क्षेत्र में जून के दूसरे एवं तीसरे सप्ताह अथवा जब तीसरी पीढ़ी के वयस्क जून के माह में सक्रिय दिखाई दें इस दवा को डालना चाहिए। इस रसायन को डालते समय खेत में पर्याप्त नमी होना अनिवार्य है।
- *ट्राइकोग्रामा जैपोनिकम* का 50,000 प्रौढ़/हे0 की दर से 10 दिन के अन्तर पर जुलाई से अक्टूबर महीने में निर्मुक्त करने से इस कीट का नियंत्रण किया जा सकता है।
- *आइसोटिमा जावेन्सिस* की 125 गर्भित मादा/हे0 जुलाई से अगस्त महीने में निर्मुक्त करने से चोटी बेधक के नियंत्रण में सुविधा होती है।

जड़ बेधक, तना बेधक, पोरी बेधक प्लासी बेधक एवं गुरदासपुर बेधक

- सूँडी के झुण्ड में निकलने की अवस्था में ही प्रकोपित गन्ने को उखाड़कर नष्ट कर दें।
- *ट्राइकोग्रामा किलोनिस* का 50,000 प्रौढ़/हे0 की दर से 10 दिन के अन्तराल पर जुलाई से अक्टूबर महीने में निर्मुक्त करके इस कीट का नियंत्रण किया जा सकता है।
- *कोटेशिया लेविपस* (सूँड़ी परजीवी) की गर्भित मादायें 500/हे0 के हिसाब से साप्ताहिक अन्तराल पर जुलाई से अक्टूबर तक खेतों में छोड़ें। यह बेधक को नष्ट करने में सहायता करता है।
- सितम्बर/अक्टूबर में सूखी पत्तियों और जल किल्लों को निकालकर नष्ट करना चाहिए।
- गन्ने की जड़ के पास मिट्टी चढ़ाकर थानो कों आपस में बॉध देना चाहिए।

पायरिला

- गन्ने की सूखी पत्तियों को जिन पर पायरिला के अण्डे हों, अप्रैल–मई के माह में निकालकर नष्ट कर देना चाहिए।
- *इपीरीकेनिया मेलानोल्यूका* का 4,000–5,000 कोकून और 4–5 लाख अण्डे/हे0 की दर से जुलाई–अगस्त में खेत में लगाना चाहिए।
- जब खेत मे तीन से पॉच पायरिला का शिशु व प्रौढ़/पत्ती हो और इपिरिकेनिया उस खेत में न हो, तो एक सप्ताह तक इन्तजार करना चाहिए यदि *इपिरिकेनिया* आ जाए तो वह पायरिला को नियंत्रित कर देगा। किसी भी रासायनिक कीटनाशी का उपयोग बिना विशेषज्ञ की सलाह लिए नहीं करना चाहिए।
- *मेटरहीजियम एनीसोप्ली* का 107 बीजाणु/मिलीलीटर का खेत में छिड़काव करें या पायरिला का 250 प्रौढ़ जिस पर *मेटरहीजियम एनीसोप्ली* के बीजाणु लगे हों, खेत में निर्मुक्त करने से पायरिला की रोकथाम की जा सकती है।

ऊँनी मॉहू

- रासायनिक खादों की संस्तुति मात्रा ही खेत में डालें। नाइट्रोजन की अधिकता से यह कीट बढ़ जाता है।
- परभक्षी डिफा *एफिडिवोरा* का 1,000 सूँड़ी या माइक्रोमस का 2,500 सूँड़ी प्रति हे0 की दर से खेत में छोड़ना लाभकारी पाया गया है।
- यदि परभक्षी कीटों की उपस्थिति न हो तब इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस0एल0 125 मि0ली0/हे0 या क्वीनलफॉस 25 ई0सी0 2ली0/हे0 का 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें। कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं का संरक्षण करें।

काला चिकटा

- इस कीड़े के नियंन्त्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस0एल0 125 मि0ली0/हे0 या क्वीनलफॉस 25 ई0सी0 2ली0/हे0 का छिड़काव करें।
- बिवेरिया बैसियाना फफूँद का बीजाणु लगा हुआ 5,000 काला चिकटा के प्रौढ़ को खेत में डालने से इस कीट के प्रकोप को रोका जा सकता है।
- प्रकोपित फसल की पेड़ी नहीं लेनी चाहिए।
- सिंचाई समय से करते रहना चाहिए।

सफेद लट

- वयस्कों को मई–जून में आई.आई. एस.आर. ह्वाइट ग्रब बिटिल ट्रैप से शाम 7–8 बजे के बीच आकर्षित करना तथा नष्ट करना चाहिए।

- आस–पास के पेड़ जैसे– आम, बेर, नीम, बबूल आदि पर कार्बरिल 50 डब्लू पी 2 मि0ली0/ली0 या क्लोरोपाइरीफॉस 20 ई0सी0 2.5 मि0ली0/ली0 या डेल्टामिथ्रिन 2.8 ई0सी0 1 मि0ली0/ली0 का छिड़काव करना चाहिए जिससे वयस्क नष्ट हो जाते हैं।
- मेटरहीजियम एनीसोप्ली एवं बेवेरिया बैसियाना कवक इस कीट के नियंत्रण में उपयोगी होता है।
- फोरेट 10जी या क्लोरोपाइरीफॉस 10जी का 25 कि0ग्रा0 या कार्बोयूरान 3जी का 33 कि0ग्रा0 या क्लोरोट्रेन्लीप्रोल 0.4 जी का 20 कि0ग्रा0/हे0 की दर से गन्ने के जड़ क्षेत्र में जून के प्रथम पखवाड़े में खेत में मिलायें।
- प्रकोपित गन्ने के भूमि में दो साल तक धान की फसल लेनें से सफेद लट का प्रकोप कम हो जाता है।

नवम्बर माह से गन्ने के कटाई तक

- गन्ने की सूखी हुई पत्तियों को निकाल दें तथा जड़ किल्लों को नष्ट कर दें।
- गन्ने की कटाई जमीन की सतह से करें तथा सूखी हुई पत्तियों को नष्ट कर दें।

उपरोक्त विधि को अपनाकर गन्ने की अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है।

मैं दुनियाँ की सब भाषाओं की इज्जत करता हूँ, परन्तु मेरे देश में हिन्दी की इज्जत न हो, यह मैं नहीं सह सकता।

विनोबा भावे

समस्त भारतीय भाषाओं के लिए यदि कोई एक लिपि आवश्यक हो तो वह देवनागरी ही हो सकती है।

कृष्णस्वामी अय्यर

गन्ने में विभिन्न अजैविक प्रतिबलों को कम करने की क्षमता का आंकलन

रमाकान्त राय, पुष्पा सिंह, अमरेश चन्द्रा एवं एस. सोलोमन

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

गन्ना भारत में एक प्रमुख फसल है क्योंकि इससे न केवल चीनी, बल्कि एल्कोहल और ऊर्जा भी मिलती है। किन्तु मनुष्य की गतिविधियों के कारण वातावरण में बदलाव आ रहा है और अजैविक प्रतिबल का प्रभाव ज्यादा पड़ने से पैदावार कम होने लगी है किन्तु गन्ने में विभिन्न प्रतिबलों को कम करने की अपार क्षमता होती है। इन समस्याओं को बढ़ाने में अधिक जल भराव, वात प्रवाह प्रतिबल तथा कीटनाशी दवाओं का प्रयोग प्रमुख कारण है। कभी सूखे की समस्या या अधिक ताप, लवण और हानिकारक धातुओं के कारण भी प्रतिबल बदल जाते है। इन सबका प्रभाव गन्ने और रस की मात्रा पर पड़ने लगता है। इसके बावजूद गन्ना इन परिस्थितियों में पैदावार देता है किन्तु मात्रा कम होती है। चूँकि गन्ने में क्रोमोसोम की संख्या कई समूहों में होती है इससे इसकी कार्यिकी, जैव रसायन और वंशानुगत लक्षणों पर प्रभाव पड़ता है। जलवायु परिवर्तन के बावजूद गन्ने का प्रयोग ऊर्जा स्रोत के रूप में होता है। ब्राजील देश में पेट्रोल में एल्कोहल मिलाकर खूब प्रयोग हो रहा है। यह एल्कोहल गन्ने से ही पैदा होता है।

गन्ने की रेडाक्स क्षमता पर प्रभाव

प्रकृति के बदलाव के कारण उपजे हुए प्रतिबलों के कारण गन्ने के रेडाक्स शक्ति पर बहुत प्रभाव पड़ता है। इसके कारण इसका एण्टी–ऑक्सीकरण तंत्र क्रियाशील हो जाता है और प्रतिबलों के प्रभावों को कम कर देता है। इससे प्रतिबल जन्य ऑक्सीजन में कमी आती है और पौधा बढ़वार करने में सक्षम हो जाता है। इन प्रतिबलों के कारण बना हुआ सुपर ऑक्साइड आयन और हाइड्रोजन परऑसाइड की मात्रा कम हो जाती है। नहीं तो ये कोशिकाओं के विभिन्न अवयवों को नुकसान पहुँचाने लगते हैं। इससे कोशिकाओं की क्रियाशीलता खत्म हो जाती है।

अजैविक प्रतिबल के प्रभाव से जन्य अतिक्रियाशील ऑक्सीजन को कम करने के लिए बहुत से किण्वक गन्ने में कार्य करने लगते हैं जैसे सुपर–ऑक्साइड डिसम्यूटेज, कैटेलेज, परऑक्सीडेज आदि प्रमुख है। इस क्रिया में बने हुए ऑक्सीडेज की मात्रा एस्कार्वेट परऑक्सीडज के क्रियाशील होने के कारण कम जाती है अन्यथा हाइड्रोजन परऑक्सीडेज कोशिका को बहुत नुकसान पहुँचा देता है। किण्वकों के अलावा एसकार्वेट, ग्लूटाथायोन, विटामिन, लेवोनाएड, एक्कोलाएड और कैरोटिनाएड भी अजैविक प्रतिबलों से होने वाली हानियों को कम कर देते है। इसी दौरान शोधों से पता चला है कि गन्ने में एण्टीऑक्सीडेण्ट तंत्र पूर्ण विकसित है तथा एण्टी ऑक्सीडेण्ट मार्कर की भी खोज हुई है।

लवण प्रतिबल

विभिन्न लवणों से जनित प्रभावों को कम करने के लिए आसमोटिक और आयनिक दशाओं को सामान्य करना एक प्रमुख तरीका गन्ने में मौजूद है। इसके लिए गन्ना कम्पैटिबुल सोलूट को बनाता है। इस कारण अधिक लवणता में गन्नों की बढ़वार जारी रहती है और पौधा मरता नहीं। ऐसा देखा गया है कि यदि गन्ना जल लवण युक्त मृदा में बढ़ता है तो इसमें सोडियम के बहिष्करण करने की क्षमता होती है। गन्ने में पोटैशियम को अपने अन्दर निहित करने की भी क्षमता होती है। यह पोटैशियम गन्ने को लवणयुक्त मृदा में बढ़ने के लिए सहायक होता है। ऐसा पाया गया है कि जो प्रजातियाँ लवण युक्त मृदा में पैदावार देती है, उनमें लाभोनाएड अधिक होता है। विभिन्न लवणों के द्वारा अस्तर (प्राइमिंग) करने के कारण गन्ना उन मृदाओं में अधिक बढ़ता है। जिनोमिक शोधों के द्वारा इ.एस.टी. बनाकर उनका प्रयोग लवण युक्त मृदाओं में पैदावार बढ़ाने के लिए गन्ने में हो रहा है। ट्रान्सकिप्टोम, मेटावोलोम और प्रोटिओम शोध भी गन्ने की प्रजातियों को लवण प्रतिरोधी बनाने में सहायक होता है।

तापक्रम प्रतिबल

कम तापक्रम से बचाव के लिए गन्ने में जैन्थिन डीहाइड्रोजेनेज इ.एस.टी. के द्वारा पता चला कि इसके कारण कम तापक्रम में ऑक्सीकरण की क्रिया कम हो जाती है और पड़ने वाला हानिकारक प्रभाव कम हो जाता है। अधिक तापक्रम से बचाने के लिए गन्ने में प्रोलीन, ग्लाइसिन बिटेन और घुलित शर्करा की मात्रा बढ़ जाती है। इसके अलावा कैरोटिनाएड और लोभोनाएड भी अधिक हो जाता है। गन्ने में देखा गया कि अधिक तापक्रम के प्रभाव कम करने में ताप प्रघात प्रोटीन प्रमुख होते है।

वातप्रवाह प्रतिबल (ड्राउट स्ट्रेस)

अध्ययनों से पता चला है कि बहुत

से किण्वकों की क्रियाशीलता कम हो जाती है। जैसे रिवुलोज 1,5–बाइफॉस्फेट कार्बोक्सिलेज, फॉस्फोइनॉल पायूरूवेट कार्बोक्सीलेज, एन.ए.डी.पी. मैलिक किण्वक, इत्यादि प्रमुख हैं। इनके कम होने और पत्तियों के जल विभव कम होने से वात प्रवाह प्रघात का प्रभाव ज्यादा पड़ता है। इस प्रघात के कारण पौधों की कार्बन संश्लेषण प्रक्रिया कम हो जाती है। जिससे अणुओं का बनना कम हो जाता है किन्तु अत्यन्त क्रियाशील ऑक्सीजन की मात्रा बढ़ जाती है। इसलिए यदि जीन्स का उच्च नियंत्रण किया जाय तो पॉलीएमीन ऑक्सीडेज, साइटोक्रोम–सी–ऑक्सीडेज, एस–एडिनोसिलमिथोनिन डीकार्बोक्सीलेज तथा थायोरेडाक्सिन्स को नियंत्रण किया जाय तो वात प्रवाह के प्रघात से गन्ने को बचाया जा सकता है। यह जल की कमी की अवस्था में लाभदायक होता है।

गन्ने में यह पाया गया है कि अगर जीन्स की क्रियाशीलता बढ़ा दी जाए तो विशेषकर परऑक्सीडेज तो वह प्रजाति वात प्रवाह प्रघात से बच जाती है। इसी प्रकार कैटेलेज किण्वक और परऑक्सीडेज किण्वकों के समन्वयव से भी अति क्रियाशील ऑक्सीजन का बनना कम कर देता है तथा पौधों को कम नुकसान पहुँचता है। यदि कोशिकाओं को नुकसान पहुँचता है तो उसे कम करने के लिए ट्रीहैलोज तथा प्रोटीन की सांद्रता बढ़ानी पड़ती है। इसके अलावा इस समस्या से निदान हेतु बाहर से ए0बी0ए0 नामक हार्मोन का छिड़काव लाभप्रद रहता है। इसके छिड़काव से उस जीन की क्रियाशीलता बढ़ जाती है, जिससे फॉस्फेटेज, एस. एडिनोसिलमेथियोनिन डीकार्बोक्सीलेज डेल्टा–12–ओलियेट बनता है। इस जीन को पी.पी.–2–सी. कहते है। ए.बी.ए. के छिड़काव के कारण गन्ने में इथाइलीन की मात्रा अधिक बनने लगती है। जो इस प्रतिबल और लवण प्रतिबल को कम करता है। इस प्रतिबल को कम करने हेतु फॉस्फोरस की मात्रा मृदा में बढ़ाकर भी सम्भव है जो पौधों में जल की मात्रा और प्रकाश संश्लेशण को बढ़ा देते है।

भारी धातु प्रतिबल और निदान

आधुनिक समय में गन्ने की फसल भारी धातुओं से भी प्रभावित हो रही है। यह भारी धातु मृदा में उपस्थित है या सिंचाई के समय पौधों की जड़ों में पहुँचती है। इन भारी धातुओं के कारण गन्ने की पैदावार और वृद्धि दोनों प्रभावित हो रही है। नये अध्ययनों से पता चला है कि भारी धातुओं से बचने के लिए गन्ने में ऑक्सीकरण क्रिया को कम करने की प्रणाली उपस्थित है। गन्ने में सुपर–ऑक्साइड डिसम्यूटेज के सात आइसो–एन्जाइम उपस्थित है। इनके प्रभाव को कम करने के लिए फाइटोरेमिडिएटर पाये जाते है। गन्ने में कैडमियम को प्रभाव को कम करने के लिए प्रतिरोधक क्षमता भी होती है। इसके अलाव कॉपर और जिंक को कम करने के लिए गन्ने की खोई का प्रयोग हुआ। गन्ने में उपस्थित इ.एस.टी. का प्रयोग एल्यूमिनियम से बचाने के लिए मक्के में किया गया है।

पोषक तत्वों के कारण उत्पन्न प्रतिबल

अधिक एल्यूमिनियम और लोहे के कारण होने वाले प्रभावों को कम करने के लिए फॉस्फोरस और पोटैशियम का प्रयोग होता है। पोटैशियम की उचित मात्रा होने से नत्रजन का उपयोग भरपूर होता है। एल्यूमिनियम को कम करने के लिए सल्फर का भी प्रयोग हुआ है। पोटैशियम की उचित मात्रा डालने से प्रकाश संश्लेषण सामान्य चलता है और इस दौरान बनने वाले रसायनों की मात्रा भी बढ़ जाती है। इससे चीनी परता भी ठीक हो जाता है तथा विभिन्न प्रतिबलों को सहने की क्षमता भी बढ़ जाती है। पोटैशियम देने से सोडियम आयन की सांद्रता जो लवणयुक्त मृदा में बढ़ जाता है उसे कम कर दिया जाता है। इससे स्टोमेटा की डियूजिभ क्षमता बढ़ जाती है और ट्रान्ससपिरेशन कम हो जाता है। पोटैशियम और फॉस्फोरस की अधिकता के कारण चीनी की मात्रा कम बनती है। सुक इ.एस.टी. से फॉस्फेट ट्रान्सपोर्टर जीन्स भी बताई गई है जो इसके प्रभाव को नियंत्रित करती है।

उत्तम गुड़ उत्पादन के लिए गन्ने के रस की सफाई एवं सान्द्रीकरण

रमन बनर्जी

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारतवर्ष में गन्ने की खेती लगभग 5.08 मिलियन हेक्टेयर में की जाती है। हमारे देश में गन्ने का वार्षिक उत्पादन लगभग 357.6 मिलियन टन है। पूरे उत्पादन का 16 प्रतिशत गुड़ उद्योग में जाता है। गुड़ में पौष्टिकता के साथ–साथ औषधीय गुण भी होते हैं। गुड़ की गुणवत्ता के आधार पर इसको बी. आई. एस (भारतीय मानक ब्यूरो) ने दो ग्रेड में विभाजित किया है जो इस प्रकार हैः

अच्छी गुणवत्ता का गुड़ बनाने के लिए गन्ने के रस की सफाई जरूरी है। गन्ने के रस की सफाई कई विधियों से की जाती है। विवरण इस प्रकार हैः

अघुलनशील कणों का रस से निकालना

रस को ड्रम में एकत्र करने के पश्चात् उसको स्थिर होने के लिए रख देते हैं जिससे बड़े कण ड्रम की सतह पर बैठ जाते हैं। उपर वाले रस को निकाल लेते हैं।

शर्करा का एन्जाइमिक जल अपघटन को कम करने से

शर्करा का एन्जाइमिक जल अपघटन कम करने के लिए रस को निकालते ही अतिशीघ्र उबाल देना चाहिए।

शर्करा का अम्लीय जल अपघटन को कम करने से

शर्करा का अम्लीय जल अपघटन हाइड्रोजन आयन के सान्द्रता पर निर्भर करता है। इसे कम करने के लिए, गन्ने के रस का पी.एच. जो 5.2–5.6 होता है। इसमें चूने का पानी डालकर रस का पी.एच. 6.5–7.0 करना जरूरी है। इस पी.एच. पर शर्करा का जल अपघटन रस उबलते समय कम से कम होता है।

गुड़ का रंग तथा चमक के सुधार के लिए

कोलाइडल पदार्थ के रस में रहने से गन्नों के रस की सफाई में कठिनाई होती है। कोलाइडल पदार्थ के निकालने से गुड़ का रंग तथा चमक में सुधार होता है।

रस में से कोलाइडल पदार्थ निकालने की निम्न विधि है :

- रस का तापक्रम जल्दी से बढ़ा कर।
- वानस्पतिक शोधकों का प्रयोग करके।

विवरण	ग्रेड–I	ग्रेड–II
सुक्रोज (शर्करा) न्यूनतम्	80	70
अवकारक शर्करा अधिकतम्	10	20
नमी अधिकतम	5	7
अघुलनशील पदार्थ	1.5	2.0
सल्फेटेड ऐश	1.5	5.0
सल्फर डाई आक्साइड (पी.पी.एम.) अधिकतम्	50	50
अम्ल में अघुलनशील राख (प्रतिशत) अधिकतम्	0.3	0.3

वानस्पतिक शोधकों में एलबूमीन और पोलीग्लूक यूरोनिक एसिड होने के कारण गन्ने के रस में से घुलनशील/अघुलनशील गन्दगी और रंगयुक्त पदार्थ जैसे क्लोरोफिल, जेन्थोफिल, केरोटीन एन्थोसायनिन और सैक्रटीन को निकालने में मदद करता है। वानस्पतिक शोधक के प्रयोग द्वारा बना हुआ गुड़ स्वास्थ्य के लिए ज्यादा लाभदायक पाया गया है।

विभिन्न प्रकार के वानस्पतिक शोधकों के प्रयोग गन्ने के रस की सफाई के लिए किया जाता है। वानस्पतिक शोधक का प्रयोग रस में उबाल आने के पश्चात् उसकी गन्दगी को साफ करने के उपरान्त किया जाता है। प्रमुख वानस्पतिक शोधको और उनकी प्रयोग विधि तालिका में दी गई है।

वानस्पतिक शोधक के अलावा विभिन्न प्रकार के रसायनिक शोधक का प्रयोग गन्ने की रस की सफाई गुड़ बनाने के लिए किया जाता है। प्रमुख रसायनिक शोधक तथा प्रयोग विधि तालिका में दी गई है।

सान्द्रीकरण

रस का सान्द्रीकरण तब तक करते हैं जब तक कि रस का तापक्रम 118 डिग्री सेल्सीयस तक पहुॅच जाता है। इसके पश्चात रस कडा हो भट्ठी को बन्द कर देते हैं। इससे रस का तापक्रम 118 डिग्री सेल्सीयस से ज्यादा न बढ़ सके। इससे ज्यादा तापक्रम होने से गुड़ भूरे रंग का बनता है जो उचित नहीं है। 116–118 डिग्री सेल्सीयस तक रस का

वानस्पतिक शोधक तथा उनकी प्रयोग विधि

नाम	पौधे का भाग	प्रयोग विधि
देवला भिन्डी	तना और जड़	तना और जड़ को पानी में मसल कर लसलसा पदार्थ प्राप्त करके उसका प्रयोग करते हैं।
फालसा सेमल	पेड़ की छाल	पेड़ की छाल को पानी में मसल कर लसलसा पदार्थ प्राप्त करके उसका प्रयोग करते हैं।
शुक्लाई	पेड़ की सूखी छाल	
सोयाबीन अरण्ड का बीज मूँगफली	बीज	बीज पानी में भिगो देने के पष्चात उसकी छाल को छील देते हैं फिर इन बीजों को पीस कर सफेद दूध जैसे पदार्थ का प्रयोग करते हैं।

तापक्रम रखने से गुड़ सुनहर पीले रंग का होता है साथ ही में शर्करा (सुक्रोज) की मात्रा ज्यादा होने के कारण ज्यादा मीठा और भण्डारण के लिए उपयुक्त है।

वानस्पतिक शोधकों के प्रयोग एवम् रस के सान्द्रीकरण 116–118^0 सेल्सीयस से बना हुआ गुड़ सुनहरा पीला, रवेदार, मीठा, भण्डारण के लिए उपयुक्त और स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होता है।

रसायनिक शोधक तथा उनका प्रभाव

रसायन का नाम तथा मात्रा प्रति कुन्तल रस	प्रभाव	टिप्पणी
हाइड्रोज (सोडियम हाइड्रो सल्फाइड), 3.5 ग्राम	रंग कम करना	शुरू में गुड़ चमकदार होता है परन्तु रखने पर 1 माह के भीतर खराब हो जाता है।
चूना (कैल्शियम आक्साइड) 10 प्रतिशत चूना, 100 से 125 मि0 ली0	रस की अम्लता को कम करता है	भण्डारण के लिए उपयुक्त
सोडियम बाईकार्बोनेट (5 से 8 ग्राम) कूलिंग ट्रे में डालते हैं	रंग कम करना	शुरू में गुड़ चमकदार होता है
सोडियम कार्बोनेट (2.5 से 4 ग्राम)	रस की अम्लता कम करता है	भण्डारण के लिए उपयुक्त
सज़ी (50 प्रतिशत सोडियम कार्बोनेट + 6. 4 प्रतिशत सोडियम सल्फेट + 4.5 प्रतिश्त सोडियम क्लोराइड), 5 प्रतिशत घोल का 400 मि0 ली0	रंग कम करना	भण्डारण के लिए अन उपयुक्त
सुपर फास्फेट (50 ग्राम)	अम्लता बढ़ाता है और गुड़ के रंग में सुधार लाता है	भण्डारण के लिए अन उपयुक्त
फिटकरी (आवश्यकतानुसार)	अस्थाई रंग में सुधार	भण्डारण के लिए अन उपयुक्त

चुकंदर की वैज्ञानिक खेती

अर्चना सिरारी, अभिषेक कुमार सिंह, जे. सिंह एवं प्रवीण कुमार सिंह

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

चुकंदर (*बीटा वल्गैरिस* एल.) की उत्पत्ति शीतोष्ण जलवायु में हुई जिसका विस्तार अब उपोष्ण कटिबंधीय देशों तक हो गया है तथा इसकी खेती ईरान, इराक अल्जीरिया, इजिप्ट, अफगानिस्तान व पाकिस्तान में सफलतार्पूवक की जा रही है। आज पूरे विश्व का 25 प्रतिशत से अधिक शर्करा उत्पादन चुकंदर से है तथा यह उद्योग 45 देशों में स्थापित है।

चुकंदर को उसकी जड़ों के लिए उगाया जाता है जिससे शर्करा निकाली जाती है। यह एक दो वर्षीय फसल है जिसमें प्रथम वर्ष में जड़ों का विकास तथा द्वितीय वर्ष में पुष्पन व बीज का विकास होता है। चुकंदर को भारत में 1950 में शर्करा उत्पादन की कमी को पूर्ण करने के उद्देश्य के साथ लाया गया जिसको लेकर देशभर में खोजपूर्ण प्रयोग किये गये जिसमें भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान की अग्रणी भूमिका रही। अच्छे परिणामों के फलस्वरूप 1971 में चुकंदर पर (ए.आई.सी.आर.पी.) परियोजना प्रारम्भ हुई जिसके केंद्र देशभर में थे व जिसका परियोजना समन्वयन प्रभार गोविंद वल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्यौगिकी विश्वविद्यालय को दिया गया। इस परियोजना के तीन दशकों तक क्रियाशील रहने के उपरांत उपोष्ण कटिबंधीय भारत की रबी फसल के रूप में चुकंदर की खेती की प्रणालियों का मानकीकरण हुआ।

प्रारंभिक प्रयत्नों के कारण 1971 में राजस्थान के श्री गंगानगर में गन्ना एवं चुकंदर फैक्ट्री की स्थापना हुई जिसकी चुकंदर की प्रोसेसिंग क्षमता 600 टन/दिन थी। श्री गंगानगर में चुकंदर सरसों तथा गेहूं की अपेक्षा अधिक लाभदायक फसल सिद्ध हुई। श्री गंगानगर चीनी मिल ने अधिकतम औसत जड़ उपज 89 टन/है. तथा 11–32 प्रतिशत चीनी परता के आंकड़ों को प्राप्त किया। फिर भी अच्छे बीजों के अभाव व नयी तकनीकों की कमी के कारण चुकंदर के प्रति अरुचि के चलते 1998 में चीनी मिल को बंद कर दिया गया।

इस सदी के प्रारंभिक वर्षों में महाराष्ट्र आंध्र प्रदेश और कर्नाटक में लगातार सूखे के चलते गन्ने के उत्पादन में भारी कमी हुई जिससे चुकंदर के प्रति पुनः रुचि उत्पन्न हुई तथा इसके पश्चात निजी बीज कंपनियों के प्रयासों के फलस्वरूप जो चुकंदर प्राप्त हुई वह ऊष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में भी उगाई जा सकती है। भा.कृ.अनु.प. द्वारा 2004–08 में ऊष्ण कटिबंधीय परिस्थितियों में चुकंदर के प्रदर्शन को देखने हेतु एक नेटवर्क परियोजना लायी गयी, जिसके फलस्वरूप ऊष्ण कटिबंधीय भारत में चुकंदर की सफल खेती के लिए कृषि तकनीकों का विकास हुआ। यह राष्ट्रीय प्रयास भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ की अगुवाई में किया गया।

पैदावार तथा क्षेत्र की सीमितता को देखते हुए स्पष्ट है की भविष्य में चीनी की मांग की पूर्ति केवल गन्ने पर निर्भर रहकर संभव नहीं है, जिस कारण चुकंदर को भारतीय कृषि के परिदृश्य में लाया जा सकता है। इथेनॉल के लिए गन्ने पर दबाव तथा जल की घटती उपलब्धता जैसे कारक चीनी उत्पादन की वृद्धि में अवरोध उत्पन्न करेंगे। ऐसे लवण से प्रभावित मृदा वाले क्षेत्र जो कि गन्ने की खेती के लिए उपयुक्त नहीं है चुकंदर के लिए प्रयोग में लाये जा सकते हैं तथा कम साधन वाले किसान चुकंदर को उसके जल्दी परिपक्व होने के गुण के कारण अपनी कृषि प्रणाली में प्रमुखता दे सकते हैं। इसे शरदकालीन गन्ने में अंतःफसल के रूप में भी लिया जा सकता है।

चुकंदर को वृद्धि के दौरान ठंडे मौसम तथा अच्छी वर्षा या सिंचाई व तेज धूप तथा शर्करा उत्पादन के लिए कम रात्रि तापमान की आवश्यकता होती है। 11^0C से कम तापमान चुकंदर की वृद्धि को कम करता है। इसे उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्र में सिंचित फसल के रूप में लिया जाता है तथा अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में जल ठहराव के कारण अच्छी फसल प्राप्त नहीं होती। दोमट अथवा बलुई दोमट मिट्टी जिसमें कि कार्बनिक पदार्थ की मात्रा अधिक हो चुकंदर के लिये उपयुक्त पायी गयी है। 7–8.5 पी एच वाली मिट्टी चुकंदर के लिए सर्वश्रेष्ठ है।

चुकंदर का उत्पादन भारत की सभी जलवायु क्षेत्रों में किया जा सकता है। गन्ने की तुलना में चुकन्दर आधे समय व 30–40 प्रतिशत कम पानी पर समान शर्करा उत्पादन देता है। चुकंदर को लवण युक्त मृदा में भी उगाया जा सकता है और इसको लगाने से मृदा में सुधार होता है, जिससे 6.7 लाख हेक्टेयर क्षेत्र का विकास हो सकता है। (स्रोतः वार्षिक प्रतिवेदन 2011–12 भा.ग.अनु.सं.,

लखनऊ)।

भूमि के लिए चुनाव एवं खेत की तैयारी

चुकंदर की खेती के लिये खेत का चुनाव करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि खेत समतल, गहरा हो तथा उसमें पानी का निकास सुगम हो। यदि खेत में पानी के निकास की उचित व्यवस्था ना हो तो जल जमाव के कारण जड़ भली प्रकार विकसित नहीं हो पाती। उत्तर भारत की मृदा या तो दोमट है अथवा बलुई दोमट है जो नमी को संग्रहित नहीं करती। खेत की एक बार गहरी जुताई के बाद 3–4 बार हल्की जुताई भी अनिवार्य है। इसे लवणीय मृदा वाले क्षेत्रों में भी सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। इसके लिये प्रत्येक जुताई में पाटे की आवश्यकता होती है, जिससे की मृदा में नमी का संरक्षण हो सके।

प्रजातियाँ

चुकंदर एक विदेशी फसल है जिसकी समस्त प्रजातियों व जनन द्रव्य को यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका से प्राप्त किया गया है। प्रारम्भिक वर्षों में चुकंदर के अनुमानतः 300 आनुवांशिक रूपों (जीनोटाइप) को उनकी अनुकूलन क्षमता व आर्थिक गुणों के लिए मूल्यांकित किया गया तथा इसकी व्यापक जांच के परिणामस्वरूप एक डिप्लोएड (गुणसूत्रों के दो समूह वाली) खुले परागण की मल्टीजर्म प्रजाति रामोन्स्काया–06 (आर–06) वाणिज्यिक खेती के लिए उपयुक्त सिद्ध हुई। इसके पश्चात कुछ और प्रजातियाँ उदाहरणस्वरूप मरीबो मगनापोली, मरीबो रसिस्टोपोली, ट्राइबल, एच एच रसपोली और त्रिपलोएड प्रजातियाँ एल एस–6 तथा आई आई एस आर कौंप–1 इत्यादि को भी संस्तुत किया गया। हाल ही में किया गया मूल्यांकन दर्शाता है कि कुछ प्रजातियाँ विशेषकर एल एस–6 और शुभ्र (एच आई–0064) भारत की ऊष्ण कटिबंधीय परिस्थितियों में भी पैदावार के लिए उपयुक्त हैं।

बीज एवं बीज दर

चुकंदर मोनोर्जम या मल्टीजर्म तथा पैलेटेड या अनपैलेटेड दोनों प्रकार का हो सकता है। मल्टीजर्म के लिए 10 कि. ग्रा./है. तथा मोनोजर्म के लिए 3 कि. ग्रा./है. की बीज दर से बीज बुवाई के लिए प्रयुक्त होता है। चुकंदर के बीज में कुछ कठोर किनारे होते हैं जो कि ड्रिल से बुवाई होने की दशा में कठिनाई उत्पन्न करते हैं जिसके कारण बीज में पौलिशिंग की अवश्यकता होती है ताकि इसकी बुवाई सरलतापूर्वक हो सके। बीज की पौलिशिंग के लिए भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान ने एक छोटे से यंत्र का निर्माण किया है। बीज की पौलिशिंग से ना केवल बीज का अंकुरण शीघ्र होता है अपितु बीज जनित रोगों में भी कमी आती है। ऐसे बीज को कीटनाशक व मिट्टी के मिश्रण के साथ पैलेट कर सकते हैं। बिना पैलेटिंग के बोये जाने पर बीज को 4–6 घंटे पानी में भिगोकर रखने तथा बुवाई से पूर्व रात्रिभर सुखाने से बीज में अधिक अंकुरण होता है। बीज को उपचारित करने के लिये 0–2% बैवेस्टीन (1 ग्राम/कि.ग्रा.) उपयुक्त होता है।

पौधों के बीच दूरी तथा पौधों की संख्या

चुकंदर की बुवाई हेतु एक हेक्टेयर खेत में 1,00,000 पौध कि आवश्यकता होती है जबकि पौधे से अधिकतम शर्करा लेने के लिए पौध की जड़ का वास्तविक वजन 600–700 ग्राम होना चाहिये।

उपर्युक्त वजन के लिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 50 सेमी. तथा पौध से पौध की दूरी 20 सेमी. होनी चाहिये। संस्थान द्वारा क्षेत्र के परीक्षण से यह भी ज्ञात हुआ है कि पौधों की पंक्तियों के मध्य 50 सेमी. से अधिक की दूरी चुकंदर की जड़ उपज को कम करती है ,यद्यपि 50 सेमी. से अधिक की दूरी जड़ के वजन में वृद्धि करती है पर एक हेक्टेयर में पौधों की कम संख्या के कारण पैदावार कम होती है। 50 सेमी. से कम की दूरी जड़ के वजन व जड़ की पैदावार दोनों को कम करती है। पौधों के मध्य उपयुक्त दूरी 15–20 सेमी. है।

बुवाई के तरीके तथा समय

अक्टूबर माह के दूसरे पखवाड़े तथा नवंबर माह के प्रथम पखवाड़े के बीच का समय चुकंदर कि बुवाई के लिये उपयुक्त है। मेढ़ पर 2–3 सेमी. गहराई पर बोने से फसल की अच्छी उपज प्राप्त होती है। बीज को 10 सेमी. की दूरी पर छिद्ररोपित कर बोया जा सकता है, जिसको अंततः थिनिंग द्वारा 20 सेमी. किया जा सकता है। बुवाई के तुरंत बाद खेत की सिंचाई आवश्यक है साथ ही यह भी ध्यान रखना है कि सिंचाई मेढ़ के ऊपर ना हो। मल्टीजर्म बीज से एक से अधिक पौधे निकलते हैं जिसके कारण जरूरी है की पौधों को पृथक किया जाए। ये सभी कार्य बुवाई के एक माह के भीतर ही पूर्ण हो जाने चाहिये जब पौधा 4–6 पत्तियाँ धारण कर चुका हो।

पोषक–तत्वों की आवश्यकता

चुकंदर की अधिकतम उपज क्षमता प्राप्त करने के लिए यह जरूरी है कि उसमें पर्याप्त मात्रा में विभिन्न पोषक तत्व डाले जायें। नाइट्रोजन का प्रभाव चुकन्दर की उपज एवं जड़ गुणवत्ता तथा शर्करा उत्पादन पर बहुत पड़ता है। नाइट्रोजन के उपयुक्त मात्रा से अधिक डालने पर शर्करा की मात्रा एवं रस की गुणवत्ता पर विपरीत असर पड़ता है। चुकंदर की खेती के लिए कुल नत्रजन

120 कि.ग्रा./हे. उपयुक्त पायी गयी है। जिस खेत में चुकंदर लगाना है यदि उसमें पोटाश तथा बोरान की कमी हो तो वह फसल में दिखाई पड़ता है। अतः चुकंदर की खेती के लिए नाइट्रोजन के साथ–साथ पोटाश और फास्फोरस का भी काफी महत्व है। साथ ही जैविक खाद का भी चुकंदर की वृद्धि में भी काफी महत्व है। इसलिए बुआई के पहले खेत में 10–15 टन/हे. की दर से गोबर की खाद को एन पी के डोज के साथ मिलाकर डालना काफी लाभप्रद पाया गया है।

(1) नत्रजन का प्रयोग 120 कि.ग्रा./हे. की दर से किया जाना चाहिए। यदि मृदा दोमट तथा चिकनी दोमट है तो उसमें नत्रजन का प्रयोग निम्न प्रकार से करना चाहिए।

- बुवाई के समय 40 कि.ग्रा. नत्रजन/हे. की दर से।
- दूसरी 40 कि.ग्रा. नत्रजन बुवाई के एक माह पश्चात डालनी चाहिए।
- शेष बचा 40 कि.ग्रा. नत्रजन बुआई के दो माह पश्चात् निराई व गुड़ाई के बाद डालनी चाहिए। नत्रजन के प्रयोग में देरी करने से फसल देर में तैयार होती है।

(2) फास्फोरस (P_2O_5) और पोटाश (K_2O) 60 कि.ग्रा./हे. की दर से बुआई के समय ही प्रयोग किया जाता है।

सिंचाई

चुकंदर में, 8–10 बार सिंचाई की आवश्यकता होती है, जो कि मृदा के प्रकार तथा वर्षा पर निर्भर होने के कारण बढ़ और घट सकती है। मृदा में नमी की जड़ों के विकास तथा फसल की वृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका है।

ऊष्ण कटिबंधीय परिस्थितियों में 50–75 (सीपीई) संचयी पैन वाष्पीकरण पर सिंचाई करने से जड़ों की अधिक पैदावार प्राप्त होती है, जिसके लिए 10–12 सिंचाई की आवश्यकता होती है।

- प्रथम सिंचाई बुवाई के तुरन्त बाद,
- बाद की सिंचाई 10–12 दिन के अंतराल में मृदा की नमी को देखते हुए करते रहनी चाहिए।

निराई एवं अंतःकर्षण

बुआई के एक माह बाद निराई गुड़ाई के बाद एक शाक नाशी रिफिट 2 कि.ग्रा./हे. अथवा एलाक्लोर 1.0 ली./हे. की दर से छिड़काव करने से खेत में खरपतवार नहीं निकलता है। इसके अतिरिक्त बुआई के दो महीने के बाद निराई–गुड़ाई, उपरांत खाद एवं सिंचाई करें। नाइट्रोजन के अंतिम छिड़काव में चुकंदर पर मिट्टी चढ़ा दी जाए।

पादप–सुरक्षा

बिना उपचारित किये हुए बीज के उपयोग की दशा में उसको फफूंदनाशक से उपचारित करना चाहिए। चुकन्दर की फसल अनेक कीटों को आकर्षित करती है विशेषकर बिहार हेयरी कैटर पिलर/आर्मी वार्म जो बहुत ही ज्यादा मात्रा में होते हैं, यदि इनके अंड समूहों को नष्ट करके या यथासंभव कीटनाशक का छिड़काव करके इनको नियंत्रित ना किया जाय तो ये अत्याधिक विनाशकारी हो सकते हैं।

रोग–नियंत्रण

(1) पत्ते के रोगों जैसे चूर्णिल आसिता के लिये वेटेबल सल्फर का 2 किग्रा./है. की दर से 12–15 दिन के अंतराल पर छिड़काव (2–3 बार) किया जाना चाहिए।

(2) जड़ के सड़न रोग के लिए उत्तरदायी स्क्लीरोशियम रोल्फसाई के लिए 20 किग्रा. ट्राईकोडर्मा का बुआई के समय प्रयोग करना चाहिए अथवा बुवाई के 45 दिन पश्चात बेविस्टिन 0.5 प्रतिशत से खेत को सरोवार (ड्रेन्चिंग) करना चाहिए।

(3) जड़ के रोगों के विस्तार को कम करने के लिए आवश्यक है कि कम से कम 3 वर्ष तक उसी खेत में चुकंदर की फसल ना लगाई जाय।

नाशीजीव नियंत्रण

(1) आर्मी वार्म (स्पोडोप्टेरा लिट्यूरा) तथा बिहार रोमिल कैटर पिलर (स्पाइलोसोमा ओबलिक्युआ) के लिये

- क्वीनॉलफॉस 20 ई.सी. का छिड़काव 2 मिली./ली. पानी की दर से करें।
- स्पोडोफ्टेरा लिट्यूरा न्यूक्लिओपौली हैड्रो वाइरसेस (एस एल एन पी वी) को 1×10^9 पी ओ बी (500 मिली ली./हे.) की दर से 2 बार छिड़काव करें।
- 10 फीरेमॉन ट्रैप/है. की दर से एक माह के अंतराल पर चारे/प्रलोभन (ल्यूर) का दो बार बदलाव होना चाहिए।

(2) मूषक के नियंत्रण के लिए–शाम के समय चावल की भूसी+गुड़ के साथ मेथोमिल बेटिंग 25 ग्राम/हे. की दर खेत में रखना चाहिए।

फसल कटाव

अक्टूबर माह में बोई जाने वाली चुकंदर की फसल में अप्रैल के मध्य तक परिपक्वता के लक्षण दिखाई देने लगते हैं। फसल में दो विशिष्ट बदलाव होते हैं (1) निचली पत्तियों का सूखना तथा

(2) जड़ों मे शर्करा का संचय (15–16 प्रतिशत) जो कि मई के अंत तक जारी रहता है। लेकिन जून के प्रथम सप्ताह से अधिक तापमान व जड़ सड़न के कारण जड़ों के नष्ट होने के साथ–साथ रस की गुणवत्ता में क्षरण प्रारंभ होने लगता है। कटाई के समय मृदा में पर्याप्त नमी का होना आवश्यक है ताकि जड़ों को भली प्रकार निकाला जा सके। देशी हल को जड़ों के समीप चलाने से मृदा के ढ़ीले हो जाने की दशा में जड़ों को निकालने में सुविधा होती है।

जड़ों को अग्र भाग/क्राउन को ठीक नीचे से काट देना चाहिए क्योंकि इस भाग में सुक्रोस की मात्रा लगभग नगण्य होती है। इस भाग के ना काटे जाने की स्थिति में रस की अशुद्धि में बढ़ावा होता है। कटाई के उपरान्त बिना धुली हुई जड़ों को तत्काल कारखाने में प्रसंस्करण के लिए भेज देना चाहिए। कटाई के बाद उस स्थान पर लम्बे समय तक पड़े रहने की दशा में माइक्रोबियल अपघटन तथा गर्मी के बढ़ने से जड़ों की गुणवत्ता पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है।

बीज–उत्पादन

प्रजनन चरण में परिवर्तित होने के लिए पौधे को वर्नेलाइजेशन अर्थात कम तापमान पर पहुंचने की आवश्यकता होती है। इसी कारणवश चुकंदर का बीज उत्पादन भारत के केवल पहाड़ी क्षेत्रों पर ही संभव है। वाणिज्यिक जड़ फसल में पुष्पन अवांछनीय है, अतः बीज उत्पादन पहाड़ों पर 5000 फीट से अधिक ऊँचाई पर ही संभंव है। जम्मू कश्मीर की श्रीनगर घाटी चुकंदर के बीज उत्पादन के लिये सर्वश्रेष्ठ स्थान है, जहाँ पर जुलाई–अगस्त में वर्षा नहीं होती उस समय चुकंदर का बीज परिपक्व हो रहा होता है। यद्यपि हिमांचल प्रदेश, उत्तराखंड तथा पश्चिम बंगाल के अन्य पहाड़ी क्षेत्र भी बीज उत्पादन के लिए उपयुक्त हैं। बीज उत्पादन इन सीटू (अपने स्थान पर) तथा रोपाई, दो विधियों द्वारा किया जा सकता है। भारतीय परिस्थितियों में मल्टीजर्म बीज की 20–25 कु./हे. उपज प्राप्त की जा सकती है। प्रजनक तथा आधार बीज का उत्पादन भी रोपाई विधि द्वारा किया जा सकता है, जिसमें कि मैदान में बढ़े हुए पौधों की शीत से पहले पहाड़ों में रोपाई की जाती है। उपर्युक्त विधि जड़ों के चयन में सहायक है तथा साथ ही बीज उत्पादन को भी वार्षिकृत करती है। प्रमाणित बीज का उत्पादन केवल इन–सीटू विधि से ही किया जा सकता है।

काया खेत किसान मन, पाप पुण्य दो बीज।

बोया लूनै अपना, काया कसकै जीव।।

अर्थात् *: मनुष्य का शरीर खेत तथा मन किसान की भाँति है। यहाँ शुभ–अशुभ, पाप–पुण्य इत्यादि दो बीज जैसे है। जो जिसको बोयेगा, उसको वैसा ही फल प्राप्त होगा।*

धान में लगने वाले प्रमुख रोग

अतुल कुमार एवं सोनी कुमारी

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, पूसा (बिहार)

भूरी चित्ती रोग/पत्र लांछन

यह रोग देश के लगभग सभी हिस्सों मे फैली हुई है, खासकर पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु इत्यादि। भारत मे इस रोग पर पहली बार रिपोर्ट चेन्नई के सुन्दरारमण (1919) द्वारा बनाई गई थी। उत्तर बिहार का यह प्रमुख रोग है। यह एक बीजजनित रोग है। यह रोग हेल्मिन्थोस्पोरियम औराइजी द्वारा होता है।

इस रोग मे धान की फसल को बिचड़ा से लेकर दानों तक को नुकसान पहुँचता है। इस रोग के कारण पत्तियों पर गोलाकार भूरे रंग के धब्बें बन जाते है। यह रोग फफूँद जनित है। पौधों की बढ़वार कम होती है, दाने भी प्रभावित हो जाते है, जिससे उनकी अंकुरण क्षमता पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है। पत्तियों पर तिल के आकार के भूरे रंग के काले धब्बे बन जाते है। ये धब्बे आकार एवं माप मे बहुत छोटी बिंदी से लेकर गोल आकार का होते हैं। धब्बों के चारो ओर हल्की पीली आभा बनती है। पत्तियों पर ये पूरी तरह से बिखरे होते है। धब्बों के बीच का हिस्सा उजला या बैंगनी रंग का होता है। बड़े धब्बों के किनारे गहरे भूरे रंग के होते है, बीच का भाग पीलापन लिए, गेंदा सफेद या धूसर रंग का हो जाता है। उग्रावस्था मे पौधों के नीचे से ऊपर पत्तियों के अधिकांश भाग धब्बों से भर जाते है। ये धब्बें आपस मे मिलकर बड़े हो जाते है, और पत्तियों को सुखा देते हैं। आवरण पर काले धब्बे बनते हैं। इस रोग का प्रकोप उपराऊ धान मे कम उर्वरता वाले क्षेत्रों मे मई–सितम्बर माह के बीच अधिक दिखाई देते है। यह रोग ज्यादातर उन क्षेत्रों मे देखने को मिलता है, जहाँ किसान भाई खेतों मे उचित प्रबंधन की व्यवस्था नहीं कर पाते है। इसमे जड़ के अलावा पौधे के सभी भाग रोगी हो सकते है। इस रोग मे दानों के छिलको पर भूरे से काले धब्बें बनते है, जिससे चावल बदरंग हो जाता है।

रोग नियंत्रण

- बीजों को थीरम एवं कार्बेन्डाजिम (2:1) की उग्राम दवा प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए।
- रोग सहनशील किस्मों जैसे– बाला, कृष्णा, कुसुमा, कावेरी, रासी, जगन्नाथ और आई आर 36, 42, आदि का व्यवहार करें।
- रोग दिखाई देने पर मैन्कोजैव के 0.25 प्रतिशत घोल के 2–3 छिड़काव 10–12 दिनों के अन्तराल पर करनी चाहिए।
- अनुशंसित नत्रजन की मात्रा ही खेत मे डाले।
- बीज को बेविस्टीन 2 ग्राम या कैप्टान 2.5 ग्राम नामक दवा से प्रति किलोग्राम बीज की दर से बुआई से पहले उपचारित कर लेना चाहिए।
- खड़ी फसल में इण्डोफिल एम–45 की 2.5 किलोग्राम मात्रा को 1000 लीटर पानी मे घोल कर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव 15 दिनों के अन्तर पर करें।
- रोगी पौधों के अवशेषों और घासों को नष्ट कर दें।
- मिट्टी मे पोटाश, फास्फोरस, मैगनीज और चूने का व्यवहार उचित मात्रा मे करना चाहिए।

झोंका (ब्लास्ट) रोग/प्रध्वंस

यह रोग *पिरीकुलेरिया ओराइजी* नामक कवक द्वारा फैलता है। धान का यह ब्लास्ट रोग अत्यंत विनाशकारी होता है। पत्तियों और उनके निचले भागों पर छोटे और नीले धब्बें बनते है, और बाद मे आकार मे बढ़कर ये धब्बें नाव की तरह हो जाते है। बिहार में मुख्यतः इस रोग का प्रकोप सुगंधित धान मे पाया जाता है। इस रोग के लक्षण सर्वप्रथम पत्तियों पर दिखाई देते है, लेकिन इसका आक्रमण पर्णच्छद, पुष्पक्रम, गांठो तथा दानों के छिलको पर भी होता है। मुख्यतः पत्ती ब्लास्ट, पर्णसंधि ब्लास्ट और गर्दन ब्लास्ट के रूप मे इस रोग को देखते है। यह फफूँदजनित है। फफूंद पौधे के पत्तियों, गांठो एवं बालियों के आधार को भी प्रभावित करता है। धब्बों के बीच का भाग राख के रंग का तथा किनारें कत्थई रंग के घेरे की तरह होते है, जो बढ़कर कई सेन्टीमीटर हो जाते है। जब यह रोग उग्र होता है, तो बाली के आधार भी रोगग्रस्त हो जाते है, और बाली कमजोर होकर वही से टूट कर गिर जाती है। भूरे धब्बों के मध्य भाग में सफेद रंग के होते है। इस अवस्था मे अधिक क्षति होती है। गांठ का भूरा–काला होना एवं सड़न की स्थिति मे टूटना, दानों का खखड़ी होना एवं बाली के आधार पर फफूंद का सफेद जाल होना 'नेक राट' कहलाता है। क्षत

स्थल के बीच का भाग घूसर रंग का हो जाता है। अनुकूल वातावरण मे कई क्षतस्थल बढ़कर आपस मे मिल जाते है, जिसके फलस्वरूप पत्तियां झूलसकर सूख जाती है। गॉठो पर भी भूरे रंग के धब्बें बनते है, जिससे समुचित पौधे को नुकसान पहुॅचता है। तनो की गांठ पूर्णतया या उसका कुछ भाग काला पड़ जाता है, कल्लों की गांठो पर कवक के आक्रमण से भूरे धब्बें बनते है, जिससे गांठ के चारो ओर से घेर लेने से पौधे टूट जाते है। बालियों के निचले डंठल पर घूसर बादामी रंग के क्षतस्थल बनते है, जिसे 'ग्रीवा विगलन' कहते है। रोगी बालियों मे दाने नही बनते है, और बालियॉ सड़े भाग से टूट कर गिर जाती है। लीफ ब्लास्ट में पत्तियों पर राख के समान स्लेटी रंग का केन्द्रीय भाग एवं भूरे रंग के किनारों वाले बड़े शंक्वाकार अथवा आँखों की आकृति वाले धब्बें बनतें है।

पुष्पन के समय पर्णसंधि ब्लास्ट में पर्णसंधि वाला भाग काला हो जाता है, और उस स्थान से पौधा टूट जाता है। रोग की वजह से डंठल बालियों के भार से टूटने लगते है, क्योंकि निचला भाग ग्रीवा संक्रमण से कमजोर हो जाता है। जिससे धान की उपज पर काफी असर देखने को मिलता है। गर्दन ब्लास्ट में, पुष्पगुच्छ के आधार भाग पर भूरे से लेकर काले रंग के धब्बें बन जाते है, जो मिलकार चारो ओर से घेर लेते है, और प्रायः पुष्पगुच्छ वहॉ से टूटकर गिर जाता है। रोग का गंभीर प्रकोप पाये जाने पर द्वितीयक टैकिली और दाने भी संक्रमित हो जाते है। परिणामस्वरूप शतप्रतिशत फसल की हानि होती है।

रोग नियंत्रण

- बीज को बोने से पहले बेविस्टीन 2 ग्राम या कैप्टान 2.5 ग्राम दवा को प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित कर लें।
- नत्रजन उर्वरक उचित मात्रा में थोड़ी–थोड़ी करके कई बार में देना चाहिए।
- खड़ी फसल मे 250 ग्राम बेविस्टीन+1.25 किलाग्राम इण्डोफिल एम–45 को 1000 लीटर पानी मे घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।
- हिनोसान का छिड़काव भी किया जा सकता है। एक छिड़काव पौधशाला मे रोग देखते ही, तथा दो–तीन छिड़काव 10–15 दिनों के अन्तर पर बालियॉ निकलने तक करना चाहिए।
- बीम नामक दवा की 300 मिली ग्राम मात्रा को 1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव किया जा सकता है।
- रोग रोधी किस्मों जैसे– आई आर 36, आई आर 64, पंकज, जमुना, सरजु 52, आकाशी और पंत धान 10 आदि को उगाना चाहिए।

पर्णच्छंद अंगमारी/सीथ/बैण्डेड ब्लास्ट रोग/आच्छंद झुलसा/पर्ण झुलसा/शीथ झुलसा/आवरण झुलसा रोग

धान आच्छद झुलसा जो अब तक साधारणतया एक रोग माना जाता है, भारत के धान विकसित क्षेत्रों मे यह एक प्रमुख रोग बनकर सामने आया है। इस रोग के कारक राइजोक्टोनिया सोलेनाई नामक फफूँदी है, जिसे हम थेनेटीफोरस कुकुमेरिस के नाम से भी जानते है। पानी की सतह से ठीक ऊपर पौधें के आवरण पर फफूँद अण्डाकार जैसा हरापन लिए हुए स्लेट/उजला धब्बा पैदा करती है। पत्तियों के आधार तथा पत्तियों पर बड़े–बड़े धारीदार हरे–भूरे या पुआल के रंग के रोगी स्थान बनते है। बाद मे ये तनो को चारो ओर से घेर लेते है, क्षतों का केन्द्रीय भाग स्लेटीपन लिए सफेद होता है, तथा किनारों पर रंग भूरा लाल होता है और ये क्षत धान के पौधों पर दौजियाँ बनते समय एवं पुष्पन अवस्था में बनते है। इस रोग के लक्षण मुख्यतः पत्तियों एवं पर्णच्छद पर दिखाई पड़ते है। अनुकूल परिस्थितियों मे फफूँद छोटे–छोटे भूरे काले रंग के दाने पत्तियों की सतह पर पैदा करते है, जिन्हें स्कलेरोपियम कहते है। ये स्कलेरोपिया हल्का झटका लगने पर नीचे गिर जाता है। रोग की उग्रावस्था मे आवरण से ऊपर की पत्तियों पर भी लक्षण पैदा करती है। सभी पत्तियॉ आक्रांत हो जाती है। पौधा झुलसा हुआ प्रतीत होता है, और आवरण से बालियॉ बाहर नहीं निकल पाती है। बालियों के दाने भी बदरंग हो जाते है। वातावरण मे आर्द्रता अधिक तथा उचित तापक्रम रहने पर, कवक जाल तथा मसूर के दानों के तरह स्कलेरोशियम दिखाई पड़ते है। रोग के लक्षण कल्लें बनने की अंतिम अवस्था मे प्रकट होते है। लीफ शीथ पर जल सतह के ऊपर से धब्बे बनने शुरू होते है। पौधों मे इस रोग की वजह से उपज मे 50% तक का नुकसान हो सकता है।

रोग नियंत्रण

- जेकेस्टीन या बेविस्टीन 2 किलोग्राम या इण्डोफिल एम–45 की 2.5 किलोग्राम मात्रा को 1000 लीटर पानी मे घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।
- खड़ी फसल मे रोग के लक्षण दिखाई देते ही भेलीडा– माइसिन कार्बेन्डाजिम 1 ग्राम या प्रोपीकोनालोल 1 मि.ली. का 1.5–2 मिली प्रति लीटर पानी मे घोल बनाकर 10–15 दिन के अन्तराल पर 2–3 छिड़काव करें।

- धान के बीज को स्थूडोमोनारन फ्लोरेसेन्स की 1 ग्राम अथवा ट्राइकोडर्मा 4 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करके बुआई करें।
- घास तथा फसल अवशेषों को खेत मे जला देना चाहिए। गर्मी मे खेत की गहरी जुताई करें।
- प्रारम्भ मे खेत मे रोग से आक्रांत एक भी पौधा नजर आते ही काट कर निकाल दें।
- अधिक नत्रजन एवं पोटाश का उपरिनिवेशन न करें।
- रोगरोधी किस्में जैसे– पंकज, सवर्नधान और मानसरोवर आदि को उगावें।

जीवाणुज पत्ती अंगमारी रोग/ जीवाणुज पर्ण झुलसा रोग

जीवाणुज पर्ण झुलसा रोग लगभग पूरे विश्व के लिए एक परेशानी है। भारत मे मुख्यतः यह रोग धान विकसित प्रदेशों जैसे– पंजाब, हिमाचल प्रदेश, उत्तरांचल, उत्तर प्रदेश, छत्तीशगढ़, पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र, कर्नाटका, तमिलनाडु मे फैली हुई है। इसके अलावा अन्य कई प्रदेशों मे भी यह रोग देखी गई है। भारतवर्ष में यह रोग सबसे गंभीर समस्या बन गया है। यह रोग बिहार मे भी बड़ी तेजी से फैल रहा है। यह रोग जैन्थोमोनास ओराइजी पी.वी. ओराइजी नामक जीवाणु से होता है।

मुख्य रूप से यह पत्तियों का रोग है। यह रोग कुल दो अवस्थाओं मे होता है, पर्ण झुलसा अवस्था एवं क्रेसेक अवस्था। सर्वप्रथम पत्तियों के ऊपरी सिरे पर हरे–पीले जलधारित धब्बों के रूप में रोग उभरता है। पत्तियों पर पीली या पुआल के रंग कबी लहरदार धारियॉ एक या दोनो किनारों के सिरे से शुरू होकर नीचे की ओर बढ़ती है और पत्तियॉ सूख जाती हैं। ये धब्बें पत्तियों के किनारे के समानान्तर धारी के रूप में बढ़ते हैं। धीरे–धीरे पूरी पत्ती पुआल के रंग मे बदल जाती है। ये धारियां शिराओं से घिरी रहती है, और पीली या नारंगी कत्थई रंग की हो जाती है। मोती की तरह छोटे–छोटे पीले से कहरूवा रंग के जीवाणु पदार्थ धारियों पर पाये जाते है, जिससे पत्तियॉ समय से पहले सूख जाती है। रोग की सबसे हानिकारक अवस्था म्लानि या क्रेसक है, जिससे पूरा पौधा सूख जाता है। रोगी पत्तियों को काट कर शीशे के ग्लास मे डालने पर पानी दूधिया रंग का हो जाता है। जीवाणु झुलसा के लक्षण धान के पौधे मे दो अवस्थाओं मे दिखाई पड़ते है। म्लानी अवस्था (करेसेक) एवं पर्ण झुलसा (लीफ ब्लास्ट) जिसमें पर्ण झुलसा अधिक व्यापक है। झुलसा अवस्था पत्ती की सतह पर जलसिक्त क्षत बन जाते है, और इनकी शुरूआत पत्तियों के ऊपरी सिरों से होती है। बाद मे ये क्षत हल्के पीले या पुआल के रंग के हो जाते हैं, और लहरदार किनारें सहित नीचे की ओर इनका प्रसार होता है। ये क्षत उत्तिक्षयी होकर बाद में तेजी से सूख जाते है। म्लानी या क्रेसेक अवस्थाः रोग की यह अवस्था दौजियॉ बनना आरम्भ होने के दौरान नर्सरी मे दिखाई पड़ती है। पीतिमा एवं अचानक म्लानी इसके सामान्य लक्षण है। म्लानि वस्तुतः लक्षण की दूसरी अवस्था है। ये लक्षण रोपाई के 3–4 सप्ताह के अन्दर प्रकट होने लगते है। इस अवस्था मे ग्रसित पौधो की पत्तियॉ लम्बाई मे अन्दर की ओर सिकुड़कर मुड़ जाती है। जिसके फलस्वरूप पूरी पत्ती मुरझा जाती है, जो बाद मे सूख कर मर जाती है। कभी–कभी क्षतस्थल पत्तियों के बीच या मध्य शिरा के साथ–साथ पाये जाते है। ग्रसित भाग से जीवाणु युक्त श्राव बूंदों के रूप मे निकलता है। ये श्राव सूखकर कठोर हो जाते है। और हल्के पीले से नारंगी रंग की कणिकाएँ अथवा पपड़ी के रूप मे दिखाई देता है। आक्रांत भाग से जीवाणु का रिसाव होता है। यदि खेत मे पानी का जमाव हो तो धान की फसल से दूर से बदबू आती है। पर्णच्छद भी संक्रमित होता है, जिस पर लक्षण पत्तियों के समान ही होते है। रोग के उग्र अवस्था मे ग्रस्त पौधे पूर्ण रूप से मर जाते है।

रोग नियंत्रण

- एक ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन या 5 ग्राम एग्रीमाइसीन 100 को 45 लीटर पानी घोल कर बीज को बोने से पहले 12 घंटे तक डुबो लें।
- बुआई से पूर्व 0.05 प्रतिशत सेरेसान एवं 0.025 प्रतिशत स्ट्रेप्टोसाइक्लिन के घोल से उपचारित कर लगावें।
- बीजो को स्यूडोमोनास फ्लोरेसेन्स 10 ग्राम प्रति किलो ग्राम बीज की दर से उपचारित कर लगावें।
- खड़ी फसल मे रोग दिखने पर ब्लाइटाक्स–50 की 2.5 किलोग्राम एवं स्ट्रेप्टोसाइक्लिन की 50 ग्राम दवा 80–100 लीटर पानी मे मिलाकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।
- खड़ी फसल मे एग्रीमाइसीन 100 का 75 ग्राम और कॉपर आक्सीक्लोराइड (ब्लाइटाक्स) का 500 ग्राम 500 लीटर पानी मे घोलकार प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।
- संतुलित उर्वरको का प्रयोग करे, लक्षण प्रकट होने पर नत्रजन युक्त खाद का छिड़काव नहीं करना चाहिए।
- धान रोपने के समय पौधे के बीज

की दूरी 10–15 से.मी. अवश्य रखें।

- खेत से समय–समय पर पानी निकालते रहें तथा नाइट्रोजन का प्रयोग ज्यादा न करें।
- आक्रांत खेतों का पानी एक से दूसरें खेत मे न जाने दें।
- स्वस्थ प्रमाणित बीजों का व्यवहार करें।
- रोग रोधी किस्मों जैसे– आई. आर. –20, मंसूरी, प्रसाद, रामकृष्णा, रत्ना, साकेत–4, राजश्री और सत्यम आदि का चयन करें।

पत्रवरण गलन रोग/धड़गलन या तना सड़न रोग (शीथ रॉट)

तना तथा पत्तियों के आधार पर पानी की सतह के पास भूरे–काले रंग के धब्बें रोपाई के दो से तीन सप्ताह बाद दिखाई पड़ते है। सर्वप्रथम निकलते हुए बाली से सटे हुए ऊपरी आवरण शीथ पर जलधारित भूरे रंग के धब्बे बनते है। इस रोग के कारक स्कलेरोशियम औराईजी नामक फफूंद है। रोगी तनों को चीर कर देखने पर इसमे काले स्क्लेरोशियम दिखाई पड़ते है। इस रोग से ग्रसित पौधे से निकलती हुए बाली से सटे हुए ऊपरी आवरण शीर्ष पर अनियमित आकार के भूरे रंग के धब्बें बनते है। बाली निकलते ही सभी रोगी तने गिर पड़ते है। रोग के उग्रावस्था मे ये धब्बें काले रंग मे बदल जाते है। कभी–कभी धान की बालियाँ आवरण के अन्दर ही रह जाती है। भूरे धब्बों के रंग घूसर रंग मे बदलते ही प्रभावित भाग फूला नजर आता है। आक्रांत बालियों के दाने काले एवं खखड़ी हो जाते है। यह एक फफूंदजनित रोग है, और इसके आवरण के अन्दर फफूंद का सफेद जाल दिखाई पड़ता है। इस रोग के प्रभाव से मुख्यतः धान की पैदावार भी कम हो जाती है।

रोग नियंत्रण

- धान की फसल की कटाई के बाद रोगी पौधों के बचे हुए भाग को जलाकर नष्ट कर देना चाहिए, और गर्मी मे गहरी जुताई करनी चाहिए।
- धान रोपते समय 20×15 से.मी. में रोपनी करें।
- खड़ी फसल मे रोग दिखाई पड़ते ही कारबेन्डाजिम का 01 ग्राम प्रति लीटर पानी मे घोल बना कर छिड़काव करना चाहिए।
- बुआई से पहले बीज को कारबेन्डाजिम 1 ग्राम प्रति किलाग्राम बीज की दर से उपचारित करके बुआई करें।
- खेत मे से समय दर समय अतिरिक्त जल निकालते रहें।
- कैप्टान या सेरेसान वेट नामक दवा की 2.5 ग्राम मात्रा से प्रति किलोग्राम बीज को उपचारित कर लेना चाहिए।
- इण्डोफिल एम 45 की 2 किलोग्राम मात्रा को 1 लीटर तीसी के तेल के साथ 1000 लीटर पानी मे घोल बनाकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

समिटि समिटि जल भरहिं तलावा। जिमि सदगुन सज्जन पहिं आवा।

सरिता जल जलनिधि महुँ जाई। होइ अचल जिमि जिव हरि पाई।।

भावार्थः– *जल एकत्र हो–होकर तालाबों में भर रहा है, जैसे सद्गुण (एक–एककर) सज्जन के पास चले आते हैं। नदी का जल समुद्र में जाकर वैसे ही स्थिर हो जाता है, जैसे जीव श्री हरि को पाकर अचल (आवागमन से मुक्त) हो जाता है।*

बिबिध जंतु संकुल महि भ्राजा। प्रजा बाढ़ जिमि पाइ सुराजा।

जहँ तहँ रहे पथिक थकि नाना। जिमि इंद्रिय गन उपजें ग्याना।।

भावार्थः– *पृथ्वी अनेक तरह के जीवों से भरी हुई उसी तरह शोभायमान है, जैसे सुराज्य पाकर प्रजा की वृद्धि होती है। जहाँ–तहाँ अनेक पथिक थककर ठहरे हुए हैं, जैसे ज्ञान उत्पन्न होने पर इंद्रियाँ (शिथिल होकर विषयों की ओर जाना छोड़ देती हैं)।*

स्रोत : रामायण किसकिन्धा काण्ड

पौधा किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 2001 में कृषकों के अधिकार

अर्चना सिरारी, प्रवीण कुमार सिंह एवं जे. सिंह

डी.यू.एस. परीक्षण केंद्र (गन्ना), भारतीय गन्ना अनुसंधन संस्थान, लखनऊ

पादप आनुवंशिक संसाधनों के संरक्षण, उनमें सुधार तथा नयी किस्मों के विकास हेतु इन संसाधनों को उपलब्ध कराने में कृषकों की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका रही है। अतः उनके योगदान को मान्यता प्रदान करने के लिए तथा पौधों की विभिन्न किस्मों को संरक्षित करने व कृषकों एवं प्रजनकों के अधिकारों की सुरक्षा के उद्देश्य से एक स्वनिर्मित प्रणाली के अंतर्गत भारत सरकार ने पौधा किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 2001 लागू किया।

इस अधिनियम में कृषकों को पौधा किस्मों के विकास से संबंधित किए गए कार्यों में दिये गए उनके योगदान के लिए मान्यता प्रदान की गयी है तथा उनके अधिकारों का संरक्षण किया गया है।

इस अधिनियम में कृषक को एक ऐसे व्यक्ति के रूप में परिभाषित किया गया है जो स्वयं खेत जोतकर फसलें उगाता है या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा खेत में फसलें लगाता है तथा प्रत्यक्ष रूप से उसकी निगरानी करता है या संयुक्त रूप से किसी अन्य व्यक्ति के साथ किसी वन्य प्रजाति या परंपरागत किस्म के उपयोगी गुणों को चयनित करके उनकी पहचान कर वन्य प्रजातियों का मूल्य प्रवर्धन करता है।

कृषक अधिकारों के अंतर्गत कृषक प्रजनक की भांति ही उसके द्वारा प्रजनित या विकसित नयी किस्म को कृषक किस्म के रूप में संरक्षित करवा सकते हैं।

अधिनियम में कृषक किस्म कोई भी वह किस्म है जो कृषकों द्वारा अपने खेत में परंपरागत रूप से उगाई व विकसित की गयी हो या ऐसी वन्य संबंधी या भू प्रजाति या किस्म जो कृषकों की सामान्य जानकारी में हो।

जो कृषक या कृषकों के समुदाय आर्थिक रूप से उपयोगी पौधों की भू प्रजातियों और उनके वन्य संबंधियों के आनुवंशिक संसाधनों को संरक्षित करते हैं उन्हें नियमानुसार निर्धारित तरीके से जीन निधि से पुरस्कृत किए जाने का प्रावधान है बशर्ते कि चयनित व संरक्षित सामग्री का उपयोग इस अधिनियम के अंतर्गत पंजीकरण योग्य किस्मों में दाता जीन के रूप में किया गया हो।

इस अधिनियम में कृषक को सुरक्षित किस्म के बीज के साथ साथ प्रक्षेत्र की उपज व किस्म के बीज बचाने, उपयोग करने, बोने, पुनः बोने, आदान–प्रदान करने तथा भागीदारी करने के अधिकार प्राप्त हैं जैसे कि उसे अधिनियम के लागू होने के पूर्व प्राप्त थे परंतु कृषक को सुरक्षित किस्म के ब्रांडेड (व्यवसायिक) बीज के विक्रय की अनुमति नहीं है।

यदि प्रजनक द्वारा कृषकों को उपलब्ध कराई गयी कोई पंजीकृत किस्म प्रजनक द्वारा उल्लेखित विशेषताओं के अनुरूप सफल प्रदर्शन नहीं करती, तो इस स्थिति में कृषक या कृषक समूह या कृषकों के संगठन प्राधिकरण के समक्ष निर्धारित तरीके से क्षतिपूर्ति के लिए दावा कर सकते हैं। प्राधिकरण पौध किस्म के प्रजनक को सूचित करके, निर्धारित तरीके से प्रतिवाद प्रस्तुत करने का अवसर देने के उपरांत तथा दोनों पक्षों को सुनने के पश्चात प्रजनक को कृषक या कृषक समूह व संगठन को क्षतिपूर्ति हेतु आवश्यक राशि देने के लिए निर्देशित कर सकता है।

लाभ में भागीदारी भी कृषक अधिकारों का एक महत्वपूर्ण अंश है। अधिनियम के अंर्तगत कोई व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह या भारत में गठित या स्थापित फर्म या सरकारी अथवा गैर सरकारी संगठन लाभ में भागीदारी के लिए अपने दावे प्रस्तुत कर सकते हैं। पौधा किस्म के विकास में प्रयुक्त आनुवंशिक सामग्री की उपयोगिता व उसकी व्यापकता तथा साथ ही किस्म की वाणिज्यिक उपयोगिता या बाजार में उसकी मांग के अनुरूप, प्रजनक द्वारा धनराशि, जीन निधि में दी जाती है जिसे संबन्धित दावेदार को उपलब्ध करवाया जाता है।

कृषक द्वारा अधिनियम के अंतर्गत दिये गए किसी अधिकार का उल्लंघन होने पर उसे दंड का भागीदार नहीं माना जाएगा यदि उल्लंघन के समय ऐसे किसी अधिकार की जानकारी उसे नहीं थी। अपनी किस्म के पंजीकरण के लिए किसी प्रकार के शुल्क से कृषक को पूर्णतया मुक्त रखा गया है।

केन्द्रीय सरकार द्वारा गठित राष्ट्रीय जीन निधि में निम्न स्रोतों द्वारा धन प्राप्ति होती है–

- किस्म के प्रजनक अथवा अनिवार्य रूप से व्युत्पन्न किस्म जो कि इस अधिनियम में पंजीकृत है अथवा उक्त किस्म की रोपण सामग्री अथवा अनिवार्य रूप से व्युत्पन्न

किस्म से निर्धारित तरीके से प्राप्त लाभ की भागीदारी से।

- अधिनियम के अंतर्गत पंजीकरण के वार्षिक शुल्क की रॉयल्टी के रूप में।
- अधिनियम के अंतर्गत जीन निधि में जमा कराई क्षतिपूर्ति।
- राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय व अन्य स्रोत से प्राप्त अंशदान।

जीन निधि का उपयोग प्राधिकरण नयी और अनिवार्य रूप से व्युत्पन्न किस्म के क्रमिक विकास में प्रयोग होने वाली आनुवंशिक सामग्री के लिए आवश्यक क्षतिपूर्ति, लाभ में भागीदारी के लिए संबन्धित योजना बनाने और आनुवंशिक सामग्री के संरक्षण में होने वाले व्यय को वहन करने में तथा कृषकों, कृषक समूहों विशेषकर जन जातीय और ग्रामीण समुदाय जो विशेष रूप से पहचाने गए कृषि–जैव–विविधता के क्षेत्र (हॉट–स्पॉट), आर्थिक महत्व के पौधों और उनके वन्य संबंधियों के संरक्षण व सुधार में संलग्न है की मदद, पुरस्कार प्रदान करने इत्यादि में किया जाता है। पीपीवी और एफआर अधिनियम, 2001 एकमात्र ऐसा अधिनियम है जिसमें कृषक के अधिकारों के संरक्षण को प्राथमिकता दी गयी है तथा उन्हें प्रजनक के समकक्ष रखा गया है। उपरोक्त अधिनियम के फलस्वरूप ही पौधा किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण प्राधिकरण ने कृषक किस्म के अंतर्गत किस्मों के पंजीकरण हेतु आवेदन प्राप्त किए हैं। प्राधिकरण ने पौधा किस्म जीनोम उद्धारक समुदाय अभिज्ञान पुरस्कार से भी अनेक कृषक समूहों को पुरस्कृत किया है।

इस विशाल देश के हर भाग में शिक्षित–अशिक्षित, नागरिक और ग्रामीण सभी हिंदी को समझते हैं।

राहुल सांकृत्यायन

बिना मातृभाषा की उन्नति के देश का गौरव कदापि वृद्धि को प्राप्त नहीं हो सकता।

गोविंद शास्त्री दुगवेकर

भारत में लाख उत्पादन : वस्तुस्थिति, समस्यायें एवं निदान

गोविन्द पाल[1], आर.के. सिंह[2] एवं आर.के. योगी[2]

[1]बीज अनुसंधान निदेशालय, मऊ

[2]भारतीय प्राकृतिक राल एवं गोंद संस्थान, राँची

लाख एक प्राकृतिक एवं अहानिकारक राल (रेजिन) है जो कि लाख कीट *केरिया लैक्का* (केर) का दैहिक श्राव हैं। लाख कीट की बीस प्रजातियॉ भारतवर्ष में पाई जाती है, जिनमें से तीन मुख्यतः लाख उत्पादन में प्रयुक्त होती है जो क्रमशः *केरिया लक्का, केरिया चाइनेन्सिस* एवं *केरिया शारदा* है परन्तु *केरिया लक्का* की दो उपप्रजातियॉ ही लाख उत्पादन में विशेष योगदान देती है जिन्हें हम रंगीनी एवं कुसुमी लाख कहते है। रंगीनी लाख की साल में दो फसल क्रमशः कतकी एवं बैशाखी तथा कुसमी की भी दो फसल क्रमशः अगहनी एवं जेठवी पैदा होती है।

लाख कीट विभिन्न प्रकार के लाख पोषक वृक्षों की मुलायम टहनियों पर बैठते है व उनसे पोषण प्राप्त कर लाख का स्राव करते हैं। लाख पोषक वृक्षों में प्रमुख– पलास (*ब्युटिया मोनोस्पर्मा*), कुसुम (*श्लिचेरा ओलिओसा*) व बेर (*जिजिफस मौरिसियाना*) हैं। पलास पर रंगीनी, कुसुम पर कुसमी तथा बेर पर रंगीनी एवं कुसमी दोनो तरह की लाख पैदा की जाती है। लाख व्यावसायिक दृष्टिकोण से तीन महत्वपूर्ण उत्पादकों का जनक है जो कि क्रमशः राल, रंग एवं मोम है। लाख रेजिन बाजार में व्यावसायिक रूप से चपड़ा, चौरी एवं बटन लाख के रूप में पाया जाता है। लाख के मूल्य वर्धित उत्पादों में प्रमुख– ब्लीच लाख, मोम रहित लाख, एल्यूरिटिक अम्ल, गास्केट लाखा व आइसोइम्ब्रेटेलाइट हैं। लाख का बहुत सारे क्षेत्रों यथा– खाद्य, वार्निश, पेन्ट, छपाई की स्याही, औषधि, चमड़ा, सौंदर्य उत्पाद, विद्युत, ऑटोमाबाइल उद्योग, रक्षा, रेलवे एवं डाक विभागों में बहुआयामी प्रयोग है।

भारत विश्व में लाख का प्रमुख उत्पादक देश है व देश में लाख की खेती मुख्यतः झारखण्ड, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, प. बंगाल, उड़ीसा, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, गुजरात एवं पूर्वोत्तर राज्यों के कुछ भागों में की जाती है। वन एवं वनों के आस–पास के निवासियों के जीविकोपार्जन में लाख एक महत्वपूर्ण आय का स्रोत है साथ ही लाख उत्पादन से वन एवं वनों के आस–पास रहने वाले पुरुषों एवं स्त्रियों के लिए रोजगार की अपार संभावनाएँ हैं। लाख एक लाभकारी फसल है जिससे किसानों को उच्च आर्थिक लाभ प्राप्त होता है एवं देश को इसके निर्यात द्वारा विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है। वर्ष 2010–11 में लाख व लाख आधारित मूल्यवर्धित उत्पादों के निर्यात द्वारा भारत को रू. 211 करोड़ प्राप्त हुआ था।

भारत में राज्यवार लाख उत्पादन व प्रमुख लाख उत्पादक जिले

राज्य का नाम	वर्ष 2011–12 में लाख उत्पादन (टन)	प्रमुख उत्पादक जिले
आन्ध्र प्रदेश	120	अदीलाबाद, विशाखापत्तनम्
आसाम	100	कार्बी–आन्गलांग
छत्तीसगढ़	3,200	बस्तर, बिलासपुर, धमतरी, दुर्ग, जॉजगीर–चाम्पॉ, काकेर, कोरबा, महासमुन्द, रायपुर, राजनांन्दगॉव, रायगढ़, सरगुजा
गुजरात	35	पंचमहल, वड़ोदरा
झारखण्ड	10,240	गढ़वा, गुमला, लातेहार, पलामू, रॉची, खूँटी, सिमडेगा, पश्चिमी सिंहभूम
मध्यप्रदेश	1,300	अनूपपुर, बालाघाट, छिन्दवाड़ा, डिड़ोरी, होशंगाबाद, मंडला, नरसिंहपुर, सिवनी, शहडोल
महाराष्ट्र	950	भन्डारा, चन्द्रपुर, गढ़चिरोली, गोंदिया
मेघालय	05	गारो हिल्स
ओड़िशा	350	बालासोर, क्योझर, कोरापुट, मयूरभंज, नवरंगपुर, सुन्दरगढ़
उत्तर प्रदेश	200	सोनभद्र, इलाहाबाद
पश्चिम बंगाल	1,400	बांकुड़ा, मिदनापुर, पुरूलिया

भारत में लाख क्षेत्र का सामर्थ्य

- लाख खेती के लिए अनुकूल कृषि–जलवायु
- अत्यधिक संख्या में पलास, बेर व कुसुम आदि लाख परिपालक पौधों/वृक्षों की उपलब्धता
- लाख उत्पादन की पारम्परिक

जानकारी एवं दक्षता

- लाख की वैज्ञानिक खेती हेतु प्रशिक्षित किसानों की उपलब्धता
- स्थापित लाख प्रसंस्करण उद्योग
- लाख विकास एवं विपणन के लिए वन विभाग, *ट्राईफेड*, राज्य सहकारी विभाग, कृषि विज्ञान केन्द्र, जिला पंचायत, कृषि विश्वविद्यालय, भारतीय प्राकृतिक राल एवं गोंद संस्थान, वन उत्पादकता संस्थान आदि द्वारा अनुकूल आधारभूत संरचना

भारत में लाख उत्पादन की मुख्य समस्याएँ

- लाख विकास के लिए नोडल एजेंसी का न होना
- बीहनलाख (बीज) की कमी व बीहनलाख का विपणन
- लाख उत्पादको के पास आगत (इनपुट) खरीदने के लिए संसाधनों की कमी
- लाख पोषक वृक्षों का घर से दूरी पर स्थित होना, लाख पोषक वृक्षों का बिखरा होना व लाख का चोरी हो जाना
- कई क्षेत्रों में वैज्ञानिक विधि से लाख की खेती की जानकारी का अभाव व उत्पादन की अनिश्चितता
- वृक्षों का अधिक ऊँचा होने के कारण खेती में कठिनाई
- लाख विकास से सम्बन्धित संस्थाओ में समन्वय की कमी
- लाख उत्पादन क्षेत्रों में सम्बन्धित आगतों का नजदीक के बाजार में उपलब्ध न होना
- लाख के वर्तमान मूल्य की जानकारी का अभाव

भारत में लाख विकास के उपाय

- लाख विकास से सम्बन्धित नोडल एजेंसी को नामित करना
- किसानों को वैज्ञानिक विधि से लाख की खेती की जानकारी उपलब्ध कराकर व प्रशिक्षित करके बीहनलाख की समस्या व उत्पादन में अनिश्चितता को दूर किया जा सकता है
- लाख उत्पादकों का स्वयं सहायता समूह बनाना, जो कि उनकी सम्मिलित आवश्यकताओं को पूरा करे। यह समूह बीहनलाख व लाख के विपणन, चोरी की समस्या को रोकने, लाख के वर्तमान मूल्य की जानकारी सबको देने एवं लाख खेती में प्रयोग किये जाने वाले आगतों एवं मशीन की उपलब्धता में सहायता कर सकता है
- लाख के विपणन एवं आगतों की उपलब्धता के लिए सहकारी संस्थाओं को सशक्त करना
- उचित कीमत पर लाख के खरीद को सुनिश्चित कर लाख उत्पादकों को लाख की खेती के लिए प्रोत्साहित करना
- लाख उत्पादन में फसल बीमा की शुरुआत करना
- प्रमुख लाख उत्पादक क्षेत्रों में बीहनलाख उत्पादन केन्द्रों की स्थापना
- लाख पोषक वृक्षों के बागान की स्थापना व उस पर लाख उत्पादन
- ग्राम स्तर पर प्राथमिक लाख प्रसंस्करण इकाइयों की स्थापना
- लाख उत्पादित क्षेत्रों के कृषि विज्ञान केन्द्रों के विषय विशेषज्ञों को लाख उत्पादन एवं प्रसंस्करण पर प्रशिक्षण प्रदान करना
- भारत में पैदा होने वाली कुसुमी लाख की गुणवत्ता विश्व में सर्वोच्च है अतः किसानों को कुसुमी लाख उत्पादित करने के लिए प्रेरित करना

वर्तमान में किसानों के पास उपलब्ध लाख पोषक वृक्षों का लाख की खेती के लिए प्रयोग बहुत कम हो रहा है व वन भूमि में उपलब्ध लाख पोषक वृक्षों का प्रयोग नगण्य है। वैज्ञानिक विधि से लाख की खेती कर एवं लाख पोषक वृक्षों के उपयोग को बढ़ाकर लाख उत्पादन में आशातीत वृद्धि की जा सकती है। लाख उत्पादित क्षेत्रों के किसानों की आर्थिक दशा सुधारने में लाख एक महत्वपूर्ण कारक सिद्ध हो सकता है। कई नये क्षेत्रों में लाख का उपयोग बढ़ा है जिससे उसकी मांग भी बढ़ी है। भारतीय लाख की गुणवत्ता के कारण विदेशों में इसकी मांग अधिक है। लाख की उचित कीमत को सुनिश्चित कर किसानों को इसकी खेती के लिए प्रेरित किया जा सकता है, जिससे लाख उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है।

भारतीय परिदृश्य में बौद्धिक सम्पदा अधिकार

मोहम्मद अशफाक, ब्रह्म प्रकाश एवं अश्विनी कुमार शर्मा

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

न्यायिक शब्दावली के अनुसार सम्पदा किसी व्यक्ति को उस पर सम्पूर्ण अधिकार, जैसे ऋण करने, प्रयोग करने, वितरित करने, किसी अन्य को उसके प्रयोग से रोकने जैसे अनेक अधिकार प्रदान करती है। इसके साथ ही साथ, सम्पदा को किसी एक व्यक्ति या समूह को अधिकृत किया जा सकता है। इसी प्रकार, बौद्धिकसम्पदा, किसी व्यक्ति द्वारा अपनी बौद्धिकता के प्रयोग से बनायी गई किसी वस्तु पर विशेष अधिकार प्रदत्त करती है। परन्तु, यह अधिकार सीमित समय के लिए ही होता है। भारत में बौद्धिक सम्पदा अधिकार के क्षेत्र में पहला कानून सन् 1884 में द इण्डियन ट्रेड एंड मर्चेन्डाइस अधिनियम के नाम से बना। भारतीय पेटेन्ट अधिनियम सन् 1886 में बना जो बाद में संशोधित होकर भारतीय पेटेन्ट एवं डिजाइन अधिनियम, 1911 तथा भारतीय कॉपीराइट अधिनियम, 1919 के रूप में निमित किया गया। आजकल जिन कानूनों के आधार पर भारत में बौद्धिक सम्पदा को सुरक्षित रखा जाता है वो निम्नवत् हैं :–

पेटेन्ट

पेटेन्ट, अविष्कारों के लिए प्रदत्त एक बौद्धिक सम्पदा अधिकार है। यह अधिकार सरकार द्वारा पेटेन्ट प्राप्त व्यक्ति को अपने आविष्कार के पूर्ण खुलासे के बदले में सीमित समय के लिए प्रदान किया जाता है। इस अवधि में कोई अन्य व्यक्ति उस पेटेन्ट किए उत्पाद अथवा प्रक्रिया को बनाने, बेचने या निर्यात करने से वंचित रहता है। इस प्रक्रिया का मुख्य उद्देश्य आविष्कार को बढ़ावा देना हैं जिससे विभिन्न उद्योगों में तकनीकी विकास तथा तकनीकों के हस्तांतरण में मदद मिलेगी। प्रदत्त पेटेन्ट किसी व्यक्ति, समूह अथवा कम्पनी को आर्थिक रूप से बढ़ाने में सहायक सिद्ध होते हैं। भारतीय पेटेन्ट अधिनियम, 1970 पिछले कुछ दशकों में प्रभावी रूप से कार्यरत है। इस अधिनियम को 20 अप्रैल, 1972 में लागू किया गया था। यह अधिनियम अपने पुराने भारतीय पेटेन्ट एवं डिजाइन अधिनियम, 1922 से कई मायनों में भिन्न है। इन अधिनियमों में रासायनिक, औषधीय, कृषि रसायन तथा खाद्य विषयों में किए गए अविष्कारों को भी शामिल किया गया है। यह अधिनियम पेटेन्ट

बौद्धिक सम्पदा	बौद्धिक सम्पदा का प्रकार	सुरक्षा का सामान्य समय	अधिनियम
नवीनतम् उत्पाद व प्रक्रिया	पेटेण्ट	आवेदन से 20 वर्ष तक	भारतीय पेटेण्ट अधिनियम, 1970
सांस्कृतिक, कलात्मक एवं साहित्यिक कार्य	कॉपीराइट	लेखक का जीवन काल. 60 वर्ष	कॉपीराइट अधिनियम, 1957
भिन्नात्मक चिन्ह अथवा नाम	ट्रेडमार्क	10 वर्ष के लिए तथा इसके उपरान्त शुल्क आदयगी के बाद नवीनीकरण	भारतीय ट्रेडमार्क अधिनियम, 1999
रचनात्मक डिजाइन	डिजाइन	10 वर्ष (45 वर्ष के लिए नवीनीकरण, शुल्क अदायगी के बाद)	भारतीय डिजाइन अधिनियम, 2000
नवीन सेमी कण्डक्टर आई.सी. ले आउट, डिजाइन	आई.सी. के ले आउट डिजाइन,	10 वर्ष	सेमी कण्डक्टर इंटीग्रेटेड सर्किट लेआउट डिजाइन अधिनियम, 2000
भौगोलिक स्थिति के कारण किसी वस्तु व उत्पाद में विशिष्ट गुण	भौगोलिक संकेतक	10 वर्ष (अनिश्चित समय के लिए नवीनीकरण शुल्क अदायगी के बाद)	वस्तुओं का भौगोलिक संकेतक पंजीकरण एवं संरक्षण अधिनियम, 1999
विभिन्न श्रेणियों की पादप किस्में	पादप किस्में का पंजीकरण	पेड़ों एवं लताओं की किस्मों के किए 18 वर्ष; अन्य पौधों की किस्मों के लिए 15 वर्ष	पादप किस्म एवं कृषक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 2001

प्राप्तकर्ता को अपने आविष्कार पर अधिकार सुरक्षित रखने के लिए 20 वर्ष प्रदान करता है।

कॉपीराइट

बर्ने सम्मेलन के अनुसार भारतीय कॉपीराइट अधिनियम 1957 किसी भी प्रकार की पुस्तक, रचना, कृति, नाटक, मंचन, रेडियो कृति और फिल्म निर्माण जैसे अनेक कलाओं को उनकी रचनाओं और मौलिकता को पुरस्कृत करने का माध्यम है। इस अधिनियम के अंतर्गत किसी कम्प्यूटर प्रोग्राम को भी सुरक्षित किया जा सकता है। इसके अंतर्गत रचनाएं अथवा कृतियाँ लेखक या रचनाकार की मृत्यु के 60 वर्ष पश्चात् तक सुरक्षित रहती हैं। इस अधिनियम में कलाकारों के भी अधिकार सुरक्षित रखे गये हैं। किसी ध्वनि अभिलेखन या रिकार्डिंग के कॉपीराइट मालिक को यह अधिकार है कि आगामी 50 वर्षों तक उसकी कोई नकल नहीं कर सकता है। भारत मात्र बर्ने सम्मेलन का ही नहीं अपितु जेनेवा सम्मेलन तथा रोम सम्मेलन का भी हस्ताक्षरी है। उपरोक्त तीनों सम्मेलनों के परिणामों को पूरी तरह से देश में लागू किया जा रहा है। इसी कारण भारतीय कॉपीराइट अधिनियम में समय–समय पर संशोधन किए जाते रहे हैं। सन् 1995 में हुए संशोधन में उपग्रह प्रसारण, कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर तथा डिजिटल तकनीक से जुड़े अधिकारों को भी सुरक्षित किया गया है। इस अधिनियम को प्रभावी बनाने के लिए कॉपीराइट प्रवर्तन सलाहकार परिषद का गठन किया गया है। कॉपीराइट उल्लंघन मामलों की सुनवाई के लिए विशिष्ट नीति प्रकोष्ठ का भी गठन हो चुका है।

ट्रेडमार्क या व्यावसायिक चिन्ह

ट्रेडमार्क किसी व्यवसाय के वे प्रतीक चिन्ह होते हैं जिनसे एक उपक्रम की वस्तुओं या सेवाओं तथा दूसरे उपक्रम के उत्पाद या सेवाओं में भेद किया जा सके। इस प्रकार के विशिष्ट चिन्ह सुरक्षित किए जाने योग्य विषय वस्तु हैं। प्रारम्भिक पंजीकरण 10 वर्ष के लिए तथा शुल्क अदायगी के बाद नवीनीकरण जो कि कम से कम 7 वर्ष के लिए होता है। यह नवीनीकरण अनिश्चितकाल तक सम्भव है। व्यापार के निशान के अनिवार्य लाइसें स की अनुमति नहीं है। व्यापारप्रणाली में हो रहे बदलाव, भौगोलीकरण तथा ट्रेडमार्क के पंजीकरण की प्रक्रिया को आसान बनाने को दृष्टि में रखते हुए व्यापार और वाणिज्य वस्तु चिन्ह अधिनियम, 1958 में आमूल–चूल परिवर्तन किया गया। नया अधिनियम जिसे भारतीय ट्रेडमार्क अधिनियम, 1999 के नाम से जाना जाता है, वैश्विक प्रणालियों एवं प्रथाओं के अनुरूप है। यह अधिनियम ट्रिप्स के अनुरूप बनाया गया है।

भौगोलिक संकेतक

भौगोलिक संकेतक, औद्योगिक सम्पत्ति का वह पहलू है, जिसमें किसी उत्पाद को किसी देश अथवा स्थान से विज्ञापित किया जाता है। दिए गए उत्पाद में उस जगह के कारण एक प्रतिष्ठा तथा गुण होना आवश्यक है। समयान्तराल पर उस स्थान से ही उत्पाद की पहचान बन जाती है। जैसे– बनारसी साड़ी या दार्जिलिंग की चाय। यदि उत्पाद किसी अन्य जगह बनाया गया तथा उसमें वो गुण भी नहीं है तो यह उपभोक्ता को गलत संदेश देगा तथा अनुचित प्रतियोगिता को बढ़ावा देगा।

औद्योगिक डिजाइन या बनावट

औद्योगिक डिजाइन या बनावट किसी वस्तु विशेष या उत्पाद की बाहरी सजावट या सौंदर्य है। यह त्रिआयामी जैसे आकार अथवा द्वि–आयामी जैसे लाइनें, रंग या उनका पैटर्न हो सकता है। औद्योगिक डिजाइन कई वस्तुओं पर लागू हो सकता है जैसे – हस्तकला, घड़ियाँ, आभूषण, मशीनें, बोतल, चादर, खिलौने, बिजली के उपकरण, फर्नीचर इत्यादि। भारतीय डिजाइन अधिनियम, 2000 मई 11, 2001 से लागू है तथा डिजाइन अधिनियम, 1911 का वृहद स्वरूप है।

इंटीग्रेटेड सर्किट के लेआउट डिजाइन

एक लेआउट डिजाइन (स्थलाकृति) वह त्रिआयामी विन्यास है जिसमें तत्वों के (कम से कम एक सक्रिय तत्व) एकीकृत सर्किट के अन्तर सम्बंधों से एकीकृत परिपथ बनाया गया हो और जिसे निर्माण के लिए तैयार किया गया हो। इस अधिनियम में उन लेआउट डिजाइनों को सुरक्षा प्रदान की जाती है जो मौलिक रूप से नवीन कृति हों तथा ले–आउट डिजाइन निर्माताओं के लिए सामान्य न हों। इस अधिकार के अंतर्गत ले–आउट डिजाइन के निर्माण, आयात, बिक्री और अन्य वाणिज्य प्रयोजनों के अधिकार शामिल है।

पादप किस्मों का पंजीकरण

पौधा किस्मों का पंजीकरण एक प्रकार का बौद्धिक सम्पदा अधिकार है। इस अधिनियम के तहत कृषकों या प्रजनकों की उपलब्धियों को स्वीकार कर, सीमित समय के लिए विशेषाधिकार प्रदान किया जाता है। इसके अंतर्गत सुरक्षा प्राप्त करने के लिए पौधा किस्मों को कुछ विशिष्ट मानदण्डों को पूरा करना आवश्यक है।

ग्रीष्म ऋतु की गहरी जुताई : काम एक लाभ अनेक

अजीत सिंह, जगन्नाथ पाठक एवं भूपेन्द्र सिंह

कृषि विज्ञान केन्द्र, बुरहानपुर (म.प्र.)

पौधों की वृद्वि से संबधित मृदा की उत्तम भौतिक अवस्था को टिल्थ कहते हैं। इसके लिए आवश्यक भूमि अवस्था में मृदा–नमी, वायुसंचार, उचित जल निकास, मृदा ताप, भूमि संरचना, जलधारण क्षमता, अंतःश्रवण आदि प्रभावित करने वाले उपघटकों को उचित रूप से संतुलित करना आवश्यक होता है। भूमि का पौधे के स्वभाव के अनुसार आवश्यक रूप से ढीली एवं भुरभुरी होना आवश्यक है, जिससे जड़ें भूमि मे सुगमतापूर्वक प्रवेश कर सकें तथा वृद्धि के लिए आवश्यक पोषक तत्वों को भूमि से प्राप्त कर सकें, इस उददेश्य से मिटट्ी को पौधों की वृद्धि के अनुकूल बनाने के लिए कर्षण क्रियायें करते हैं।

गर्मी की गहरी जुताई

रबी फसल कटने के बाद अप्रैल–मई में मिटट्ी पलट या तवेदार हल से 20 सेमी से अधिक गहरी जुताई करके धूप में खेत सूखा पड़ा रहने को गर्मी की गहरी जुताई कहते हैं।

उदेद्श्य

- गर्मी की गहरी जुताई का उद्देश्य खेत में उगे खरपतवारों को नष्ट करना, खेत से फसलों के कीटों तथा रोगजनक जीवाणुओं को नष्ट करना, कीटों तथा रोगजनक जीवाणुओं को भूमि के भीतर दबाना अथवा ऊपर लाकर तेज धूप से नष्ट करना, मृदा मे अतःश्रवण को वृद्धि करने तथा अपवाह और मृदा कटाव की रोकथाम करना होता है, इसके अलावा भूमि में लाभदायक जीवाणुओं की क्रियाशीलता में वृद्धि होती है, एवं निमेटोड की संख्या में कमी होती है।
- मृदा की संरचना में सुधार होता है एवं गहरी जुताई करने में ऊपर की मिटट्ी नीचे और नीचे की मिटट्ी ऊपर आ जाने से मिटट्ी के साथ–साथ उपलब्ध सूक्ष्म पोषक तत्व भी ऊपर आ जाते है तथा मिटट्ी की ऊपरी परत पर इकट्ठे हयूमस यानी उच्च पोषकता वाले कार्बनिक तत्व नीचे चले जाते है, इससे हमारे खेतों की मिटट्ी अच्छी तरह मिल जाती है तथा खेत की उर्वरा शक्ति बढ़ जाती है। मिटट्ी भुरभुरी हो जाती है, परिणाम स्वरूप जल धारण क्षमता बढ़ जाती है।
- इन सब लाभों के अलावा फसल अवशेष जुताई के पश्चात् काफी नीचे चले जाते है और नमी पाकर सड़–गल कर कार्बनिक खाद बनाते है।

जुताई का समय

रबी फसलों (गेहूँ, दलहन) एवं कपास की कटाई लगभग 20 अप्रैल तक समाप्त हो जाती है इन फसलों की कटाई के पश्चात् भूमि में जो नमी रहती है उसका उपयोग करते हुए गहरी जुताई करते है, इसके लिए मिटट्ी पलट (मोल्ड बोर्ड) या तवेदार हल (डिस्क हल) से 20 सेमी तक की गहरी जुताई हो जाती है, मिटट्ी पलटने वाले अन्य हलो में यू.पी. न. 2 हल, विक्ट्री हल और पंजाब हल भी आते हैं। चिलजर से 35–40 सेमी तक गहरी जुताई हो सकती है।

गहरी जुताई एवं प्रभाव

अप्रैल प्रथम सप्ताह से 10 मई तक गहरी जुताई करके खेत को छोड़ देने पर अत्यधिक धूप एवं सीधे तापमान के कारण बीमारी जनकों, कीड़े–मकोड़ो तथा, खरपतवारों को नष्ट करने में सहायता मिलती है। भूमि मे सघनता के कारण जो वायु और जल की पतली कोशिकायें दब जाती है उन्हें फिर से अपनी मूल स्थिति में आने का अवसर मिलता है, भूमि दबाव मुक्त हो जाती है, उसमें पौधों की वृद्धि से संबंधित मृदा की उत्तम भौतिक अवस्था आ जाती है।

मृदा संरचना का खराब होना

परीक्षणों के आधार पर देखा गया है कि अधिक समय तक एक ही तल पर लगातार जुताई से मृदा की संरचना छिन्न–भिन्न हो जाती है, परिणामस्वरूप जीवांश पदार्थ का ऑक्सीकरण तीव्र गति से होने लगता है, भारी कृषि यंत्रों के निरंतर प्रयोग से मृदा में स्थित एग्रीगेट विखंडित होने लगता है, इससे मृदा में हल स्तर से नीचे कठोर परत का निर्माण हो जाता है। यह समस्त प्रकार की भौतिक अवस्था को प्रभावित करने वाले घटकों को बिगाड़ने का कार्य करती है भौतिक अवस्था के खराब हो जाने के कारण मुख्य रूप से जल तथा वायु संचार अवरूद्ध हो जाता है तब जीवांश–पदार्थ का अवायुवीय अपघटन होने लगता है इस वजह से अनेक प्रकार के विषैले पदार्थ उत्पन्न होते हैं, कार्बन डाईडॉक्साइड बनती है, व पौधों के लिए फास्फोरस की उपलब्धता कम हो जाती है, कुछ भूमियों में इस स्थिति में कैल्सियम

तथा पोटाश की उपलब्धता भी कम हो जाती है।

ग्रीष्म ऋतु में गहरी जुताई के लाभ

गर्मी में गहरी जुताई से भूमि की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक स्थितियों पर लाभकारी प्रभाव होता है

भौतिक लाभ

- मिट्टी एक निश्चित गहराई तक भुरभुरी और ढीली हो जाती है, इससे बीजों की बुवाई की जा सकती है, अंकुरण के लिए उपयुक्त स्थिति बनती है।
- भूमि की जलशोषण शक्ति बढ़ती है। इससे भूमि द्वारा अधिक मात्रा में वर्षा के जल का अवशोषण होता है, सिंचाई की जरूरत भी कम पड़ती है इस प्रकार सिंचाई अथवा वर्षा के रूप में जल को सुरक्षित रखकर उसे पौधो को प्रदान करने की शक्ति में वृद्धि होती है।
- भूमि में अंतःश्रवण की वृद्धि होती है और नमी का संरक्षण होता है।
- मृदा की संरचना में सुधार होता है। जीवांश पदार्थ अच्छी प्रकार भूमि में मिल जाते है। और उनका विघटन अच्छी प्रकार हो पाता है।
- मृदा ताप तथा वायु संचार फसलों की वृद्धि के अनुकूल नियंत्रित हो जाता है।
- मृदा की संरघ्रता में वृद्धि होती है।

रासायनिक लाभ

- मृदा अपक्षय में वृद्धि होती है तथा समस्याग्रस्त भूमि का सुधार होता है।
- जीवांश पदार्थ के विघटन तथा यौगिकीकरण द्वारा पौधों के पोषक तत्वों की उपलब्धता में वृद्धि होती है।
- रासायनिक परिवर्तन, फसल अवशेष तथा रसायन के प्रयोग के कारण उत्पन्न विषाक्त प्रभाव को समाप्त करता है।

जैविक लाभ

- खरपतवारों के बीज भूमि के नीचे दब जाते है, उचित वातावरण नहीं मिल पाने से उनका अंकुरण रूक जाता है तथा अवांछित रूप से उगे पौधे नष्ट हो जाते हैं।
- भूमि में लाभदायक जीवांणुओं की क्रियाशीलता में वृद्धि होती है एवं निमैटोड की संख्या कम हो जाती है।

गर्मी की अच्छी जुताई के गुण

- भूमि में बिना जुता स्थान नहीं होना चाहिए।
- खरपतवार के सूखे पौधे तथा फसल अवशेष को भूमि में दबा देना चाहिए।
- जुताई के समय भूमि में इतने बड़े ढेले नहीं बनने चाहिए जिन्हें तोड़ने में कठिनाई हो।
- जुताई सर्वत्र समान गहराई पर की जानी चाहिए।
- मृत कूड़े स्पष्ट और खुली होनी चाहिए इससे कीड़े–मकोड़े, रोगजनक विषाणु तथा खरपतवार वायुमंडल में खुलकर नष्ट हो जायें।
- खेत के कोनों, जहाँ कृषि यंत्रों को मुड़ना पड़ता है पर मिटट्ी के इकट्ठे हो जाने के कारण कोई स्थान बिना जुता नहीं छूटना चाहिए।
- अच्छे जुते हुए खेत का आकर्षक दिखलाई पड़ना, वर्षा के पानी को अधिक मात्रा में सोखने की शक्ति होना, उचित जल निकासी की व्यवस्था होना, उचित टिल्थ का होना आवश्यक होता है।

भारत में वृक्ष आधारित गोंद का उत्पादन व विपणन

गोविन्द पाल[1], आर.के. सिंह[2] एवं एस.के.एस. यादव[2]

[1]बीज अनुसंधान निदेशालय, मऊ

[2]भारतीय प्राकृतिक राल एवं गोंद संस्थान, राँची

पुरातनकाल से मनुष्य के जीवन में गोंद का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। व्यापार व उपयोग के दृष्टिकोण से भी लघुवनोपज में गोंद का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। घरेलू उपभोग व आमदनी के लिए गोंद का उपयोग वन एवं वनों के आसपास रहने वाले लोगों विशेषकर आदिवासियों द्वारा सदियों से किया जाता रहा है व गोंद इनके जीविकोपार्जन का एक प्रमुख स्रोत है। गोंद के व्यापार एवं प्रसंस्करण से जुड़े हुए लोगों के लिए भी यह क्षेत्र आय का एक प्रमुख स्रोत है। आय के दृष्टिकोण से ज्यादातर लघुवनोपज की उपलब्धता कम समय (साधारणतः तीन माह) के लिए होती हैं जबकि गोंद छः माह से पूरे वर्ष उपलब्ध होता है। अतः गोंद पर निर्भर लोगो के लिए यह सतत् आय का स्रोत है। गोंद, पेड़ के उत्तक का मेटाबोलिक उप–उत्पाद है जिसका स्राव पेड़ से सामान्य रूप में या पेड़ को चोट लगने या पेड़ को घाव होने पर होता हैं। भारत में गोंद का उत्पादन करने वाले विभिन्न प्रजाति के पेड़ पाये जाते है जिसमें कुछ स्थानीय महत्व के है व कुछ पूरे देश में पाये जाते है। भारत में विभिन्न व्यावसायिक गोंदो में कराया, सलाई, धावडा, चार, झींगन, कोन्डागुगू, प्रोसोपिस व एकेशिया प्रजाति का महत्वपूर्ण स्थान है।

उत्पादन व माँग

भारत में औसतन प्रतिवर्ष 7000 टन गोंद व लगभग 1700 टन गोंद–राल का उत्पादन होता है। कराया गोंद के उत्पादन में भारत का विश्व में एकाधिकार है। वर्तमान समय में प्राकृतिक उत्पादों के मांग में वृद्धि होने के कारण गोंद की मांग बढ़ी है जिससे गोंद संग्राहकों का पेड़ से गोंद संग्रहण की और झुकाव बढ़ा है व इससे प्राप्त आमदनी उनके जीविकोपार्जन में सहायक हुई है। गोंद के प्राकृतिक व पर्यावरण अनुकूल होने के कारण इसके मांग में दोगुनी वृद्धि की संम्भावना है। भारत में वृक्ष आधारित गोंद का उत्पादन करने वाले प्रमुख राज्य छत्तीसगढ़, आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, मध्य प्रदेश, ओड़िशा, झारखण्ड व महाराष्ट्र हैं। भारत में प्रमुख वृक्ष आधारित गोंदों में कराया, कोन्डागुगू, धावड़ा, डिकामाली, बबूल, खैर, साजा, चार, तनवर, बहेड़ा, झींगन, प्रोसोपिस, गुग्गल, पलाश व सलाई है। भारत में विभिन्न वृक्ष आधारित गोंद के औसत उत्पादन को तालिका 1 में दर्शाया गया है। भारत में महत्वपूर्ण वृक्ष आधारित गोंद का उत्पादन करने वाले राज्यों व जिलों को तालिका 2 में दर्शाया गया है।

तालिका 1 भारत में विभिन्न गोंद व गोंद–राल का औसत उत्पादन

क्रम सं.	विवरण	उत्पादन (टन)
अ–गोंद		
(i)	कराया गोंद	900
(ii)	अरेबिक गोंद	1050
(iii)	अन्य गोंद	5050
	योग	**7000**
ब– गोंद–राल		
(i)	हींग	1200
(ii)	सलाई	430
(iii)	अन्य गोंद–राल	70
	योग	**1700**
	कुल योग	**8700**

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में योगदान

वन क्षेत्र, वन एवं वनों के आसपास रहने वाले लगभग 5 करोड़ निवासियों को जीविकोपार्जन प्रदान करता है एवं इस क्षेत्र का 70 प्रतिशत रोजगार सृजन लघुवनोपज क्षेत्र से आता है। यह एक सर्वविदित तथ्य है कि वनों या उसके आस पास रहने वाले निवासियों/आदिवासियों को पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से यहाँ से हटाया नहीं जा सकता है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि पर्यावरण संरक्षण व वनों के विकास के लिए इन क्षेत्रों में प्राकृतिक गोंद व गोंद–राल आधारित आर्थिक गतिविधियों को विकसित किया जाय जो कि इन क्षेत्रों के निवासियों के आर्थिक उन्नयन में सहयोगी होगा।

शासन एवं नियमन

गोंद सहित लघुवनोपज के व्यापार के लिए सरकार के शासन व नियमन तीन प्रकार के है जिसका विवरण निम्नवत् है–

राष्ट्रीयकृत उत्पाद श्रेणी

आर्थिक एवं संरक्षण की दृष्टि से सरकार ने लघुवनोपज को राष्ट्रीयकृत

तालिका 2 भारत में महत्वपूर्ण वृक्ष आधारित गोंद का उत्पादन करने वाले राज्य व जिले

राज्य का नाम	गोंद उत्पादन करने वाले जिले	महत्वपूर्ण उत्पादित गोंद
छत्तीसगढ़	बिलासपुर, रायपुर, सुरगुजा, रायगढ़, धर्मजयगढ़, राजनांदगाँव, धमतरी, महासमुन्द, कोरिया, बीजापुर, काकेर व दंतेवाड़ा	कराया, धावड़ा, बबूल, खैर, साजा, चार, तनवर, डिकामाली, बहेड़ा व झींगन
आन्ध्र प्रदेश	श्रीकाकुलम, विजयानगरम्, बिशाखापत्तनम, पूर्व गोदावरी, पश्चिमी गोदावरी, चित्तूर, खम्माम, महबूबनगर, बारंगल व अदीलाबाद	कराया, कोन्डागुगू, ओलीबेनम, डिकामाली व तिरूमान
गुजरात	कच्छ, साबरकॉठा, बनासकॉठा, पंचमहल, दाहोद, बड़ोदरा, नर्मदा, भरूच, नवसारी, वलसाड़ व डांग	सलाई, प्रोसोपिस, खैर, धावड़ा, बबूल व गुग्गल
मध्य प्रदेश	मुरैना, उज्जैन, जबलपुर, श्योपुर, शिवपुरी, दमोह, खण्डवा, गुना, खरगोन, छत्तरपुर, इन्दौर, नरसिंहपुर व रायसेन	कराया, गुग्गल, धावड़ा, पलाश, बबूल व सलाई
ओड़िशा	बालासोर, रायगढ़ा, कोरापुट, मलकानगिरी, कालहाडी व मयूरभंज	धावड़ा, बबूल, कराया, बहेड़ा, पलाश, व सलाई
झारखण्ड	लतेहार, चतरा, गढ़वा, डाल्टनगंज व पश्चिम सिंहभूम	झींगन, चार, धावड़ा, कराया व बबूल
महाराष्ट्र	गोंदिया, भन्डारा, गढ़चिरोली, चन्द्रपुर व वर्धा	धावड़ा, कराया, झींगन, बबूल व खैर

कराया *(स्टरकुलिया यूरेन्स)*, धावड़ा/तिरूमन *(एनोजेसस लैटिफोलिया)*, बबूल *(एकेशिया निलोटिका)*, खैर *(एकेशिया कैटेचु)*, साजा (*टरमिनेलिया टोमेनटोसा*), चार (*बुचनैनिया लैन्जेन स्परेन्ज*), डिकामाली (*गारडेनिया गमीफेरा*), बहेड़ा (*टरमिनेलिया बेलोरिका*), झींगन (*लैविया ग्रन्टिस*), कोन्डागुगू (*कोचलोस्परमम् रेलिजिओसम*), ओलीबेनम/सलाई (*बोसबेलिया सेराटा*), प्रोसोपिस (*प्रोसोपिस जूलीफ्लोरा*), गुग्गल (*कोमीफोरा विघटी /मुकुल*), पलाश (*ब्यूटिया मोनोस्पर्मा*)

उत्पाद की श्रेणी में रखा है। लघुवनोपजों के राष्ट्रीकृत उत्पाद की श्रेणी का निर्धारण राज्य सरकारों द्वारा किया जाता है व इन उत्पादों का विपणन/व्यापार सम्बन्धित राज्य के वन विभाग द्वारा किया जाता है। राष्ट्रीयकृत उत्पाद की श्रेणी में सम्मिलित लघुवनोपज अलग–अलग राज्यों में भिन्न हो सकती है। वन विभाग की व्यापार इकाई इन उत्पादों का विपणन करती है।

एकाधिकार उत्पाद श्रेणी

इस श्रेणी के अन्तर्गत आर्थिक व संरक्षण की दृष्टि से राज्य का वन विभाग चयनित लघुवनोपज के विपणन व मूल्य संवर्धन का अधिकार एक संस्था को दे देता है। उदाहरणार्थ आन्ध्र प्रदेश में गिरिजन सहकारी संस्था को राज्य के उत्पादित सभी गोंदों के विपणन व मूल्य संर्वधन का एकाधिकार मिला हुआ है।

गैर–राष्ट्रीयकृत उत्पाद श्रेणी

राष्ट्रीयकृत व एकाधिकार उत्पाद श्रेणी के अलावा अन्य सभी लघुवनोपज इस श्रेणी के अंतर्गत आते है। प्राथमिक संग्राहक या उनके संगठन को इस श्रेणी के लघुवनोपजों के विपणन व व्यापार के लिए वनमडंलाधिकारी से अनुमति लेना आवश्यक है। तालिका 3 में भारतीय राज्यों में गोंद की नियामक स्थिति को दिखाया गया है।

तालिका 3 भारतीय राज्यों में गोंद की नियामक स्थिति

राज्य का नाम	राष्ट्रीयकृत उत्पाद	गैर–राष्ट्रीयकृत उत्पाद
आन्ध्र प्रदेश	सभी प्रकार के गोंद (एकाधिकार)	–
मध्य प्रदेश	कराया गोंद	अन्य सभी प्रकार के गोंद
छत्तीसगढ़	कराया, धावड़ा, बबूल व खैर गोंद	अन्य सभी प्रकार के गोंद
ओड़िशा	–	सभी प्रकार के गोंद
गुजरात	सभी प्रकार के गोंद	–
महाराष्ट्र	सभी प्रकार के गोंद	–
झारखण्ड	–	सभी प्रकार के गोंद
राजस्थान	सभी प्रकार के गोंद	–

बाजार व्यवस्था

विपणन किसी भी उत्पादन प्रक्रिया का अभिन्न अंग है, कोई भी उत्पादन प्रक्रिया उचित बाजार व्यवस्था के बिना पूरी नहीं होती है। गोंद उत्पादकों/संग्राहकों की आय इस बात पर निर्भर करती है कि उन्हें गोंद का क्या मूल्य मिलता है। यदि गोंद संग्राहकों/उत्पादकों को गोंद का उचित मूल्य नहीं मिलता है तो उनकी रूचि गोंद संग्रहण/उत्पादन में कम हो जायेगी। अतः गोंद उत्पादन में वृद्धि के लिए उचित विपणन व्यवस्था का होना आवश्यक है जिससे गोंद संग्राहकों को गोंद का उचित मूल्य मिल सकें। गोंद उत्पादन व उपभोग के मध्य कई मध्यवर्ती लोग (व्यापारी, कमीशन एजेन्ट, थोक व खुदरा व्यापारी, निर्यातक आदि) विभिन्न प्रकार के कार्यों को करते है।

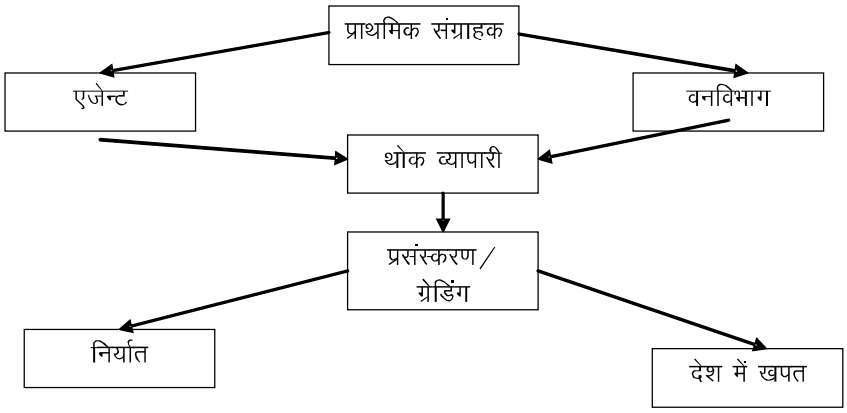

चित्र 1. गोंद के विपणन के रास्ते

गोंद का मूल्य साधारणतः व्यापारियों द्वारा अपनी लाभदायकता को ध्यान में रखकर निर्धारित किया जाता है। साधारणतः यह मांग व पूर्ति पर निर्धारित नहीं होता है। चूँकि गोंद की पूर्ति एक निश्चित सीमा में व समय विशेष में होती है इसलिए व्यापारियों द्वारा इसके वास्तविक मूल्य को नहीं दर्शाया जाता है। अतः गोंद उत्पादकों को इसका वास्तविक मूल्य नहीं मिल पाता है। कुछ राज्यों में वन विभाग द्वारा गोंद के खरीद व बिक्री के लिए मूल्य का निर्धारण किया जाता है। गोंद संग्राहकों व आदिवासी किसानों द्वारा एकत्रित गोंद में पेड़ की छाल, बालू व मिट्टी आदि मिला होता है व इस गोंद को इनके द्वारा गाँव के नजदीक बाजार में प्राथमिक व्यापारी (पैकर) को बेचा जाता है। गोंद से प्राप्त आय को साधारणतः इनके द्वारा घरेलू आवश्यकता की चीजें क्रय करने में किया जाता है। स्थानीय व्यापारी/वन विभाग द्वारा गोंद की खरीद के बाद इसकी सफाई व श्रेणीकरण के बाद इसको बड़े/थोक व्यापारी को बेच दिया जाता है। गोंद के विपणन के रास्ते को चित्र 1 में प्रदर्शित किया गया है।

वृक्ष आधारित गोंद का निर्यात व आयात

वर्ष 2010–11 के दौरान कुल 5602 टन वृक्ष आधारित गोंद का निर्यात किया गया जिसका कुल मूल्य 109 करोड़ रू. था। इसी समयावधि में 20822 टन वृक्ष आधारित गोंद का आयात किया गया जिसका कुल मूल्य 275 करोड़ रूपये था। वृक्ष आधारित गोंद के निर्यात व आयात के विस्तृत विवरण को तालिका 4 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका 4 वर्ष 2010–11 में वृक्ष आधारित गोंद का निर्यात व आयात

क्रम सं.	उत्पाद का नाम	वर्ष 2010–11 में निर्यात		वर्ष 2010–11 में आयात	
		मात्रा (टन)	मूल्य (लाख रू.)	मात्रा (टन)	मूल्य (लाख रू.)
अ	**गोंद**				
1.	अरेबिक गोंद	1378.97	1888.68	19171.21	5839.62
2.	एशियन गोंद	543.16	1010.23	–	–
3.	अफ्रीकन गोंद	1.63	18.06	–	–
4.	कराया गोंद	1025.65	3261.79	8.25	62.13
5.	अन्य प्राकृतिक गोंद	1171.14	2130.98	337.25	600.89
	योग	**4120.55**	**8309.74**	**19516.71**	**6502.64**
ब	**गोंद–राल**				
1.	हींग	1102.69	1845.49	899.83	20532.74
2.	मिरर	6.84	13.01	35.82	44.43
3.	आयलबेनम्	229.86	580.77	1.39	3.44
4.	अन्य गोंद–राल	142.48	162.01	368.80	385.44
	योग	**1481.87**	**2601.28**	**1305.84**	**20966.05**
	कुल योग	**5602.42**	**10911.02**	**20822.55**	**27468.69**

स्रोतः वाणिज्यिक आसूचना और साख्यिंकी महानिदेशालय, कोलकाता

भारत में गोंद उत्पादन की अत्यधिक सम्भावनाएं, क्षेत्र में अच्छे सरकारी संस्थाओं की उपलब्धता, गोंद आधारित स्थापत्य प्रसंस्करण उद्योग, पारम्परिक प्रशिक्षित जनसंसाधन, गोंद उत्पादन में आगतो का कम प्रयोग, पारम्परिक स्वदेशी जानकारी व दक्षता की उपलब्धता, सूखे की स्थिति में सुनिश्चित आमदनी का स्रोत, तुलनात्मक रूप से इसके समान अन्य उत्पाद का न होना, विभिन्न क्षेत्रों में बहुउपयोग, देश में कराया गोंद का सर्वाधिक उत्पादक, गोंद उत्पादन के लिए उपयुक्त कृषि–जलवायु आदि देश में गोंद उत्पादन के ताकत है। गोंद संग्राहकों की आय बढ़ाने के लिए यह आवश्यक है कि गोंद दोहन की वैज्ञानिक तकनीकों का, गोंद श्रेणीकरण व प्राथमिक प्रसंस्करण की प्रक्रिया में संग्राहकों को प्रशिक्षण दिया जाय इसके अलावा गोंद उत्पादित क्षेत्रों में गोंद क्रय केन्द्र की स्थापना की जाय। इस क्षेत्र की प्रमुख समस्याओं में कम मात्रा में उत्पादन, देश में उत्पादन व कीमतों में अत्यधिक उतार–चढ़ाव, कच्चे माल में मिलावट की समस्या, निर्यात के लिए सीमित प्रोत्साहन उपाय, विश्व बाजार से सम्बन्धित अपूर्ण जानकारी, उत्पादन से संबंधित करार व वायदा कारोबार का न होना आदि है।

वन मुख्यतः जीविकोपार्जन, रोजगार, आय व विभिन्न उद्योगों के लिए कच्चे माल की पूर्ति के लिए प्रमुख स्रोत ही नहीं बल्कि पारिस्थितिकीय संतुलन, पर्यावरण स्थायित्व, जैव–विविधता संरक्षण, खाद्य सुरक्षा व दीर्घकालिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं। सामाजिक, आर्थिक, पर्यावरणीय व औद्योगिक विकास की संभावना के लिए लोगों का ध्यान इस क्षेत्र में पुनरोत्थान के लिए हुआ है। वनों व उसके आस–पास के क्षेत्रों में दीर्घकालिक विकास के लिए गोंद आधारित वृक्षों का बागान आवश्यक है। भारत में गोंद के उत्पादन व निर्यात की अपार सम्भावनाएं मौजूद है। आवश्यकता इस बात है कि समुचित प्रयासों व क्रियाओं का तीव्रीकरण किया जाय जिससे इसके उत्पादन में वृद्धि व देश का निर्यात बढ़ सकें।

रस छाँड़ै छूटी गहै, कोल्हू परगट देख।

गहै असार असार को, हिरद नाँहि विवेक।।

अर्थात : *दुर्जन और कोल्हू का यही काम है कि अच्छी वस्तु को त्याग कर खराब वस्तु को ग्रहण करते हैं। अर्थात् विवेक हीन लोग सार को त्याग कर असार में लिपटे रहते हैं।*

मृदा परीक्षण एवं फसलों में संतुलित उर्वरक की अनुशंसा

मनोज कुमार सिंह एवं डी.के. राघव

हॉली क्रॉस कृषि विज्ञान केन्द्र, हजारीबाग, झारखंड

हरित क्रांति से लेकर आज तक अनाज व सब्जियों के उत्पादन में कई गुना वृद्धि हुआ है। जिसके अन्तर्गत कृषि आदानों उन्नत बीज सिंचाई साधन, तकनीकी सुधारों के अलावा उर्वरकों के अत्यधिक प्रयोग से ही इस मुकाम पर पहुँचे हुए हैं । इस परिस्थितियों में हमने मृदा स्वास्थ्य को ध्यान में न रखते हुए मृदा की उर्वरता और जीवांश पदार्थों का लगातार दोहन किया उनके पुर्नभरण पर ध्यान नहीं दिया गया । जिसका परिणाम यह है कि जमीन के अन्दर धीरे–धीरे बहुत से पोषक तत्वों की कमी हो गई है । आज हमारा उद्देश्य यह होना चाहिये कि मृदा का स्वास्थ्य लम्बे अरसे तक अच्छा बना रहे जिससे आने वाले वर्षों तक अच्छी उत्पादकता व फसलोत्पादन ले सके। इसी लिए आवश्यक है कि हम समय–समय पर मृदा का परीक्षण करवाये व मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों एवं खादों का प्रयोग करें जिससे टिकाऊ उत्पादकता प्राप्त की जा सके।

मृदा परीक्षण से लाभ

- मिट्टी की उर्वरकता व फसल के अनुसार खाद एवं उर्वरक की अनुशंसित मात्रा का निर्धारण करना।
- मिट्टी की उर्वराशक्ति का ज्ञान होना।
- समस्या ग्रसित मृदाओं का सही समय पर उपचार करना।
- उर्वरकों की उपयोग क्षमता को बढ़ाना।
- फसल की उत्पादकता में वृद्धि करना।
- फसलों में पोषक तत्वों की कमी से होने वाली बिमारियों से बचाव।

मृदा परीक्षण हेतु खेत का वास्तविक प्रतिनिधि नमूना लेने की विधि

- जिस खेत का मृदा नमूना लेना हो उसमें 10 स्थानों पर यदृच्छिकी या जिग जैक विधि से निशान बना लेते है।
- प्रत्येक निशान देह स्थान की ऊपरी सतह से घास फूस, कंकड़, पत्थर आदि को साफ कर लें।
- निर्धारित स्थान पर खुरपी या फावड़े से अंग्रेजी के ट आकार का 15 सेन्टीमीटर गहरा गड्ढा बना लेते है।
- खुरपी की सहायता से गड्ढा की एक दीवार से लगभग 1 सेंटीमीटर मोटी मिट्टी की परत निकाल लेते हैं।
- इस मिट्टी को साफ सुथरे तसले, ट्रे अथवा तगारी में रख लेते हैं।
- इसी प्रकार खेत के बाकी 9 निशानों से मिट्टी का नमूना निकाल लेते हैं। इन सभी नमूनों के आपस में अच्छी तरह से मिला लेते है।
- यदि इस मिट्टी की मात्रा 750 ग्राम से ज्यादा हो तो उसको चार भागों में बाट लेते है। उसके आमने सामने के भागों को फेक देते हैं । बाकी दो भागों को आपस में मिला लेते हैं।
- इस प्रक्रिया को तब तक दोहराये जब तक कि मिट्टी का नमूना 750 ग्राम से 1 किलो के बीच रह जाये।
- अब इस मिट्टी को साफ सुथरे पालीथीन में भर लेते हैं। इसके साथ लेवल लगा देते है।

लेबल में निम्न सूचनाएं लिखी होनी चाहिये

1. किसान का नाम
2. गांव का नाम
3. ब्लाक का नाम
4. खेत का नाम
5. मृदा नमूना लेने से पहले की फसल
6. मृदा नमूना लेने के बाद की फसल
7. भूमि की यदि कोई समस्या हो तो लिखें

इस नमूने को हम प्रतिनिधि नमूना कहते हैं इस नमूने को हम मिट्टी परीक्षण प्रयोगशाला को भेज सकते हैं।

मृदा नमूना लेने की गहराई

- गेहूँ, ज्वार, धान, सोयाबीन, मटर,चना आदि फसलों के लिए 15–20 सें.मी. तक गहराई से मृदा नमूना लेना चाहिये।
- गहरी जड़ वाली फसलों जैसे कपास, अरहर आदि के लिये 25–30 से.मी. गहराई तक का मृदा नमूना ले।
- सन्तरा, नींबू आदि बगीचों की मिट्टी परीक्षण के लिए मृदा का प्रोफाइल नमूना लेना चाहिये जिसकी गहराई 90×60×150 सेन्टीमीटर गहरा गड्ढा खोद कर नमूना लेना चाहिये।

उर्वरक की मात्रा प्रति कट्ठा (4 डिसिमल= 1 कट्ठा) (झारखंड हेतु)

फसल	फसल की अवस्था	डी.ए.पी के साथ			एन .पी के साथ			एस.एस.पी.के साथ		
		डी.ए.पी	यूरिया	एम.ओ.पी ग्राम	एन.पी.के.	यूरिया	म्यू ओफ पोटाश	यूरिया	एस.एस.पी	म्यू.ओफ पोटाश
रोपनी धान 80:40:20 कि0/हे0 1.	रोपनी के पूर्व	1.408 किलो. ग्राम	890 ग्राम	575 ग्राम	2 किलो	880 ग्राम	–	1.408 किलो	4 किलो	575 ग्राम
28:064:0.32 कि0/कट्ठा	कल्ले निकलते समय	–	720 ग्राम	–	–	720 ग्राम	–	720 ग्राम	–	–
	बाली निकलते समय	–	720 ग्राम	–	–	720 ग्राम	–	720 ग्राम	–	–
गेहूं सिंचित 100:50:25 कि0/हे0 1.6:0:8.4/	बुवाई के समय	1.76 किलो	1.08 किलो	0.672 किलो	2.528 किलो	1.12 किलो	–	1.76 किलो	4.992 किलो	0.672 किलो
कट्ठा	बुवाई के 20–25 दिन बाद	–	880 ग्राम	–	–	880 ग्राम	–	880 ग्राम	–	–
	बुवाई के 45–50 दिन	–	880 ग्राम	–	–	880 ग्राम	–	880 ग्राम	–	–
मक्का 80:60:40 कि0/हे0	बुवाई के समय	2.08 किलो	928 ग्राम	1.088 किलो	3.00 किलो	960 ग्राम	0.272 ग्राम	1.76 किलो	6 किलो	1.024 किलो
1.28:0.26:0.64 कि0/कट्ठा	बुवाई के 30 दिन बाद	–	880 ग्राम	–	–	880 ग्राम	–	880 ग्राम	–	–
	धनबाल के समय	–	880 ग्राम	–	–	880 ग्राम	–	880 ग्राम	–	–
अरहर मुंग,चना,मसूर एवं मटर 20:40:20 कि0/हे0	बुवाई के समय	1.408 किलो	160 ग्राम	576 ग्राम	2.0 किलो	160 ग्राम	–	72 ग्राम	4 किलो	576 ग्राम
0.32:064:0.32 कि0/कट्ठा										
मुंगफली 20:80:20 कि0/हे0	बुवाई के समय	1.792 किलो	192 ग्राम	576 ग्राम	2.528 किलो 240 ग्राम	–	880 ग्राम	4.992 ग्राम	576 ग्राम	
0.32:1.28:0.32 कि0 /कट्ठा										

फसल	फसल की अवस्था	डी.ए.पी के साथ			एन .पी के साथ			एस.एस.पी.के साथ		
		डी.ए.पी	यूरिया	एम.ओ.पी ग्राम	एन.पी.के.	यूरिया	म्यू ओफ पोटाष	यूरिया	एस.एस.पी	म्यू.ओफ पोटाष
तेरिया 50:40:20 कि0/हे0	बुवाई के समय	1.388 ग्राम	512 ग्राम	576 ग्राम	1.28 किलो	0.576 ग्राम	192 ग्राम	880 ग्राम	2.48	575 ग्राम
	बुवाई के 20–25 दिन बाद		880 ग्राम			880 ग्राम		880 ग्राम		
आलू 120:100:90कि0/हे0	बुवाई के समय	3.52	720 ग्राम	2.432 किलो	4.992 किलो	800 ग्रम	1.088 किलो	2.128 किलो	10 किलो	2.432 किलो
	मिट्टी चढ़ाते समय	–	2.128 किलो	–	–	2.128 किलो	–	2.128 किलो		

मिट्टी परीक्षण के लिये मृदा का नमूना लेते समय सावधानियां

- खाद या उर्वरक डालने के पश्चात् मृदा का नमूना नहीं लेना चाहिये।
- खाद के ढेर, खेत की मेड़ या सिंचाई की नाली के पास से मिट्टी का नमूना नहीं लेना चाहिये।
- खेत में लगे किसी पेड़ के जड़ क्षेत्र से मृदा का नमूना न लें।
- अलग–अलग खेत का नमूना अलग–अलग बनाये।
- ज्यादा नमी की अवस्था में मृदा का नमूना न निकाले।
- मिट्टी को छाया में सुखाना चाहिये एवं साफ सुथरी पालीथीन में भरें।
- घास फूस एवं पौधों के जड़ों को साफ कर लेना चाहिए।

मृदा परीक्षण कराने हेतु संस्थान

- कृषि विज्ञान केन्द्र
- कृषि विश्वविद्यालय के मृदा विज्ञान विभाग
- जिले के कृषि विभाग

बीजोपचार की बीज उत्पादन में अहम भूमिका

अतुल कुमार, सोनी कुमारी, ईश्वर सिंह सोलंकी एवं कुन्दन कुमार जायसवाल

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, पूसा (बिहार)

जिस प्रकार प्रकृति में हरियाली का होना बहुत महत्व रखता हैं, ठीक उसी तरह किसान भाइयों के लिए खेती में उन्नत बीज का होना महत्व रखता है। चूकि, एक स्वस्थ बीज ही स्वस्थ पौधे का उचित निर्माण करता है।

हमारा देश कृषि प्रधान देश है, जिनमें छोटे किसानों की संख्या ज्यादा है। जिनके पास छोटे–छोटे खेत है और प्रायः खेती ही उनके जीवन–यापन का प्रमुख साधन है। आधुनिक समय मे खाद्यान्न की मांग बढ़ती जा रही है तथा आपूर्ति के संसाधन घट रहे है। जिससे प्रौद्योगिकी चुनौतीपूर्ण की अपेक्षा ज्यादा जटिल हो गयी है। विज्ञान के नवीन उपकरणों, तकनीकों, तरीकों तथा प्रयोगों से किसानों की स्थिति मे सुधार हुआ है, तथा नवीन तकनीकों के प्रयोग करने से उनकी जीवन शैली में तीव्र बदलाव आये है। इसी को ध्यान में रखते हुए किसान नई–नई तकनीकों का उपयोग करके उत्पादन तथा उत्पादकता को बढ़ा सकते है। इन्ही मे से एक तकनीक बीचोपचार है। जिसको सुनियोजित तरीके से अपनाने से खेती की उत्पादकता बढ़ सकती है।

यह एक सस्ती तथा सरल तकनीक है, जिससे किसान बीज जनित एवं मृदा जनित रोगों से अपनी फसल को खराब होने से बचा सकते हैं। इस तरीके में बीज को बोने से पहले फफूंदनाशी या जीवाणुनाशी या परजीवियों का उपयोग करके उपचारित करते हैं। भारत एक उष्ण कटिबंधीय प्रदेश है। उष्ण प्रदेश होने के कारण यहाँ रोगों एवं कीटों का प्रकोप अधिक होता है, जिससे की उपज को बहुत अधिक नुकसान होता है। उन्नत प्रजातियों के प्रयोग, पर्याप्त उर्वरक देने व सिंचाई के अतिरिक्त यदि पौध संरक्षण के उचित उपाय न किये जाये तो फसल की अधिकतम उपज नही मिल सकती है।

बीजोपचार

बीजोपचार में प्रायः बीज को खेतों में बोने से पहले अथवा उसके भंडारण से पहले बीजों को बीजजनित या मृदाजनित रोगों से सुरक्षा के लिए भौतिक, रासायनिक, यांत्रिक एवं जैविक नियंत्रक की उचित मात्रा से बीजों को उपचारित किया जाता है। बीजो को उचित रसायन या जैव नियंत्रक की उचित मात्रा में कुछ इस तरह मिलाया जाए, ताकि बीजों के उपर रसायन या जैविक नियंत्रक की सुरक्षात्मक परत चढ़ जाये जो कि बीजो को रोगी कारको से उचित संरक्षण कर स्वस्थ एवं पुष्ट पौधे का निर्माण कर सके।

बीजोपचार के उद्देश्य

फसलों के उत्पादन में रोग बहुत हानिकारक होते है। बीज अनेक प्रकार के रोग जनक जैसे कि फफूंद, जीवाणु, विषाणु इत्यादि के वाहक होते हैं। जो खेतों में बुआई के समय या उसके भंडारण के समय फसलों को नुकसान पहुँचाते है। जिससे फसलों की उपज में तो कमी आ ही जाती है, बीज की गुणवत्ता पर भी बुरे प्रभाव पड़ते हैं। कई रोगों के कारक बीज के अन्दर, उसकी सतह पर, या उसके साथ रहकर बीजो को रोगी बीज के क्रम में रख देते है। इसलिए फसल की समुचित पैदावार एवं मुनाफे के लिए निरोग एवं स्वस्थ बीज का चुनाव करना बहुत आवश्यक है। मूलतः ''स्वस्थ बीज ही स्वस्थ पौधे का निर्माण करता है''।

अतः बीजों की बुआई से पहले उचित रसायन या जैविक नियंत्रक की निर्धारित मात्रा से बीचोपचार कर हम एक उन्नत पौधें का निर्माण कर सकते है। इसके साथ–साथ अनके बीजजनित एवं मृदा जनित रोगों से बीजो को बचाकर उन्नत एवं स्वस्थ बीज निर्माण कर किसान भाइयों को खुशहाली का आधार प्रदान कर सकते है।

बीजोपचार करने की विधियाँ

राईजोबियम कल्चर से बीजोपचार

इस विधि में खरीफ की पाँच मुख्य फसलों (अरहर, उड़द, मूँग, सोयाबीन एवं मूँगफली), तथा रबी की तीन दलहनी फसलें (चना, मसूर तथा मटर) में राईजोबियम कल्चर से बीजोपचारण कर सकते हैं। 100 ग्राम कल्चर आधा एकड़ जमीन में बोये जाने वाले बीजों को उपचारित करने के लिए पर्याप्त होता है। इस विधि में आधा लीटर पानी में लगभग 100 ग्राम गुड़ डाल लेते है तथा खूब उबाल लेते है। ठंडा होने पर एक पैकेट कल्चर डालकर अच्छी तरह मिला लेते है। इस कल्चरयुक्त घोल के साथ बीजों को इस तरह मिलाते है, कि बीजों पर कल्चर की एक परत चढ़ जाए। उपचारित बीजों को छाया में सुखा कर यथाशीघ्र बुआई करते हैं।

सूर्यताप द्वारा बीजोपचार

यह विधि गेहूँ, जौ एवं जई जिनमें अनावृत कंडवा रोग लगता है, के नियंत्रण

के लिए लाभदायक है। इस विधि में बीज को पानी में कुछ समय (3–4 घंटे) के लिए भिगोते हैं और फिर सूर्यताप में 4 घंटे तक रखते हैं 18 ससे बीज के आंतरिक भाग में रोगजनक का कवकजाल नष्ट हो जाता है। रोगजनक को नष्ट करने के लिए रोगजनक की सुसुप्तावस्था को तोड़ना होता है, जिससे रोगजनक नाजुक अवस्था में आ जाता है, जो कि सूर्य की गर्मी द्वारा नष्ट किया जा सकता है। यह विधि गर्मी के महीने (मई–जून) में कारगर सिद्ध हुई है।

भीगा बीजोपचार

इस विधि का उपयोग सब्जियों के बीजो के लिए ज्यादा फायदेमंद होता है। इस विधि में अनुशंसित मात्रा की दवा का पानी में घोल बना कर बीज को कुछ समय के लिए उसमें छोड़ देते हैं, तथा कुछ समय पश्चात् छायादार स्थान में 6–8 घंटे सुखाकर यथाशीघ्र बुआई करते हैं।

गर्म जल द्वारा बीजोपचार

यह विधि जीवाणु एवं विषाणुओं की रोकथाम के लिए ज्यादा लाभदायक है। इस विधि में बीज या बीज के रुप में

क्र. सं.	फसल / साग–सब्जियों के नाम	प्रमुख रोग एवं कीट	रसायन / जैवनाशी का नाम	रसायन / जैवनाशी की मात्रा (ग्राम / किलो बीज)
1.	धान	झुलसा / बलास्ट, पत्र लॉक्षण	कारबेंडाजिम	2
		भूरी चित्ती रोग, धड़ सड़न	कैप्टॉन	2
		जीवाणु पर्ण अंगमारी	स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस 0.5% WP	10
		दीमक	क्लोरीपारीफॉस 20 ई0सी0	3 मि0ली0
2.	गेहूँ	अनावृत कंड	कार्बोक्सीन 37.5 प्रतिशत + थीरम 37.5 प्रतिशत	2.5
		अल्टनेरिया पत्र लॉक्षण, अंगमारी हेल्मिंथोस्पोरियम	कारबेंडाजिम	2
		दीमक	क्लोरिपारीफॉस 20 ई0सी0	5 मि0ली0
3.	मक्का	हेल्मिंथेस्पोरियम, शीथ ब्लाइट	थीरम / कैप्टॉन	3
4.	गन्ना	लाल सड़न रोग	कारबेंडाजिम / थीरम	2 / 3
			ट्राईकोड्रमा विरिडी	6
5.	अरहर, चना, मसूर, मूंग	उकठा रोग	कारबेंडाजिम / थीरम	2 / 3
		उकठा एवं झुलसा	ट्राईकोड्रमा विरिडी 1% WP	8–10
		दीमक	क्लोरिपारीफॉस 20 ई0सी0	5 मि0ली0
6.	मूंगफली	बीज एवं मिट्टी जनित रोग	कारबेंडाजिम / थीरम	2 / 3
7.	सरसों	श्वेत कीट्ट	कारबेंडाजिम / थीरम	2 / 3
8.	तीसी	उकठा रोग	थीरम	3
9.	आलू	मिट्टी एवं कंद जनित रोग	मेंटालैक्सिल + मानकोजेब	2
10.	गोभी	मृदुरोमिल आसिता	कारबेंडाजिम	2
		मिट्टी एवं बीज जनित रोग	ट्राईकोड्रमा विरिडी 1% WP	4–5
		जड़ सूत्रकृमि	स्यूडोमोनास फ्लोरिसेंस 0.5% WP	10
11.	बैगन	जीवाणु मुरझा रोग	स्यूडोमोनास फ्लोरिसेंस 0.5% WP	10
12.	शिमला मिर्च	जड़ सूत्रकृमि	स्यूडोमोनास फ्लोरिसेंस	10
13.	मटर	उकठा रोग	कैप्टॉन / थीरम	3
14.	भिण्डी	उकठा रोग	कैप्टॉन / थीरम	3
15.	गाजर, प्याज, मूली	बीज एवं मिट्टी जनित रोग	कारबेंडाजिम	2
16.	मिर्च	मिट्टी जनित रोग	ट्राईकोड्रमा विरिडी 1% WP	4–5
		जैसिड, एफीड, थ्रीप्स	इमिडाक्लोरपिड 70 WS	2 मि0ली0
17.	टमाटर	उकठा	कारबेंडाजिम	2
			स्यूडोमोनास फ्लोरिसेंस 0.5% WP	10

प्रयोग होने वाले पादप भाग जैसे कंद को 52–54^{0}C तापमान पर 15 मिनट तक रखते हैं। जिससे रोगजनक नष्ट हो जाते है, लेकिन बीज अंकुरण पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता है।

स्लरी बीजोपचार

यह विधि समय की बचत वाली विधि है। इस विधि से बीज बुआई के लिए जल्दी तैयार हो जाते है। इसमे अनुशंसित मात्रा की दवा के साथ थोड़ा पानी मिलाकर पेस्ट बना लेते है। इस पेस्ट को बीज में मिलाकर छाया में सुखा लेते है। सूखे हुए बीजो से यथाशीघ्र बुआई करते हैं। इस विधि द्वारा बीज कम समय में बुआई के लिए जल्दी तैयार हो जाते हैं।

सूखा बीजोपचार

इस विधि में बीज को अनुशंसित मात्रा की दवा के साथ सीड ड्रेसिंग ड्रम में डालकर अच्छी तरह हिलाते हैं, जिससे दवा का कुछ भाग प्रत्येक बीज पर चिपक जाए। सीड ड्रेसिंग ड्रम का उपयोग तब करते है, जब बीज की मात्रा ज्यादा होती है। अगर बीज सीमित मात्रा में है तो सीड ड्रेसिंग ड्रम के स्थान पर मट्टी के घड़े का प्रयोग कर सकते हैं। सीड ड्रेसिंग ड्रम या मिट्टी के घड़े में बीज की मात्रा दो तिहाई से ज्यादा नहीं रहनी चाहिए।

जीवाणु बीजोपचार

इस विधि में सूक्ष्म परजीवीनाशी जैसे ट्राइकोड्रमा विरिडी, ट्राइकोड्रमा हारजिएनम, स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस इत्यादि का उपयोग करके बीज को उपचारित करते हैं।

पौधा/(बिचड़ा) उपचार

इस विधि द्वारा मुख्यतः धान, टमाटर, बैंगन, गोभी, मिर्च इत्यादि के पौधों को जीवाणु रोगों से बचाया जाता है। इस विधि में रोपाई से पहले पौधों की जड़ों को एंटीवायोटिक (एस्ट्रेप्टोसाईक्लिन) के घोल में डुबो कर उपचारित करते है।

बीज उपचार के लिए अनुशंसा

बीज उपचारित करने के लिए सर्वप्रथम एफ0आई0आर0 क्रम याद रखना चाहिए। बीज को सर्वप्रथम फफूंदनाशी से उसके बाद कीटनाशी से (2 घंटे बाद) और अन्त में राईजोबियम कल्चर से (4 घंटे बाद) उपचारित करें। कवकनाशी, कीटनाशी तथा जैविक नियंत्रण क्रम गैर दलहनी फसलों पर लागू करनी चाहिए।

सावधानियाँ

- बीज उपचारित करने के लिए निर्धारित मात्रा का ही प्रयोग करें।
- बीजोपचार करने के बाद बीज को छायेदार जगह में ही सुखाएं।
- रसायनों के प्रयोग से पहले उसकी एक्सपायरी तिथि अवश्य जॉच लें।
- उपचार के बाद डिब्बों तथा थैलों को मिट्टी के अंदर अवश्य दबा दें तथा अच्छी तरह साबुन से हाथ धो लें।
- रसायनों को बच्चों तथा मवेशियों की पहुंच से दूर रखें।
- रसायनों के प्रयोग के समय न तो कुछ खायें, न ही धूम्रपान करें।
- दवा को उसके मूल डिब्बे में रखें तथा उसका लेबिल खराब न होने दे। खाद्य, जल या शराब के डिब्बों में कीटनाशक रसायन को कभी न रखें।

निष्कर्ष

- यह एक सस्ती तथा सरल विधि है।
- कोई भी किसान भाई बड़ी आसानी से इस विधि को अपना सकते हैं।
- रसायनिक पदार्थो का प्रयोग इस विधि में कम से कम होता है।
- बीजोपचार करने के बाद खड़ी फसल में सुरक्षा के अन्य उपायों की कम आवश्यकता पड़ती है।
- फसल उत्पादन में इस विधि द्वारा किसान भाईयों को 15–20 प्रतिशत तक मुनाफा मिलता है।

अतः आधुनिक संदर्भ में यह अत्यन्त आवश्यक है कि हम किसान समुदाय के साथ अधिकाधिक रूप से संपर्क बनाए रखें। ताकि हमारे किसान भाईयों का प्रतिकूल परिस्थितियों में मनोबल बना रहें। जिससे हमारा देश न सिर्फ आत्मनिर्भर बना रहेगा बल्कि अपने पड़ोसी देशों के मुश्किल समय में मदद करने की स्थिति में भी रहेगा। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि किसानो की खुशहाली मे उन्नत बीज का जितना अहम योगदान है उतना ही अहम योगदान बीजोपचार का भी हैं। अतः बीजोपचार बीज उत्पादन मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

''उन्नत बीज : खुशहाल किसान

बीजोपचार : खुशहाली का आधार''

जल प्रबंधन : समय की माँग

आर.के. सिंह[1] एवं अभिषेक कुमार सिंह[2]

[1]भारतीय प्राकृतिक राल एवं गोंद संस्थान, राँची

[2]भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

जल कुदरत की एक अद्‌भुत देन है और जीवन से जुड़ी सभी चीजों को इसकी कमोबेश आवश्यकता है। पानी का सबसे ज्यादा इस्तेमाल खेती में होता है, जहाँ सिंचाई की सुविधा के साथ खेती होती है उसे सिंचित क्षेत्र कहते हैं ओर जहाँ सिंचाई के लिए कोई साधन नहीं है, वैसे क्षेत्रों को असिंचित क्षेत्र के नाम से जाना जाता है।

हमारे देश में सिंचाई के लिए 40 प्रतिशत जमीनी पानी (Ground water) का इस्तेमाल किया जाता है। केन्द्रीय भू–जल बोर्ड (Central Ground Water Board) की रिपोर्ट के अनुसार अगर हम पानी का इसी तरह इस्तेमाल करते रहे तो वर्ष 2025 तक देश के 15 राज्यों में भू–जल पूरी तरह समाप्त हो जाएगा। ऐसी स्थिति में हम कल्पना कर सकते हैं कि खेती के वैसे क्षेत्रों का क्या होगा जहाँ सिंचाई की कोई सुविधा उपलब्ध नहीं है। वैसे भी पिछले 20–30 वर्षों में भू–जल का अन्धाधुंध दोहन (Exploitation) हुआ है ओर इसके चलते जमीनी पानी का स्तर लगातार घट रहा है।

रबी और जायद की फसलों को सिंचाई की जरुरत पड़ती है, जबकि खरीफ की फसलें बारिश से ही हो जाती है; लेकिन कुछ इलाकों में बारिश की कमी के कारण खरीफ फसलों की भी सिंचाई करनी पड़ती है। सिंचाई नहर, तालाब, ट्‌यूबवेल वगैरह से होती है लेकिन आज ऐसे हालात पैदा हो गए हैं कि कुओं में जल का स्तर काफी घट गया है या वे सूख गए हैं। अधिकांश तालाब तो मार्च के महीने तक ही सूख जाते हैं। पंपिंग सेट पानी निकालने में नाकाम साबित हो रहे हैं। बारिश के पानी का वितरण एक समान नहीं होता, कहीं बाढ़ आ जाती है, तो कहीं सूखा पड़ जाता है।

भू–जल के स्तर को बढ़ाने के लिए देश के जल संरक्षण वैज्ञानिक इस पर अनुसंधान कर रहे हैं और इन वैज्ञानिकों के अनुसार तालाबों का बनाना, पुराने तालाबों का जीर्णोद्धार करना, बारिश के पानी को सोख्ता गड्‌ढों में भरना इत्यादि पहलुओं पर ध्यान देने की आवश्यकता है जिससे कि पानी के स्तर को गिरने से बचाया जा सके।

बारिश पर मनुष्य का कोई वश नहीं है, ऐसे हालत में खेती में ऐसी आधुनिक तकनीकों का इस्तेमाल करना चाहिए जो कम खर्चीली एवं फायदेमंद हों।

ऐसे क्षेत्रों में जहाँ ज्यादा ढलान हो, वहाँ बारिश के पानी के साथ खेती की मिट्‌टी बह जाती है। इस समस्या से बचने के लिए सबसे आसान तरीका है कि खेतों के चारों तरफ मजबूत मेड़बंदी हो। इससे यह फायदा होगा कि मिट्‌टी का कटाव रुकेगा और खेत की मिट्‌टी ज्यादा पानी सोखेगी; फलस्वरुप बारिश का पानी जमीनी पानी का स्तर भी बढ़ा देगा।

आधुनिक तकनीकी सिंचाई में ड्रिप सिंचाई, फव्वारा सिंचाई, फुहार सिंचाई, ड्रमकिट द्वारा टपक सिंचाई इत्यादि को अपने इलाके और फसल के आधार पर चुना जा सकता है। सिंचाई के इन तरीकों को अपनाने से एक ओर जहाँ पानी की बचत होती है, दूसरी ओर पैदावार भी अधिक मिलती है।

ड्रिप सिंचाई

इस तकनीक में छोटे छेद वाली प्लास्टिक की पाइप लाइनें इस्तेमाल की जाती हैं, जो पौधों की जड़ों के पास बूँद–बूँद कर पानी टपकाती है। इसमें सिंचाई के अलावा खाद और कीटनाशी दवा को भी आसानी से दिया जा सकता है। इस तकनीक से पानी की 70–90 प्रतिशत तक की बचत होती है। सिंचाई के काम में 40–60 प्रतिशत मेहनत की बचत और फसल पैदावार में 20–30 प्रतिशत तक की बढ़ोतरी होती है। इस तकनीक को अपनाने से मिट्‌टी का कटाव भी नहीं होता और सिंचाई के लिए मेड़ नहीं बनानी पड़ती है।

फव्वारा सिंचाई

फव्वारे से पानी छोटी–छोटी बूँदों में बारिश की फुहार की तरह पौधों के उपर गिरता है। फव्वारे के सिस्टम को पंपिंग सेट से जोड़ देते हैं। जब पंपिंग सेट को चलाया जाता है तो पानी तेज बहाव के साथ फुहार की तरह बाहर निकलता है। यह फव्वारा घूमता रहता है, जिससे आस–पास चारों तरफ फसल की सिंचाई होती रहती है। यह तरीका सघन खेती में अच्छा नतीजा देता है।

फुहार सिंचाई

इस तकनीक में पाइप से पानी की फुहार निकलती है। फुहारें 2 से 5 मीटर तक ऊँची उठ कर गिरती हैं। इस तकनीक

का इस्तेमाल ज्यादातर बागवानी फसलों की नर्सरी में किया जाता है।

फुहार सिंचाई से हवा के तापमान को भी कम किया जा सकता है, क्योंकि बारिश की तरह पानी गिरने से आस–पास ठंड हो जाती है। यह तकनीक सब्जियों और बागवानी फसलों की नर्सरी के लिए पॉलीहाउस या शेडहाउस दोनों जगह अच्छी साबित हो रही है।

ड्रमकिट द्वारा टपक सिंचाई

सिंचाई के इस तकनीक में पाँच सौ से एक हजार लीटर या इससे भी ज्यादा क्षमता वाले मजबूत प्लास्टिक के टंकियों का इस्तेमाल किया जाता है। इन टंकियों को 1–4 मीटर की ऊँचाई पर लोहे या सीमेंट के बने स्टैंड पर रख दिया जाता है। टंकियों को पानी से भर लिया जाता है। इनसे पानी के लिए बनाए गए पाइप किट में गेट वाल्व व फिल्टर लगे रहते हैं, जिनमें से एक लचीला व मजबूत प्लास्टिक पाइप होता है। इस पाइप से एक उपमुख्य लैटरल पाईप निकलता है, जो बहुत पतला होता है।

पाईप को पंक्तिबद्ध लगी फसलों के साथ बिछाया जाता है। इसमें जहाँ–जहाँ पौधे जितनी दूरी पर लगे होते हैं, वहाँ–वहाँ इस लैटरल में छेदों के जरिए बूँद–बूँद पानी पौधे के पास टपकता रहता है। इसका इस्तेमाल मौसमी सब्जियों, फूलों व फलों की खेती में या सूखे इलाकों में किया जाता है।

सिंचाई की इन सभी तकनीकों का इस्तेमाल सब्जी, फूल, बागवानी और दूसरी नकदी फसलों में कर सकते हैं। किसी भी इलाके में इनका इस्तेमाल किया जा सकता है।

लगातार बढ़ती आबादी, पानी का गलत तरीके से इस्तेमाल, बारिश का असमान वितरण इत्यादि कारणों से पानी की बड़ी किल्लत हो गई है। समय का तकाजा है कि पानी को सही तरीके से इस्तेमाल में लाएँ और सिंचाई की ऐसी तकनीकों को अपनाएँ, जो कम पानी से ज्यादा क्षेत्रफल में सिंचाई करे और पौधा बूँद–बूँद का उपयोग कर सके।

कबहुँ प्रबल बह मारुत जहँ तहँ मेघ बिलाहिं।

जिमि कपूत के उपजें कुल सद्धर्म नसाहिं।।

भावार्थः– *कभी–कभी वायु बड़े जोर से चलने लगती है, जिससे बादल जहाँ–तहाँ गायब हो जाते हैं। जैसे कुपुत्र के उत्पन्न होने से कुल के उत्तम धर्म (श्रेष्ठ आचरण) नष्ट हो जाते हैं।*

स्रोत : रामायण किसकिन्धा काण्ड

कीटनाशकों का प्रयोग करते समय सावधानियाँ

अरूण बैठा, दिनेश चन्द्र रजक, श्रीकृष्ण गंगवार एवं बुद्धी लाल

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

फसलों पर अनेक प्रकार के कीड़े लगते हैं जिससे काफी हानि होती है। फसलों को कीड़े कुतरकर, रस चूसकर एवं विषाणु फैलाकर हानि पहुँचाते हैं। इन हानिकारक कीड़ों के प्रबंधन के लिये कीटनाशक दवाओं का प्रयोग अति आवश्यक होता है। सामयिक एवं उचित ढंग से दवाओं का प्रयोग करने से कीड़ों का समुचित प्रबंधन हो जाता है जिससे फसलों से अधिक लाभ होता है। इन सावधानियों को ध्यान में रखकर दवाओं का प्रयोग करनें से प्रयोगकर्ता व्यक्तिगत तौर पर हानि से बच सकते है।

अक्सर देखने में आता है कि किसान कीटनाशक दवाईयाँ लाकर घर में इधर–उधर रख देते हैं जिनसे होने वाली दुर्धटनाओं का सबसे ज्यादा बच्चे शिकार होते हैं। फसलों को कीड़ों से बचाने के लिए कीटनाशक दवाईयों के छिड़काव उपरांत कुछ अवशेष फसल में शेष रह जाते हैं, जिसके खानें से मनुष्यों के शरीर में विष धीरे–धीरे जमा होता रहता है और बाद में गम्भीर बीमारी के शिकार हो जाते हैं। अतः कृषि रसायनों के प्रयोग को सुरक्षित, लाभकारी एवं प्रभावकारी बनाने के लिए इनका प्रयोग करते समय निम्न पर ध्यान रखना अति आवश्यक है।

दवा का चुनाव

सबसे पहले ध्यान में रखने योग्य बात यह है कि कौन सी फसल पर किस प्रकार का कीड़ा किस तरह का नुकसान पहुँचा रहा है। कीड़े जड़, पत्ती, फूल, फल आदि को कुतरने वाले, रस चूसने वाले, पत्ती के अन्दर रहने वाले हो सकते हैं। उनको मारने के लिये निम्न प्रकार की कीटनाशक दवाइयाँ प्रयोग में लाई जाती है।

स्पर्शविष (कान्टेक्ट पाइजन)

जो दवायें कीड़ों को स्पर्श मात्र से मारती हैं। कीड़ें जब इन दवाओं के सम्पर्क में आते हैं तो उनके शरीर पर दवा चिपक जाती हैं और शरीर के अन्दर प्रवेश कर अपना असर करते हैं जैसे कि मोनोक्रोटोफॉस।

उदर विष (स्टमक पायजन)

जो दवा खाने के बाद पेट में पहुँच कर कीड़ों को मारती हैं। जब कीड़ें इन दवाओं से उपचारित फसल को कुतर कर खाते है, तो दवा उनके पेट में पहुँच कर अपना असर करती है जैसे कि कारबेरिल, मैलाथियान आदि।

सर्वांगीण विष (सिस्टेमिक पायजन)

यह दवा कहीं भी छिड़की या डाली जाय, यह फसल के हर भाग अर्थात जड़ से लेकर फल तक पहुँच जाती है। यह दवा कीड़े के पेट में पहुँच कर अपना असर दिखाती है। यह रस चूसने वाले कीड़ों के विरूद्ध काफी उपयोगी सिद्ध होती है जैसे कि डायमेथोएट, डायमेक्रान, थायमेट, सिस्टाक्स आदि।

धूम्रण विष (फ्यूमीगेंट)

ये दवायें ठोस या द्रव रूप में मिलती हैं जो प्रयोग करने के बाद गैस के रूप में परिवर्तित हो जाती है। कीड़ों के शरीर में सूक्ष्म छिद्रों से प्रवेश कर अपना असर दिखाती है। ये दवायें खेत में प्रयोग नहीं की जाती है, बल्कि गोदामों या ऐसे बर्तनों में जिन्हें उपचार के बाद में सील किया जा सकता हो, प्रयोग की जाती है। गैस बाहर नहीं निकलनी चाहिये। सेल्फास एक प्रकार का फ्यूमीगेंट है। अब कीटनाशक दवाईयाँ चुनने की बारी आती है। इसके लिये निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिये :–

- दवा किस तरह से कीड़ों को मारती है, स्पर्श या पेट के अन्दर जाकर और उसकी क्षमता क्या है। कीड़ों के आपतन को कहाँ तक कम कर सकती है।
- कुतर कर खाने वाले कीड़ों के लिये स्पर्श या पेट के अन्दर जाकर असर करने वाली दवा, रस चूसने वाले के लिये सिस्टेमिक, गोदामों के लिये फ्यूमीगेंट अति प्रभावकारी सिद्ध होती है।
- दवा का प्रभाव कितने दिनों तक रहता है।
- दवा का छिड़काव या भुरकाव जिन पेड़–पौधों पर करना है, वे किस उद्देश्य के लिये उगाये अथवा लगाये गये हैं। जैसे कि सब्जी, चारे या अन्य उत्पादन के लिये। यदि दवा ऐसी सब्जियों पर प्रयोग करना है जिन्हें जल्दी तोड़ना है तो कम समय तक असरदार रहने वाली दवा का प्रयोग करना चाहिये जैसे मैलाथियान, कारबेरिल आदि। भूमि के अन्दर रहने वाले कीड़ों के विरूद्ध अधिक दिन तक असर रखने वाली दवा जैसे कि क्लोरपाइरीफॉस, इमिडाक्लोप्रिड आदि का प्रयोग करना चाहिये।
- दवा की मात्रा निश्चित कर लेनी चाहिये।

- दवा का पेड़ पौधों पर क्या प्रभाव पड़ेगा, उसके प्रयोग से पौधे झुलस तो नहीं जायेगें इनकी बढ़वार आदि में कोइ भीं कोई रूकावट तो नहीं आयेगी। बीएचसी का कद्दू या लौकी आदि सब्जियों पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है इसलिये उपयोग में नहीं लानी चाहिए।
- दवा का फसल की कटाई के समय क्या अवशेष उस फसल पर होगा, कहीं वह निर्धारित मात्रा से ज्यादा तो नहीं रह जायेगी अगर ऐसा है तो फिर उसका चुनाव नही करना चाहिए।
- हानिकारक कीड़ों को खाने वाले भी कुछ परजीवी होते है, जो हमारे मित्र है। वे फसल को किसी भी प्रकार को नुकसान नहीं पहुँचाते हैं। बल्कि हानिकारक कीड़ों को मारकर या खाकर कम करते हैं। दवा का उन परजीवियों पर क्या प्रभाव पड़ेगा। उस दवा का चुनाव करना चाहिये जो परजीवियों के लिये हानिकारक न हो।
- दवा का मनुष्यों, पशुओं आदि पर क्या प्रभाव पड़ेगा इस बात का ध्यान रखना चाहिये।
- जब फूल लग रहे हो तो दवा का छिड़काव या भुरकाव जहाँ तक हो सके नहीं करना चाहिये क्योंकि मधुमक्खियाँ इस समय पराग लेने आती हैं और दवाइयाँ उनको मार सकती हैं। अगर दवा का प्रयोग करना आवश्यक है तो फिर उन दवाओं को चुनना चाहिए जो हानिरहित हो जैसे कि सर्वांगीण विष।
- दवा की प्राप्ति पर ध्यान रखना चाहिए। जो दवा असानी से स्थानीय बाजार में मिलती हो और अगर उसमें सभी वांछितगुण है तो उसी का चुनाव करना चाहिए।
- दवा की कीमत को ध्यान में रखना चाहिए। कितनी लागत कीड़ों को मारने में होती है और संरक्षण तरीकों को अपनाने से कितना अतिरिक्त लाभ हो सकता है। जिस दवा के प्रयोग से अधिक लाभ की आशा हो उसी का प्रयोग में लाना चाहिए, फारमुलेशन का चुनाव भी काफी महत्वपूर्ण है। बाजार में कीटनाशक दवायें धूल पाउडर, छिड़कने वाली धूल, बेटएबल पाउडर, द्रव और दानों के रूप में मिलती है। इस दिशा में वैज्ञानिकों के द्वारा दी गई सिफारिशों का पालन करें।
- मधुमक्खियों के छत्तें, चरागाह, मकान या स्कूल के निकट दवा का छिड़काव या भुरकाव नहीं करना चाहिए। जरूरी हो तो दानेदार दवा का प्रयोग करना चाहिए।
- वैज्ञानिको ने अथक परिश्रम के बाद कीट नाशक दवाओं के प्रयोग के बारे में विस्तृत जानकारी इकट्ठी करके कुछ सिफारिशें की हैं। उनका पालन करना चाहिए।
- सभी आवश्यक सामान साथ में रखना चाहिए।
- हमेशा पौधजनित कीटनाशक दवाइयों का छिड़काव सब्जियों के कीड़ों को मारने के लिए करें।
- कीटनाशक दवाइयों से अनाज, दाल एवं कंदमूल को उपचारित नहीं करना चाहिए क्योंकि इसे ज्यादा से ज्यादा लोग खाते है।

दवा का प्रयोग करते समय सावधानियाँ

सबसे पहले यह ध्यान देना चाहिए कि दवा का भुरकाव करना है या छिड़काव। फिर जिस मशीन का प्रयोग करना है उसकी भली–भाँति जाँच कर लेनी चाहिए, उसमें कहीं रिसाव न हो, अन्यथा दवा व्यर्थ में बह जायेगी जिससे कि लागत अधिक आयेगी और फायदा भी कम होगा। इसके अतिरिक्त निम्न बातों पर अवश्य ध्यान देना चाहिए।

- उपयोग हेतु निर्देश, दवा को प्रयोग करने से पहले पढ़ लेना चाहिए।
- कभी भी नंगे हाथों से घोल नहीं बनाना चाहिए, हमेशा लकड़ी की छड़ी से घोल बनाना चाहिए।
- घोल का सही मात्राा में छिड़काव करना चाहिए।
- छिड़काव टंकी में घोल सदैव किसी कीप या बर्तन के द्वारा भरना चाहिए।
- मशीन का आंकलन करके पानी की सही मात्रा का निर्धारण करना चाहिए। इसके लिये मशीन को पहले खेत के थोड़े हिस्से में प्रयोग करके देखना चाहिए फिर उसी हिसाब से पूरे खेत के लिये पानी, दवा आदि की मात्रा ठीक की जा सकती है।
- दवा का छिड़काव या भुरकाव करते समय आँख का चश्मा और रबर के दस्तानें पहन लेने चाहिए।
- प्रयोग के समय गैसमास्क या कपड़े का नकाब लगायें।
- दवा का छिड़काव या भुरकाव या तो सुबह या शाम को करना चाहिए।
- हवा के चलने की दिशा के अनुसार दवा का प्रयोग करना चाहिये, विरोधी दिशा में नहीं अन्यथा दवा आपके ऊपर पड़ेगी जो कि हानिकारक सिद्ध हो सकती है।

- प्रयोग करते समय किसी भी खाद्य या पेय पदार्थ या बीड़ी, सीगरेट, खैनी तम्बाकू आदि का उपयोग न करें, अन्यथा जहर आपके पेट के अन्दर पहुँचकर अपना बुरा असर दिखा सकता है।
- कीट नाशक दवा को या इसके घोल को सूँघना नहीं चाहिये। छूना तो और भी खतरनाक सिद्ध हो सकता है।
- तरल औषधियों को हमेशा मापक से नापकर ही प्रयोग में लायें।
- दवा का छिड़काव या भुरकाव भली–भाँति होना चाहिये, पौधे का कोई भी भाग छूटना नहीं चाहिये। खास तौर से नीचे का भाग अच्छे से उपचारित होना चाहिये अन्यथा कीड़ें नहीं मरेंगें।
- खाने–पीने की चीजों को छिड़काव वाली जगह से दूर रखना चाहिये।
- यदि कीटनाशक दवा शरीर के किसी भी भाग पर गिर जायें तो तुरन्त पानी से धोइयें, और बाद में साबुन से धोना चाहिये।

दवा प्रयोग करने के बाद

छिड़काव या भुरकाव करने के बाद निम्न बातों का अवश्य पालन करें :

- उपयोग के बाद बचे हुए रसायन को मिट्टी के अन्दर दबा देना चाहिए।
- मशीन को एंव प्रयोग में लाये सभी सामान को साफ करके रखना चाहिये। छिड़काव करने वाली मशीन का स्प्रे नोंजल खोलकर साफ कर लें और मशीन में पानी भरकर 10–15 बार खाली चला देना चाहिये ताकि मशीन अच्छी अवस्था में रहे।
- प्रयोग के बाद शरीर के खुले भागों को साबुन से खूब अच्छी तरह धो ले। यदि संभव हो तो स्नान अवश्य करें।
- खाली डिब्बे, बोरियॉ और छिड़काव में प्रयोग में लाई गई वस्तुएँ, छिड़काव घोल आदि जानवरों से दूर रखें । उन्हें पशुगृह, चारा–गाह, पीने के पानी, तालाब आदि में ना डाले। डिब्बों और बोरियों को या तो जला देना चाहिये या फिर गड़ढों में गाड़ देना चाहिए। उनमें खाने पीने की वस्तुऐं एकत्र नहीं करनी चाहिये ।
- दवाओं द्वारा उपचारित वस्तुओं का प्रयोग कुछ समय के लिये निषिद्ध है। इस सम्बन्ध में वैज्ञानिकों द्वारा दिये गये निर्देशों का पूर्णरूपेण पालन करना चाहिये। जैसे कि मैलाथियान से उपचारित सब्जियां कम से कम 15 दिन तक प्रयोग में नही लानी चाहिए। पशुओं को भी फसल से दूर रखना चाहिए।
- मशीनों में तेल या ग्रीस लगाकर उन्हें उचित स्थान पर रख देना चाहिए।

अन्य बातों का ध्यान

- कीट नाशक दवायें हमेशा उनके मूल डिब्बों में रहनी चाहिए ताकि भूल से कहीं कोई उनका अनुचित प्रयोग न करे बैठे।
- यह दवाइयां बच्चों की पहुँच से काफी दूर हो। अच्छा होगा, अगर ताले के अन्दर बन्द करके रखें। दवायें किसी निर्धारित स्थान पर ही रखनी चाहिये।
- खाने पीने की चीजों को इन दवाओं से दूर रखना चाहिये।
- यदि आप दवा छिड़काने का काम प्रायः करते रहते है तो समय–समय पर अपनी जाँच डाक्टर से अवश्य कराते रहें।
- गोदामों में जब फ्यूमीगेंट का प्रयोग करें तो उन्हें सील बन्द कर देना चाहिये।
- विषकता के लक्षण नजर आते ही डाक्टर को तुरन्त बुलाइयें एवं लेविल सहित पैकिंग डाक्टर को दिखाने के लिये सुरक्षित रखें।
- स्प्रे मशीनों को कभी भी तालाब या नदी में नहीं धोना चाहिये। बल्कि बंजर जगह या गड्डे में धोना चाहिये।
- यह बात ध्यान देने योग्य हैं कि जो कीटनाशक दवायें कीड़ों को मारती हैं वह मनुष्य, पशु, पक्षी और मछलियों को भी मार सकती है। अतः प्रयोग करते समय बहुत ध्यान देना चाहिये।
- अगर दवा छिड़काने वाले व्यक्ति को, किसी प्रकार की अस्वस्थता, सिरदर्द आदि होने लगे तो उसे काम छोड़कर आराम करना चाहिये। इसलिये छिड़कने या भुरकाव के काम के लिये दो आदमियों को एक साथ होना बहुत जरूरी है।
- यदि दवा पेट में पहुँच गई है तो गर्म पानी नमक सहित तब तक पिलाना चाहिए जब तक वह उल्टी न करने लगे। इससे पेट के अन्दर की दवा बाहर आ जायेगी।
- अगर दवा कटे भाग से शरीर में प्रवेश कर गई है तो फिर साबुन से उस भाग को बार बार धोना चाहिये।
- दवा से उपचारित बीज कभी नहीं खाना चाहिये।
- छिड़कते समय जो कपड़े पहने हो उन्हें अन्य कपड़ों से अलग धोना

चाहिये।

- टिन, बोरी आदि को खोलने के लिये चाकू रखना चाहिऐ।
- फर्स्ट एड बाक्स हमेशा साथ रखना चाहिये।
- निकटतम चिकित्सक का मोबाइल नम्बर नोट करके रखना चाहिये।

प्राथमिक उपचार

- जब धूम्रण विष साँस के द्वारा शरीर के अन्दर चला जाये तो रोगी को खुले वायु में रखकर कृत्रिम हवा देनी चाहिए।
- अगर कीटनाशक शरीर के किसी भाग पर लग जाय तो उसे तुरन्त साबुन से धो लेना चाहिए और खुरचकर हटा देना चाहिए।
- अगर आँख में कोई कण या बूँद चला जाय तो पानी से धो लेना चाहिए।
- आवश्यकता होनें पर डाक्टर से परामर्श लेना चाहिए।

प्रतिबंधित कीटनाशक

डी0 डी0 टी0, लिंडेन, मिथाइल ब्रोमाइड, मिथाइल पैराथियॉन, सोडियम साइनाईड, एम0 ई0 एम0 सी0, मोनोक्रोटोफॉस, इंडोसल्फान ।

प्रयोग के लिए निषिद्ध कीटनाशक

एल्ड्रीन, बी0 एच0 सी0, कैल्सियम साइनाइड, क्लोरोडॉन, कॉपर एसीटोआर्सेनाइट, सिब्रोमोक्लोरोप्रोपेन, इन्ड्रीन, इथाईल मरक्यूरीक्लोराइड, इथाइल पैराथियॉन, हेप्टाक्लोर, मेनाजोन, नाइट्रोफेन, पाराक्वेट डाईमिथाइल सल्फेट, पेन्टाक्लोरोनाइट्रोबेन्जीन, पेन्टाक्लोरोफेनॉल, फेनाइल मरक्यूरी एसीटेट, सोडियम मिथेन आर्सोनेट, टेट्राडिफॉन, टॉक्साफेन, अल्डीकार्ब, क्लोरोबेन्जीलेट, डाईल्ड्रीन, मलेयिकहाइड्राजाईड, इथाइल डाइब्रोमाइड, टी0 सी0 ए0।

उपर्युक्त बातों पर ध्यान रखा जाये तो कीटनाशक दवाओं से लाभ तो होगा ही और किसी भी प्रकार की दुर्घटना से भी बचा जा सकेगा। साथ में फसल की पैदावार और खुशहाली बढ़ेगी।

बरषा बिगत सरद रितु आई। लछिमन देखहु परम सुहाई।

फूलें कास सकल महि छाई। जनु बरषाँ कृत प्रगट बुढ़ाई।।

भावार्थः— *हे लक्ष्मण ! देखो, वर्षा बीत गई और परम सुंदर शरद् ऋतु आ गई। फूले हुए कास से सारी पृथ्वी छा गई। मानो वर्षा ऋतु ने (कास रूपी सफेद बालों के रूप में) अपना बुढ़ापा प्रकट किया है।*

स्रोत : रामायण किसकिन्धा काण्ड

थनैला : पशुओं में होने वाला एक घातक रोग

सत्यव्रत सिंह, रमाकान्त एवं जितेन्द्र प्रताप सिंह

पशु औषधि विज्ञान विभाग, पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशु पालन महाविद्यालय
नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, फैजाबाद

थन (अयन या स्तन) के शोध को थनैला कहते है। यह विशेषकर अधिक दुग्ध उत्पादन वाले मादा पशुओं का प्रमुख रोग है। इस रोग से पशु अपने जीवनकाल में कम से कम एक बार तो ग्रसित होता ही है। इस रोग के कारण पशुओं की दुग्ध उत्पादन क्षमता कम हो जाती है। दूध की गुणवत्ता में भी गिरावट आती है तथा दूध को फेंकना पड़ता है क्योंकि यह दूध स्वास्थ के लिए हानिकारक होता है। इस रोग का उपचार भी काफी कठिन तथा महंगा होता है। समय पर समुचित उपचार न मिलने पर अथवा उचित उपचार के अभाव में प्रभावित थन पूरी तरह अनुपयोगी हो जाता है। अतः यह रोग पशुपालकों के लिए आर्थिक दृष्टि से बहुत हानिकारक होता है।

कारण

थनैला रोग अनुचित पशु प्रबन्धन, सुस्त या कमजोर रोग नाशक क्षमता तथा संक्रमण के लिए उचित पर्यावरण के मिश्रण से उत्पन्न होता है। इस रोग के लिए जिम्मेदार कीटाणु सामान्यतः वातारण में पाए जाते है। अतः यह रोग अधिकतर वर्षा ऋतु में होता है क्योकि उस समय वातारण विभिन्न जीवाणुओं की संख्या वृद्धि के लिए अनुकूल होता है। अनुचित पशु प्रबन्धन के प्रमुख उदाहरण है–

- दुहने के समय सफाई न रखना
- रोगी पशु को स्वस्थ पशु के साथ पशु को बिना हाथ साफ किए दुहना।
- नियमित रूप से दुहाई न करना।
- दूध निकालने के बाद पशु को तुरन्त बैठने देना।

इन सभी कारणों से थनैला के कारक कीटाणु वातावरण में अथवा थन के चारो तरफ फैल जाते हैं। यदि सफाई न रखी जाए तो इन कीटाणुओं की संख्या में वृद्धि होती रहती है। रोगी पशु का दूध इन कारको का प्रमुख स्रोत होता है तथा दोहने के समय ये किटाणु दूध के द्वारा भारी मात्रा में वातावरण में आते हैं। साथ ही यदि ग्वाला रोगी पशु को पहले दूह कर स्वस्थ पशु को दूहता है तो यह किटाणु उसके हाथों द्वारा स्वस्थ पशु के अयन पर आ जाते हैं। प्रायः दूध दोहने के बाद दूध की कुछ बूँदे थन पर लगी रहती है और जब पशु नीचे बैठता है, तो पृथ्वी पर गंदगी के सम्पर्क में आने पर, वहाँ मौजूद थनैला रोग के जीवाणु अयन पर लग जाते हैं। दोहने के बाद थन के छिद्र भी खुले रहते हैं। अतः इस अवस्था में यह कीटाणु थनों के छिद्रों द्वारा थन में आसानी से प्रवेश कर जाते हैं तथा संक्रमण उत्पन्न करते हैं। इस प्रकार एकत्र जीवाणु पशु के थन पर हुए घाव या चोटों द्वारा भी थन नलिका में प्रवेश कर जाते हैं। थनों की नली के माध्यम से जीवाणु अयन में ऊपर पहुँच कर अपनी संख्या में भारी वृद्धि करते हैं। जीवाणु पशु के थन में ताप व सूजन पैदा करके उनकी कोशिकाओं को हानि पहुँचाते हैं। धीरे–धीरे अयन के अन्दर की कोशिकाएं नष्ट व कठोर हो जाती हैं तथा उनमें दूध बनना बन्द हो जाता है।

वर्षा ऋतु में वातावरण इन कीटाणुओं की वृद्धि के लिए अत्यधिक अनुकूल होता है। अतः इस समय यदि सफाई की तरफ ध्यान नहीं दिया जाता है तो इस रोग के होने की सम्भावना बढ़ जाती हैं इसी प्रकार यदि पशु की रोग नाशक क्षमता कमजोर हो तब भी यह रोग तुरन्त तीब्र रूप धारण कर लेता है।

लक्षण

थनैला रोग से ग्रसित पशु के थन तथा दूध में खराबी उत्पन्न हो जाती है। इन्ही परिवर्तन तथा तीब्रता के आधार पर थनैला रोग को चार प्रकार में बाँटा जाता है। तीब्र थनैला रोग को चार प्रकार में बॉटा जाता है।

तीब्र थनैला रोग

इस दशा में पशु के शरीर का तापमान बढ़ जाता है। अयन में सूजन करता है तथा वह लाल और गर्म प्रतीत होता है। पशु दर्द का अनुभव करता है। थनों से दूध का निकलना बन्द हो जाता है थन से दही के समान फटा फटा सा या मवाद की तरह या लार की तरह द्रव निकलता है । कभी–कभी दूध रक्त मिला हुआ निकलता है।

कम तीव्र प्रकार

थनैला रेाग के इस प्रकार में रोग की तीव्रता काफी कम होती है। सूजन काफी कम होता है। दूध असमान्य रहता है। अयन भी सामान्य की अपेक्षा ज्यादा सख्त रहता है। पशु के शरीर का तापमान सामान्य होता है । यद्यपि प्रभावित पशु को कम परेशानी होती है, परन्तु अधिक दिनो तक इस रोग के रहने के कारण थनो के खराब होने की सम्भावना बढ़ जाती है।

चिरका (दीर्घ कारिक) थैनला रोग

थनैला रोग के इस प्रकार में रोग कई सप्ताहों एवं महीनो तक थन को प्रभावित किए रहता है और अन्ततः प्रभावित थन को बेकार बना देता है। अयन ठंडा व कठोर हो जाता है। थन दबाने पर उसमें दर्द का अनुभव नहीं होता।

अतिदीर्घ कारकीय थनैला रोग

यह रोग लगभग 70 प्रतिशत दुधारू पशुओं को प्रभावित करता है। इस अवस्था में पशु के थन तथा दूध में कोई भी बदलाव नजर नहीं आता तथा पशु पूरी तरह स्वस्थ दिखाई देता है। प्रयोगशाला में दूध की जाँच के उपरान्त ही इस रोग का पता लगाया जा सकता है। इससे दूध का उत्पादन कम हो जाता है। जैसे ही पशु की रोग प्रतिरोधक क्षमता कमजोर पड़ती है तो तीव्र थनैला उत्पन्न हो जाता है।

उपचार

रोगी पशु का शीघ्र उपचार करवाना चाहिए। तुरन्त चिकित्सा नहीं करवाने पर पशु का अयन बेकार हो जाता है और दूध निकलना बन्द हो जाता है। संक्रमण को ठीक करने के लिए पशु को नियमित रूप से सुबह–शाम एन्टीबायोटिक औषधियों की सूई देनी चाहिए। यदि सम्भव हो तो प्रयोगशाला में दूध भेजकर यह पता लगवा लेना चाहिए कि कौन सी ऐन्टीबायोटिक सबसे अधिक कारगर है। ऐसा करने से पशु की दशा में तुरन्त सुधार देखा जा सकता है। साथ ही में सूजन कम करने हेतु भी सुई लगवानी चाहिए। प्रभावित थनो में एन्टीबायोटिक औषधि चढ़ाई जा सकती है। थनो में लगी हुई चोटो का समुचित उपचार करना आवश्यक है। बाह्य उपचार के रूप में मैगसल्फ, या बोरिक एसिड द्रव से थन को धोना चाहिए। थन पर मैस्टीलेप, डर्मीनाल, विस्प्रैक नामक लेप लगाने से काफी आराम मिलता है।

रोकथाम

थनैला रोग पशुओ में आमतौर पर गन्दगी के कारण होता है। अस्वच्छता इस रोग के फैलने का मुख्य कारण है, अतः स्वच्छता सम्बन्धी उपाय सर्वाधिक उपयोगी हो जाता है। इस रोग की रोकथाम के लिए निम्न उपाय आवश्यक है :–

- पशुओ के अयन को दूध दोहने के पहले व बाद में स्वच्छ पानी से धोना चाहिए। इसके लिए लाल दवा या डीटौल आदि का प्रयाग किया जा सकता है।
- धोने के बाद अयन को साफ कपड़ें से पोंछना चाहिए।
- दुहने के बाद पशु को कुछ देर तक बैठने नहीं देना चाहिए।
- थनैल रोगी पशु का दूध बाद में निकालना चाहिए, पहले स्वस्थ पशुओं को दुहना चाहिए।
- प्रभावित पशु के स्वस्थ थन का दूध पहले निकालना चाहिए।
- पशुओं का दूध दुहने वाले ग्वालों की साफ सफाई का विशेष घ्यान रखना चाहिए। खासी या अन्य रोग होने पर उन्हें पशुओं का दूध नहीं निकालने देना चाहिए। ग्वालो के हाथो, नाखून आदि की पूर्णतया सफाई रखनी चाहिए।
- पशुशाला की सफाई पर विशेष घ्यान देना चाहिए। पशुशाला के फर्ष को कीटनाशक दवाओं के घोल से धोना चाहिए।
- पशु के अयन से पूर्ण रूप से दूध निकाल लेना चाहिए। यदि किसी कारणवश थन में दूध ठहर जाता है तो यह कारक कीटाणुओं की सख्या वृद्धि के लिए लाभदायक होते है।
- पशुओं को संतुलित आहर देना चाहिए।
- रोग की प्रारम्भिक अवस्था में ही किसी योग्य पशु चिकित्सक द्वारा उपचार करवाना चाहिए।

पशुओं में नवजात बच्चों की मृत्युदर रोकने के उपाय

राकेश कुमार सिंह, आर.के. सिंह एवं अखिलेश कुमार सिंह

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

संकर नस्ल की बछिया में उनके प्रथम ब्याँत तक मृत्युदर लगभग 30 प्रतिशत देखी गयी है। जिसमें लगभग 20 प्रतिशत बछियों की मौत उनके तीन माह की उम्र में ही हो जाती है। अतः नवजात बच्चों के जीवन की प्रारभिक अवस्था में उचित प्रबन्धन पर ज्यादा ध्यान देने की आवश्यकता है जिससे उनकी मृत्युदर को कम किया जा सके। आज की बछिया कल की होने वाली गाय है। जन्म से उसकी अच्छी तरह से ही यह अच्छी गाय भैस बन सकती है अगर जन्म के समय ही बछिया का वजन लगातार तेजी से बढ़ता है तो वह सही समय पर गाय/भैस बन जाती है।

प्रसव के दौरान एवं प्रसव के पश्चात् बछड़े बछिया की देखभाल निम्न तरीकों से सिलसिलेवार करनी चाहिए जिससे उनमें मृत्युदर कम हो सके।

प्रसव की प्रक्रिया

बछड़े–बछियों को ब्याने की प्रक्रिया का कुल समय 30 मिनट से 2.5 घंटों का हो सकता है। अगर इसमें 2.5 से 3 घंटे से अधिक समय लग रहा हो तो इसका मतलब है बछड़े बछड़िया का कोई अंग या भाग माँ के योनि में फंस रहा है। अतः चिकित्सक की मदद से बच्चों को बाहर निकालना चाहिए अन्यथा शिशु की मृत्यु होने का खतरा बढ़ जाता है।

बच्चों का साँस लेना

बच्चे को जन्म के 30 सेकण्ड से 1 मिनट के पश्चात साँस लेना शुरू कर देना चाहिए। अगर साँस लेना शुरू नहीं करता है तो बच्चे की नाक मुँह की सफाई साफ कपड़े से करनी चाहिए, साथ ही उसका पिछला भाग उठाकर कृत्रिम साँस देना शुरू कर देना चाहिए।

बछड़े–बछिया की सफाई

बछड़े–बछियों के जन्म के बाद उसके नाक मुँह की सफाई साफ कपड़े से करनी चाहिए साथ ही उसके पूरे बदन को कपड़ों से रगड़कर अच्छी तरह सुखा देना चाहिए। बछड़े–बछियों की सफाई के लिए हम उसकी माँ की मदद ले सकते है। इसके लिए बच्चों को उसके माँ के पास बाँधकर रखना चाहिए जिससे माँ आपनी जीभ से बच्चों को चाट–चाट कर सुखा देती है। इस विधि से माँ तथा बच्चों, दोनों को लाभ पहुँचता है। माँ को प्राकृतिक लवण मिनिरल की पूर्ति के साथ–साथ बच्चे के शरीर में रक्त का संचार भी बढ़ता है। बछड़े–बछियों को ब्याने के एक घंटे के अन्दर अपने पैरों पर खड़ा हो जाना चाहिए। अन्यथा किसी के सहारे खड़ा करने की कोशिश करनी चाहिए।

नाभि नाल को काटना

शिशु जन्म के पश्चात नाभि नाल ही एक ऐसा रास्ता है जिससे रक्त में संक्रमण हो जाता है और नाभि नाल में सूजन तीव्र बुखार तथा घुटने में सूजन की बीमारी का खतरा बढ़ जाता है। नाभि नाल को काटने में सावधानी की जरूरत होती है। नाल को बच्चे के शरीर से 2–3 इंच दूर छोटे धागे से कसकर बांधने के पश्चात ही नये ब्लेड या कैंची से काटना चाहिए इसके बाद नाल को 10 प्रतिशत आयोडीन के घोल में 1 मिनट तक डुबाकर रखना चाहिए।

खीस पिलाना

बछड़े–बछियों के ब्याने के 1.5–2.0 घंटे के अन्दर खीस पिला देना चाहिए। खीस पिलाने के लिए जेर गिरने की राह नहीं देखनी चाहिए। खीस पिलाने से बच्चों का कई खतरनाक रोगों से बचाव होता है। बच्चों को उसके वजन का 10 प्रतिशत खीस प्रत्येक दिन ब्याने से 3–4 दिन तक देना चाहिए। एक बार में 500 ग्राम से अधिक खीस नहीं पिलाना चाहिए। गाय की खीस निकालकर तुरन्त ही जब खीस गरम ही रहे साफ बर्तनों में पिलाना चाहिए। बच्चे बर्तन से दूध पीना आसानी से सीख लेते है। इसके लिए पतली अंगुली को दूध के बर्तन में डालकर बच्चे के मुँह के पास ले जाना चाहिए। बच्चे पहले अंगुली चाटते हैं, फिर दूध पीने लगते है। किसी कारणवश माँ से खीस न मिल सके या गाय की मृत्यु हो जाती है, तब ऐसी परिस्थिति में कोई और गाय आस–पास ब्याई हो तो उसका खीस पिलाया जा सकता है। अन्यथा बच्चे कृत्रिम खीस (साधारण दूध 500 मि.ली. अरंडी का तेल 15 मि.ली. अंडे की जरदी) घर पर बनाकर पिलाना चाहिए। कृत्रिम खीस दिन में तीन बार पिलाना चाहिए।

प्रथम गोबर निकालना

ब्याने के 2–2.5 घंटे के पश्चात बच्चे को पहला गोबर कर देना चाहिए अन्यथा 10–15 मि.ली. अरंडी का तेल पिला देना चाहिए। इसके प्रथम गोबर निकल आयेगा। यदि मलद्वार बन्द है तो तुरन्त चिकित्सक के पास जाना चाहिए।

बच्चों को पालने की विधि

प्राकृतिक विधि

बछड़े– बछियों को गाय के साथ रखकर पालन किया जाता है। इस विधि से दूध दुहने से पूर्व बच्चों को सीधे थन से दूध पिलाया जाता है। जिससे दूध थन से निकलना शुरू हो जाता है और फिर दूध निकाले के बाद बच्चों को माँ के पास खुला छोड़ देते है। जिससे बच्चा मन मुताबिक दूध पी लेता है। यह विधि आमतौर पर गाँवों में प्रचलित है। मगर इस विधि से कई हानियां भी हो सकती है जैसे गाय के द्वारा दूध की दी जाने वाली मात्रा का सही सही पता नहीं लगता है, माँ से बच्चों को बीमारी आ सकती है, बच्चों के पोषण पर खर्च अधिक होता है एवं यदि बच्चा मर जाये या बेच दिया जाय तो गाय दूध देना बन्द कर देती है।

बच्चों को माँ से अलग कर पालन पोषण वीनिंग करना

इस विधि में बच्चे को 24 घंटे के अन्दर माँ से अलग कर देते है तथा बच्चे का पालन पोषण वैज्ञानिक विधि से किया जाता है। प्राकृतिक विधि से पालन में होने वाली कठिनाइयों से निजात पाने में यह सहायक है। इस विधि से पोषण करने पर बच्चों को निश्चित मात्रा में दूध पिलाया जाता है। बच्चे की मृत्यु के पश्चात भी माँ दूध देती है और बच्चें के झुंड से किसी भी समय बाहर निकाल सकते है।

दुग्धपान कराना

4–5 दिन तक खीस पिलाने के पश्चात बच्चों को 2.0–2.5 लीटर तक प्रतिदिन दूध पिलाना चाहिए। दूसरे सप्ताह से यह मात्रा बढ़ाकर 3.5 लीटर तक कर देनी चाहिए तथा इसे 6–7 सप्ताह तक देते रहना चाहिए। दो माह बाद दूध की मात्रा शिशु के भार के 20 प्रतिशत हिस्से के बराबर होनी चाहिए। पिलाने के पश्चात बच्चे का मुह साफ एवं गीले कपड़े से पोंछ देना चाहिए। 1 माह पश्चात बच्चों को दूध पिलाने के साथ धीरे–धीरे गेहूँ का चोकर, दलिया, पिसा हुआ मक्का इत्यादि 0.5–2 किग्रा खाने की आदत डालना चाहिए। साथ ही यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उक्त दाने में प्रति दिन 10 ग्राम मिनिरल मिश्रण अवश्य हो।

बच्चों के लिए आवास व्यवस्था

6 माह की उम्र तक प्रत्येक बच्चे को अलग–अलग रखना चाहिए। इसके लिए तार की मोटी जाली के 1 मीटर के व्यास से गोल घेरा बना लें जिसके अन्दर एक बच्चे को रखा जा सकता है। बछड़ा गृह में पक्के आयताकार, एक लाइन में 1.2 मी. से 1.5 मी. के खाने बना सकते हैं, जिससे एक बच्चा एक खाने में रखा जा सके। 6 माह बाद बच्चे को समूह में रखा जा सकता है। बच्चे का आवास साफ एवं सूखा होना चाहिए, जिससे निमोनिया आदि बीमारी से बचाव किया जा सके। बच्चे का आवास ऐसा होना चाहिए जहाँ सूर्य का प्रकाश सीधे आता हो तथा वायु का संचार भी पर्याप्त हो। आवास में गर्मी में गर्म हवा से तथा जाड़े में ठण्डी हवा से बचाव की व्यवस्था होनी चाहिए।

बीमारियों से बचाव

1.5 से 2 माह की उम्र के पश्चात बच्चों को पेट के कीड़े मारने की दवा पिपराजीन एलबेन्डाजोल आदि अवश्य देनी चाहिए। यह दवा साल में दो बार देनी चाहिए। जन्म से तीन माह के पश्चात मुँहपका खुरपका नामक बीमारी की रोकथाम के लिए टीका अवश्य लगवाना चाहिए। इस टीके के पश्चात गलाघोंटू बीमारी का टीका लगवाना चाहिए। समय–समय पर बच्चों के शरीर पर वाह्य चिचड़ों की रोकथाम के लिए पशु चिकित्सक की सलाह से ब्यूटाक्स आदि दवा का छिड़काव करना चाहिए, जिससे उसके वजन बढ़ने में मदद मिल सके।

पशुओं में होने वाले एन्थ्रेक्स रोग के कारण, लक्षण, उपचार एवं बचाव

रमाकान्त, सत्यव्रत सिंह एवं जितेन्द्र प्रताप सिंह

पशु औषधि विज्ञान विभाग, पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशु पालन महाविद्यालय,
नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, फैजाबाद

एन्थ्रेक्स गाय एवं भैसों में होने वाला संक्रामक रोग है। गाय एवं भैसों के अलावा यह रोग भेड, बकरियों एवं मनुष्यों में भी पाया जाता है। एकाएक संक्रमित पशु की मृत्यु हो जाना और संक्रमित पशु के वाह्य छिद्रों से गहरें रंग के रक्त का स्त्राव होना इस रोग के प्रमुख लक्षण है। इस रोग को अन्य नामों से भी जाना जाता है जैसे स्पीलिनिक फीवर, चारबोन, हाइड पोर्टर रोग।

कारण

यह रोग *बैसिलस एन्थ्रासिस* नामक जीवाणु से होता है। इस जीवाणु की लम्बाई लगभग 4–8 माइक्रोमी. और चौड़ाई लगभग 1–1.5 माइक्रोमी. होती है।

रोग से प्रभावित क्षेत्र

यह रोग संसार के समस्त भागों में पाया जाता है। कभी–कभी यह रोग एक निश्चित क्षेत्र में पाया जाता है उस निश्चित क्षेत्र को ऐन्थ्रक्स बेल्ट के नाम से भी जाना जाता हैं।

रोग के होने का समय

हमारे देश में एन्थ्रेक्स रोग के होने का खतरा बारिश के महीनों में ज्यादा होता है।

रोग के फैलने का तरीका

- पशु द्वारा इस जीवाणु के स्पोर को जमीन की सतह से खा लेना या प्रभावित क्षेत्र पर उगने वाले चारे को खा लेना।
- संक्रमित चारे और पानी को स्वस्थ पशु द्वारा खा लेना।
- इस रोग को फैलाने में कुछ काटने वाली मख्खियाँ भी सहायता करती है जैसे *स्टोमाक्स* और *टेबानस* लाई।
- संक्रमित पशुओं के माँस, ऊन और बोनमील से भी बीमारी फैलती है।

रोग के प्रमुख लक्षण

- पशु में तेज बुखार का आना।
- संक्रमित पशु चारा एवं पानी लेना बंद कर देता है।
- पशु सुस्त हो जाता है।
- नब्ज का चलना तेज हो जाता है।
- हृदय गति एवं श्वसन दर बढ़ जाती है।
- गाभिन पशु में गर्भपात हो सकता हैं।
- पशु दूध देना कम कर देता है दूध का रंग हल्का लाल या गहरे पीले रंग का हो सकता है।
- बिना थक्का बना हुआ रक्त का शरीर के वाह्य छिद्रों से मलद्वार, मुँहगुहा, नाक या कान के रास्ते से स्राव होना।
- स्रावित रक्त गहरे टारी रंग का होता है।

रोग का उपचार

इस रोग के उपचार में पेन्सिलिन नामक एन्टिबायोटिक सबसे ज्यादा प्रभावी है। पेन्सिलिन को शारीरिक भार के हिसाब से दिन में दो बार 5 से 7 दिन तक दिया जाता है। पेन्सिलिन और स्ट्रैप्टोमाइसिन को संयुक्त रूप से 10 मिग्रा./किग्रा. शारीरिक भार के हिसाब से भी 3 से 5 दिनों तक दिया जा सकता है। बुखार कम करने के लिए एनालजिन 40 मिग्रा./किग्रा. शारीरिक भार या मिलाक्सीकेम 0.5 मिग्रा./किग्रा. शारीरिक भार के हिसाब से पशु के माँस में इंजेक्शन लगाकर दिया जा सकता है। हिस्टामीन के प्रभाव को कम करने के लिए क्लोरफिनरामीन मैलेट 10–20 मिली. वयस्क पशु के हिसाब से माँस में इंजेक्शन लगाकर दिया जा सकता है।

रोग से रोकथाम

- संक्रमित पशु को स्वस्थ पशु से अलग रखें।
- संक्रमित पशु को प्रशिक्षित पशु चिकित्सक से उचित इलाज करवायें।
- संक्रमित पशु के बिछौने और संक्रमित पशु से संम्बन्धित अन्य वस्तुओं को जला दें।
- इस बीमारी से मरे हुए पशु का शव विच्छेदन न करायें जिससे रोग को फैलने से रोका जा सके।
- मरे हुए जानवर को आबादी से दूर ले जाकर लगभग 2 मीटर गहरा गढ्ढा बनाकर उसमें कैल्शियम कार्बोनेट डाल कर मिट्टी से दबा दें।
- स्वस्थ पशु का उचित समय पर टीकाकरण करायें टीकाकरण के लिए एन्थ्रेक्स स्पोर वैक्सीन का प्रयोग किया जाता है। गाय एवं भैस में 1 मिली. प्रति पशु के हिसाब से सबक्युटेनियस विधि से लगाते है। इस रोग से बचाने के लिए पशु को टीका प्रतिवर्ष लगाया जाता है।

गन्ने की प्राचीन प्रजातियाँ तथा उनके भेषज्य गुण

अशोक श्रीवास्तव, सुशील सोलोमन, अनीता सावनानी, गोपी कृष्ण गुप्त एवं सोमेन्द्र शुक्ल

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

हमारे प्राचीन ग्रन्थों में गन्ने की प्रजातियों का उल्लेख मिलता है। मत्स्य पुराण में श्वेत ईख का उल्लेख है। आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रन्थ **भावप्रकाश निघण्टू** में गन्ने को पंचतृणम् वर्ग में रखा गया है। गन्ने को इक्षु, दीर्घच्छद, भूरिरस, गुड़मूल तथा मधु तृण नामों से भी जाना जाता था। उस समय प्रचलित प्रजातियों में पौण्ड्रक, भीरूक, वंशक, शतपोरक, नीलपोर, तापसेक्षु, काण्डेक्षु, सूचिपत्रक, नेपाल, दीर्घपत्रक, नीलपोर, कोशकृत, मनोगुप्त आदि थी जिनमें कुछ प्रजातियों तथा उनके रस के भेषज्य गुण दोषों का वर्णन भी मिलता है।

मत्स्यपुराण के हिमालय की अनोखी शोभा तथा अत्रि–आश्रम का वर्णन सम्बन्धी एक सौ अठ्ठारहवें अध्याय में उल्लेख है कि महाराज पुरूरवा पर्वत राज हिमालय के परम, सुरम्य पर अगम्य प्रदेश में पहुँचे। वहाँ से श्रेष्ठ ऐरावती नदी निकली थी। वह प्रदेश मेघों के समान श्यामल तथा अनेक प्रकार के वृक्ष समूहों से घिरा हुआ था। इन वृक्ष समूहों में एक **श्वेत ईख** भी थी। (पृष्ठ 396–402)

गुग्गुलवृक्षैश्च हिन्ताल धवलेक्षुभिः।

तृण शून्यैः करवीरैरशो

केश्चक्रमर्दनैः।।21।।

कुश और ईख के परम मनोहर, रमणीय झाड़ियों तथा मनोरम एवं दुर्गम कपास और मालती वृक्षों तथा लताओं से प्रदेश सुशोभित हो रहा था।

भावप्रकाश निघण्टु, आचार्य भाव मिश्र द्वारा (ई.सं. 1500–1600 में) द्रव्यगुण संबंधी विषय पर लिखा अद्वितीय आयुर्वेदिक ग्रंथ है। इसमें सभी प्रकार के द्रव्यों औद्भिद, प्राणिज तथा पार्थिव पदार्थों के भेषज्य गुण कर्मो का आयुर्वेदीय पद्धति से वर्णन किया गया है। आयुर्वेद में गन्ने को **पंचतृणम्** वर्ग में रखा गया है।

कुशः काशः शरो दर्भ इक्षुश्चैव तृणोद्भवम्।

पंचतृणमिदं ख्यातं तृणज पंचमूलकम्।।

कुश, काश, शर, दर्भ तथा इक्षु मिलाकर *पंचतृण* कहलाते हैं। यदि इनकी मूल ली जाये तो इसे *पंचतृण मूल* कहेंगे।

आयुर्वेदीय दृष्टिकोण से सुश्रुत संहिता में इसका निम्न रूप में उल्लेख मिलता है।

'इक्षवो मधुरा मधुर विपाका, गुरवः शीताः स्निग्धा बल्या वृष्या मूत्रला रक्तपित्त प्रशमनाः कृमिकराश्चेति।

(सुश्रुत संहिता, सू. 45)

गन्ना व इससे बने पदार्थ मधुर, गरिष्ठ, शीतल, स्निग्ध बल एवं वीर्य बढ़ाने वाले होते हैं। रक्त पित्त का शमन करते हैं तथा (पेट में) सूत्र कृमियों को बढ़ाते हैं।

'मत्स्यण्डिका–खण्ड शर्करा विमल जाता उत्तरोत्तरं शीताः स्निग्धा गुरूतरा मधुतरा वृष्या रक्तपित्त प्रशमना–स्तृष्णा प्रशमनाश्च।

(सुश्रुत संहिता, सू. 45)

मत्स्येंडी, खांण्ड व शर्करा क्रमशः अधिक मीठी, शीतल, स्निग्ध, रक्त पित्त एवं प्यास को मिटाने वाली होती है।

आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रंथ '**भाव प्रकाश निघण्टू**' के इक्षुवर्ग के अनुसार–

इक्षुर्दीर्घच्छदः प्रोक्तस्तथा भूरिरसोऽपि च।

गुडमूलोऽकसिपत्रश्च तथा मधुतृणः स्मृतः।।

इक्षवो रक्तपित्तघ्ना बल्या वृष्याः कफप्रदाः। स्वादुपाकरसः स्निग्धा गुरवो मूत्रला हिमाः।।

अर्थात् ईख (गन्ने) को ईक्षु, दीर्घच्छद, भूरिरस, गुड़मूल, तथा मधुतृण के नाम से जानते हैं। ये सभी रक्तपित्तनाशक, बल बढ़ाने वाले, वीर्यवर्धक, कफनाशी है। इनका रस मधुर, स्निग्ध, भारी, मूत्रल व शीतवीर्य है।

भाव प्रकाश निघण्टू गन्ने की प्रजातियों की निम्नवत् विवेचना करता है –

पौण्ड्रको भीरूकश्चापि वंशकः शतपोरकः। कान्तारतापसेतुश्च काण्डेक्षुः सूचिपत्रकः।।

नैपालो दीर्घपत्रश्च नीलपोरोऽथ कोशकृत।

मनोगुप्ता च इत्येता जातयस्तत्र कीर्त्तिताः।।

अर्थात् पौण्ड्रक, भीरूक, वंशक, शतपोरक, कान्तार, तापसेक्षु काण्डेक्षु, सूचिपत्रक, नेपाल, दीर्घपत्रक, नीलपोर, कोशकृत तथा मनोगुप्त आदि गन्ने की प्रजातियाँ हैं।

गन्ने की विभिन्न प्रजातियों के

गन्नों के गुण दोषों की व्याख्या करते हुए **भावप्रकाश निघण्टू** में उल्लेख है कि–

वातपित्तप्रशमनो मधुरो
रसपाकयोः।
सुशीतो वृंहणो बल्यः पौण्ड्रको
भीरूकस्तथा।।

अर्थात् पौण्ड्रक एवं भीरूक जातियों का गन्ना वात एवं पित्त का शमन करता है तथा इनका रस मधुर, अत्यन्त शीतल, रक्त–रसादिवर्धक एवं बलवर्धक है।

कोशकारो गुरूः शीतो
रक्तपित्तक्षयापहः।

अर्थात् कोशकृत गन्ना भारी, शीतल एवं रक्त पित्त तथा क्षयरोग को नष्ट है।

कान्तारेक्षुर्गुरूर्वृश्यः श्लेश्मलो
बृंहणः सरः।

अर्थात् कान्तार प्रजाति का गन्ना भारी, वीर्य वर्धक, कफ उत्पन्न करने वाला, रस रक्तादि वर्धक एवं सारक होता है।

दीर्घपोरः सुकठिनः सक्षारों वंशकः
स्मृतः।

अर्थात् लम्बी पोरियों वाला पर्व वाला 'दीर्घपोर' नामक गन्ना कठोर तथा स्वाद में क्षारीय होता है।

शतपर्वा
भवेत्किश्चित्कोशकारगुणान्वितः।
विशेषात्किश्चिदुष्णाश्च क्षारः
पवनापहः।।

अर्थात् अधिक पर्व वाला गन्ना, शतपर्व कोशकृत गन्ने के समान गुणों वाला क्षारीय, वातनाशक होता है तथा इसकी तासीर गर्म होती है।

तापसेक्षुर्भवेन्मृद्धी मधुरा
श्लेष्मकोपनी।
तर्पणी रूचिकृच्चापि वृष्या च
बलकारिणी।।

अर्थात् तापसेक्षु गन्ना कोमल, मधुर, रसयुक्त, कफ को बढ़ाने वाला, रूचिकार, तृप्तिप्रद, वीर्य एवं बल को बढ़ाता है।

एवं गुणैस्तु काण्डेक्षुः स तु
वातप्रकोपणः।

अर्थात् काण्डेक्षु नामक गन्ना भेषज्य गुणों में तापसेक्षु के समान होने के साथ–साथ वात को भी कुपित करता है।

सूचीपत्रो नीलपोरो नैपालो
दीर्घपत्रकः।
वातलाः कफपित्तघ्नाः सकशाया
विदाहिनः।।

अर्थात् सूचीपत्र, नील पोर, नैपाल तथा दीर्घपत्रक नामक गन्ने की प्रजातियाँ वातजन्य, कफ एवं पित्तनाशी, कषैले रस वाली एवं विदाही होती हैं।

मनोगुप्ता वातहरी
तृष्णाऽऽमयविनाशिनी।
सुशीता मधुराऽतीव
रक्तपित्तप्रणाशिनी।।

अर्थात् मनोगुप्त नामक गन्ना वात, तृष्णा नाशक मधुर, रक्तपित्त नाशक एवं तासीर में अतिशीतल होता है।

संदर्भ

मत्स्यपुराणांक, *कल्याण*, वर्ष 58 संख्या 1, पृ. 468 (1984)।

भावप्रकाश निघण्टू, (पाण्डेय, गंगा प्रसाद एवं चुनेकर कृष्ण चन्द), चौखम्बा भारती एकेडमी वाराणसी, पृ. 984 (2002)।

रस रस सूख सरित सर पानी। ममता त्याग करहिं जिमि ग्यानी।
जानि सरद रितु खंजन आए। पाइ समय जिमि सु.त सुहाए।।

भावार्थः– *नदी और तालाबों का जल धीरे–धीरे सूख रहा है। जैसे ज्ञानी (विवेकी) पुरुष ममता का त्याग करते हैं। शरद ऋतु जानकर खंजन पक्षी आ गए। जैसे समय पाकर सुंदर सुकृत आ सकते हैं। (पुण्य प्रकट हो जाते हैं)।*

स्रोत : रामायण किसकिन्धा काण्ड

गन्ना तेरे उत्पाद अनेक : गन्ना तेरे उपयोग अनेक

राजेन्द्र गुप्ता[1] एवं रश्मि गुप्ता[2]

[1]भारतीय गन्ना अनुसंधाान संस्थान, लखनऊ
[2]बी.एस.एन.वी. पी.जी. कालेज, लखनऊ

गन्ना, घासकुल का एक महत्वपूर्ण गाँठदार लंबा पौधा है जिसका रस मीठा होता है। इसे ईख, इक्षु आदि भी कहते हैं। इक्षु, दीर्घच्छद, भूमिरस, गुड़मूल, असिपत्र, मधुतृण–संस्कृत में गन्ने के अनेक नाम हैं। गन्ने का हमारे जीवन में बहुत महत्व है। इसके मीठे रस से गुड़, चीनी आदि बनाये जाते हैं। हमारा कोई पर्व या उत्सव ऐसा नहीं होता जिस पर हम अपने बंधु–बांधवों और इष्ट–मित्रों का मुंह मीठा नहीं कराते हों। मांगलिक अवसरों पर लडडू, बताशे, गुड़ आदि बांटकर अपनी प्रसन्नता को मिल–बांट लेने की परम्परा तो हमारे देश में लम्बे समय से रही है। हमारे देश में मेहमानों या अनजान व्यक्तियों को पानी के साथ मीठा जैसे गुड, मिश्री, पेड़े आदि पेश करने की परम्परा चिर काल से चली आ रही है। आयुर्वेद के ग्रंथो में मधुर रस के पदार्थों से भोजन का श्रीगणेश करने का परामर्श दिया गया है। ब्रह्मांड पुराण में भोजन का समापन भी मीठे पदार्थों से ही करने का सुझाव है। एक ग्रंथ में तो भोजन में मूंग की दाल, शहद, घी और शक्कर का शामिल रहना अनिवार्य कहा गया है।

गन्ने की उत्पत्ति

गन्ने की खेती का प्रारम्भ लगभग 6000 ई.पू. न्यू गिनी में हुआ। लगभग 1000 ई.पू. मानव प्रवास मार्गों के साथ–साथ इसकी खेती धीरे–धीरे दक्षिण पूर्व एशिया, भारत और पूर्व में प्रशांत सागर के देशों में फैल गई। भारतीय उप महाद्वीप में गन्ने की खेती का एक बहुत लंबा इतिहास रहा है। सबसे पुराना संदर्भ अथर्ववेद (1500–800 ई.पू.) में मिलता है। भूमधयसागर के द्वीपों में गन्ने की खेती लगभग 600–1400 ई. के आस–पास आई। गन्ने को विश्व में फैलाने में अरबों का योगदान अद्वितीय रहा। वे अपने विजय अभियान के दौरान, 640 ई. के आसपास गन्ने को मिस्र ले गये और यहाँ से भूमध्यसागर के आस–पास के देशों जैसे सीरिया, साइप्रस, क्रेते आदि तक ले गये और अंत में 715 ई. के आस–पास गन्ना स्पेन तक पहुंच गया। पुर्तगाली 1420 ई. के आस–पास गन्ने को मडिरा लाये और यहाँ से गन्ना जल्दी ही कैनरी द्वीप, अज़ोरेस, और पश्चिम अफ्रीका पहुंच गया। कोलंबस ने 1493 ई. में गन्ने को कैनरी द्वीप से डोमिनिकन गणराज्य में पहुँचाया। फिर गन्ने की फसल 1520 ई. के बाद मध्य और दक्षिण अमेरिका और बाद में ब्रिटिश और फ्रेंच, वेस्टइंडीज तक पहुँच गयी। आज विश्व में 100 से अधिक देशों में गन्ने की खेती की जाती है। भारतीयों ने 350 ई. के आसपास, गुप्त वंश के शासनकाल में चीनी बनाने की विधि का पता लगाया।

मिठास का दूसरा नाम गन्ना

जब हम मिठास की बात करते हैं, विशेषकर भोजन में मिठास की, तो हमारा ध्यान बरबस गन्ने की ओर जाता है। इससे हम अनेक रूपों में मिठास प्रदान करने वाले पदार्थ प्राप्त करते हैं, जैसे–गुड़, राब, शक्कर, खांड, बूरा, मिश्री, चीनी आदि। प्राचीन भारतीय साहित्य (पुराण, आदि) में गन्ने के रस से बनी गुड़ और शर्करा के बारे में उल्लेख मिलता है। दक्षिण भारत में ताड़ से गुड़ और शक्कर तैयार की जाती है। पश्चिम एशिया के देश खजूर से गुड़ और शक्कर तैयार करते हैं। यूरोपीय देश चुकंदर से चीनी तैयार करते हैं। फिर भी चीनी या उसकी शाखा–प्रशाखाओं को प्राप्त करने का सबसे प्रमुख स्रोत गन्ना ही है। विश्व में जितने क्षेत्र में गन्ने की खेती की जाती है, उसका लगभग आधा हमारे देश में है। गन्ने की फसल हमारे देश की सबसे महत्वपूर्ण व्यावसायिक फसलों में से एक है और चीनी उद्योग हमारे देश के प्रमुख उद्योगों में है। हालांकि इस उद्योग को बहुत पुराना नहीं कहा जा सकता चूंकि चौथे दशक के बाद, या दूसरे महायुद्ध के दौरान ही इसका तेजी से विकास हुआ है। किन्तु शक्कर, गुड़, मिश्री आदि के बारे में यह बात नहीं कही जा सकती। हजारों वर्षों से यह उद्योग यहां स्थापित हैं, एवं हम अति प्राचीन काल से ही विश्व के प्रायः सभी भागों को इनका निर्यात करते रहे हैं। प्राचीन रोम, मिस्र, यूनान, चीन, अरब आदि सभी देशों को ये वस्तुएं जाती रही हैं।

गन्ने का त्यौहारों में महत्व

विश्व के सभी धर्मों के त्यौहारों, उत्सवों में मीठे का बहुत ही महत्व है। कोई भी त्यौहार या उत्सव मिठाई के बिना नहीं मनाया जाता है, चाहे वह होली की गुझिया हो या क्रिसमस का केक या फिर हो ईद की सिवई। ये सभी व्यंजन मीठे होते हैं और यह मिठास गन्ने से बनी चीनी से आता है। हिन्दुओं के त्यौहारों और उत्सवों जैसे होली, देव उठावनी एकादशी, दीपावली, छठ पूजा आदि में तो गन्ना मुख्य रूप से प्रयोग में

लाया जाता है।

गन्ने के औषधीय गुण

भारत में आयुर्वेद के जनक समझे जाने वाले चरक और सुश्रुत को गन्ने की विभिन्न जातियों, उससे बनने वाले विभिन्न पदार्थों और उनके औषधीय गुणों का ज्ञान था। चरक संहिता (200–300 ई.पू.), सुश्रुत संहिता (200–300 ई.पू.) और भावप्रकाश निघण्टु (1498 ई.) आदि आयुर्वेदिक ग्रंथों में तत्कालीन प्रचलित किस्मों, गन्ना के विभिन्न भागों से निकाले गये रस और बासी गन्ना आदि, के औषधीय गुणों का वर्णन किया गया है। चरक, कनिष्क (कुषाणवंश) के समकालीन समझे जाते हैं। कहते हैं, उन्होंने कनिष्क की एक रानी को भी गन्ने से बने पदार्थों का उपयोग कर एक असाधय रोग से मुक्ति दिलाई थी। कनिष्क का काल ईसवी सन् के प्रारम्भ से पहले का समझा जाता है, अर्थात लगभग दो हजार वर्ष पूर्व। आयुर्वेद के प्राचीन ग्रंथों में इक्षु वर्ग का पृथक उल्लेख है। रुपरंग के अनुसार उसकी अनेक जातियां हैं जैसे पौंड्रक, भीसक, वंशक, शतपोरक, करंतार तापसेक्ष, कांडेक्ष, सूचीपत्र, नैपाल, दीर्घपत्र, नीलापोर, कोशक आदि। पौंड्रक से ही उत्तर प्रदेश के पश्चिमी जिलों में गन्ने का एक नाम पौंड़ा भी पड़ गया है। यह सफेद या कुछ पीलापन लिए हुए होता है। पौंड्रक और भीरुक वात–पित्त नाशक, रस और पाक में मधुर, शीतल और बलकर्ता बताए गए हैं। कोशक भारी, शीतल और रक्तपित्त तथा क्षय को नष्ट करने वाला है। कांतारेक्षु काले रंग का होता है और भारी कफ पैदा करने वाला और दस्तावर है। दीर्घपोर कड़ा और वंशक क्षारयुक्त होता है। वंशक को बंबइया ईख भी कहते हैं। शतपोरक में गांठों की अधिकता होती है और गुण में वह बहुत कुछ कोशक के समान है। वह उष्ण, क्षारयुक्त और वातनाशक है। तापसेक्षु मृदु–मधुर, कफ कुपित करने वाला, तृप्तिकारक, रुचिप्रद और बलकारक है। कांडेक्षु में तापसेक्षु जैसे ही गुण होते हैं। किन्तु वात कुपित करता है। सूचीपत्र के पत्ते बहुत बारीक होते हैं। नीलपोर में नीले रंग की गांठें होती हैं। नेपाल देश में होता है और दीर्घपात्र के बड़े–बड़े पत्ते होते हैं। ये चारों प्रकार के गन्ने वात कर्ता, कफ पित्तनाशक, कसैले और दाहकर्ता हैं। मनोतृप्ता नामक गन्ना वातनाशक, तृषारोग नाशक, शीतल, अत्यंत मधुर और रक्तपित्त निवारक माना गया है। अवस्थानुसार भी गन्ने के गुणों में अंतर आ जाता है। बाल्यावस्था का गन्ना कफ बढ़ाने वाला, मेदा बढ़ाने वाला और प्रमेह रोग को नष्ट करने वाला होता है। युवा गन्ना वायुनाशक, स्वादु, कुछ–कुछ तीखा और पित्तनाशक होता है। पकने पर वह रक्तपित्त का नाश करता है, घावों को भरता है और बल–वीर्य में वृद्धि करता है। गन्ने के जड़ की ओर का नीचे का भाग अत्यंत मधुर, रसयुक्त और मध्य भाग मीठा होता है। ऊपर की ग्रंथि या पंगोली में खारा रस रहता है। अधिक काल तक रखे रहने से गन्ने के दूषित होने की संभावना रहती है। तब वह स्वाद में खट्टा, वातनाशक, भारी, पित्त–कफकारक, दस्तावर और बार–बार मूत्र लाने वाला हो जाता है। आग पर पकाया हुआ रस भारी, सन्निध, तीखा, वातकफनाशक, गोलानाशक और किंचित पित्त करने वाला होता है।

गन्ना स्वास्थ्यवर्द्धक एवं पौष्टिक माना गया है। आयुर्वेद के जनकों ने पाक, प्राश, अवलेह, आदि के रूप में हमारे लिए अनेक मधुर और बलवर्धक औषधियां तैयार की हैं। अतः हमारे जीवन में गन्ने के महत्व का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। सुश्रुत संहिता के अनुसार गन्ने को दाँतों से चबाकर उसका रस चूसने पर वह दाहकारी नहीं होता और इससे दाँत मजबूत होते हैं। अतः गन्ना चूस कर खाना चाहिए। लौह एवं कार्बोहाइड्रेट की प्रचुर मात्रा होने के कारण गन्ने का रस तुरन्त शक्ति एवं स्फूर्ति प्रदान करता है। इसमें खनिज तत्व एवं आर्गेनिक एसिड होने के कारण उपयोगी है। रक्त की कमी, अम्लपित्त रोगों में गन्ने का ताजा रस काफी फायदेमंद है। गन्ना शीतल पेय पदार्थ है यह एनीमिया, निम्न रक्तचाप, पीलिया, हिचकी, चर्म रोग, मूत्र रोग आदि में परम उपयोगी है। गन्ने का रस पेट, दिल, दिमाग, गुर्दे व आंखों के लिए विशेष लाभदायक है। यकृत की कमजोरी वाले, हिचकी, रक्तविकार, नेत्ररोग, पीलिया, पित्तप्रकोप व जलीय अंश की कमी के रोगी को गन्ना चूसकर ही सेवन करना चाहिए। इसके नियमित सेवन से शरीर का दुबलापन दूर होता है और पेट की गर्मी व हृदय की जलन दूर होती है। शरीर में थकावट दूर होकर तरावट आती है। पेशाब की रुकावट व जलन भी दूर होती है। मधुमेह, पाचनशक्ति की मंदता, कफ व कृमि के रोगवालों को गन्ने के रस का सेवन नहीं करना चाहिए। कमजोर मसूड़े वाले, पायरिया व दाँतों के रोगियों को गन्ना चूसकर सेवन नहीं करना चाहिए।

- गन्ने को चूसकर सेवन करने से पीलिया रोगी को लाभ होता है तथा गन्ने के रस में नीबू मिलाकर पीने से पीलिया जल्दी ठीक होता है। जौ का सत्तू खाकर ऊपर से गन्ने का रस पीने से पीलिया ठीक हो जाता है।
- गन्ने के रस में अदरक का रस एवं नारियल पानी मिलाकर सेवन करने से पाचन क्रिया सुधरती है साथ ही गले के विकारों का निवारण होता है।
- बुखार होने पर इसका सेवन करने से बुखार जल्दी उतर जाता है।

मन्द ज्वर में गन्ने का रस एक गिलास नित्य दो बार पीना लाभदायक है।

- एसीडिटी के कारण होने वाली जलन में भी गन्ने का रस लाभदायक होता है।
- दुबले लोगों को भी गन्ने का रस काफी फायदा करता है। गन्ने का रस तेजी से वजन बढ़ने में मदद करता है।
- गन्ने को दांतों से चूसकर सेवन करने से से कमजोर दांत मजबूत होते हैं।
- एक गिलास गन्ने का रस नित्य दो बार पीने से सूखी खाँसी में लाभ होता है। छाती की घबराहट जाती रहती है।
- ईख चूसते रहने से पथरी टुकड़े–टुकड़े होकर निकल जाती है। गन्ने का रस गुर्दे को साफ करने में मदद करता है और मूत्राशयशोघ और मूत्र मार्ग में संक्रमण जैसी स्थितियों में मूत्र प्रवाह को आसान बनाता है।
- ईख भोजन पचाता है, कब्ज़ दूर करता है, शक्तिदाता है। शरीर मोटा करता है। पेट की गर्मी को दूर करता है।
- खाने के बाद एक गिलास गन्ने का रस पीने से रक्त साफ होता है। गन्ने का रस पीने से रक्त और पित्त दोषों से होने वाली बीमारियाँ दूर हो जाती हैं।
- गन्ने का रस पीने से हिचकी बंद हो जाती है।
- गन्ने में कई प्रकार के यौगिक पाये जाते हैं जोकि प्रतिरक्षा प्रणाली को उत्तेजित करने में मदद करते हैं जिससे गन्ने का रस घाव पर लगाने से घाव जल्दी भरता है।

गुणकारी गुड़

गन्ने का रस निकालकर और औटा कर उससे विभिन्न पदार्थ तैयार किए जाते हैं, जैसे गुड़, राब, शक्कर, मिश्री, चीनी आदि। इन पदार्थों के भी गुणों में अंतर आ जाता है। गुड़ भारी, स्निग्ध, वातनाशक, मूत्रशोघक, मेदावर्धक, कृमिजनक और बलकर्ता है। पुराना गुड़ हलके पथ्य का काम देता है। वह अग्निकारक, बलदायक, पित्तनाशक, मधुर, वातनाशक और रुधिर को स्वच्छ करने वाला है। नया गुड़ अग्निकारक है। इसके सेवन से कफ, श्वांस, खांसी और कृमिरोग पैदा होते हैं। नित्य अदरक के रस में गुड़ मिलाकर खाने से कफ नष्ट होता है। हरड़ के साथ खाने से पित्तनाश होता है। सोंठ के साथ खाने से सम्पूर्ण वातविकार नष्ट होते हैं। इस प्रकार गुड़ त्रिदोषनाशक है। राब भारी, कफ और वीर्य बढ़ाने वाली है। यह वात, पित्त, मूत्रविकार आदि का निवारण करती है। मिश्री बलकारक हलकी, वात–पित्तनाशक, मधुर और रक्तदोष, निवारक होती है। खांड मधुर, नेत्रों को लाभ पहुंचाने वाली, वात–पित्तनाशक, स्निग्ध, बलकारक और वमननिवारक है। चीनी मधुर रुचिकारी, बात–पित्तनाशक, रुधिर दोष निवारक, दाहशांतिकर्ता, शीतल और वीर्य बढ़ाने वाली है। इससे मूर्छा, वमन और ज्वर में लाभ पहुंचता है। यही गुण गुड़ से बनी फूल चीनी में है।

शीरे से प्राप्त उत्पाद

चीनी बनाने के बाद बचे शीरे का किण्डवन करने के पश्चात आसवन करके मदिरा (रम) और अल्कोहल बनाया जाता है। रम का इतिहास 17 वीं शताब्दी से वेस्टइंडीज के उपनिवेशवाद के साथ ही शुरू हुआ है। शीरे से उत्पादित अन्य उत्पादों में बुटनाल (एक विलायक), लैक्टिक एसिड (एक विलायक), साइट्रिक एसिड (ज्यादातर खाद्य और पेय पदार्थों के लिए), ग्लिसरॉल, खमीर, आदि प्रमुख हैं। इथेनाल का उपयोग ईंधन, विलायक, सौंदर्य प्रसाधन और फार्मास्यूटिकल्स आदि में किया जाता है।

गन्ने की खोई और प्रेसमड

गन्ने की खोई को चीनी निर्माण के लिए आवश्यक ऊर्जा के उत्पादन के लिए ईंधन के रूप में प्रयोग किया जाता है। जो अतिरिक्त खोई बच जाती है उसे बिजली उत्पादन के काम में लाया जाता है। खोई का उपयोग कागज़ और पशु आहार बनाने में भी किया जाता है। गन्ने की खोई से बायोगैस भी बनाई जाती है। प्रेसमड को मिट्टी की उर्वरा शक्ति बढ़ाने के लिये कार्बनिक खाद के रूप में प्रयोग में लिया जाता है। प्रेसमड में अत्यधिक मात्रा में मोम होता है जिसे अलग करके पॉलिश और वेक्स पेपर बनाया जा सकता है।

गन्ने का सौंदर्य प्रसाधन में उपयोग

चीनी का एक आश्चर्यजनक उपयोग शरीर के बालों को हटाने के लिए है। चीनी, पानी और नींबू के रस का एक गर्म पेस्ट त्वचा पर लगाया जाता है। कपड़े की स्ट्रिप्स को पेस्ट के उपर चिपका दिया जाता है और फिर जल्दी से इन स्ट्रिप्स को खींचा जाता है जिससे स्ट्रिप्स के साथ बाल उखड़ जाते हैं। दक्षिण एशिया में प्राचीन काल से आज तक इस प्रक्रिया का उपयोग अवांछित बालों को हटाने में हो रहा है। मृत त्वचा को हटाने के लिए भी चीनी की चाशनी का इस्तेमाल किया जाता है।

बहुपयोगी पोदीना

विनीका सिंह[1], शालिनी ठाकुर[2] एवं दीपक राय[1]

[1]कृषि विज्ञान केन्द्र, भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
[2]गृह विज्ञान महाविद्यालय, गो.व.पं.कृ.एवं प्रौ. विश्वविद्यालय, उत्तराखंड

पोदीना एक सगन्धीय पौधा है। यह खाद्य उपयोग में लाने के अतिरिक्त प्रसाधन सामग्री, तेल व औषधि के रूप में भी प्रयोग किया जाता हैं। पोदीना की मुख्यतः पाँच प्रजातियाँ इस प्रकार हैं–

1. जापानी पोदीना– *मेन्था आरवेन्सिस*
2. वर्गामोट पोदीना– *मेन्था सिट्रेटा*
3. स्पीयर मिण्ट – *मेन्था स्पाईकाटा*
4. स्कॉच स्पीयर मिण्ट– *मेन्था ग्रेसीलिस*
5. पीपरा मिण्ट या काला पोदीना – *मेन्था पिपरेटा*

भारत वर्ष में सबसे ज्यादा मेन्था आरवेन्सिस या जापानी पोदीना का प्रयोग किया जाता है। इसके पत्ते हरित वर्ण, सुगन्धित एवं तैलीय ग्रन्थि वाले होते हैं। भारत वर्ष में पोदीना लगाया जाता है पर हिमालय की निचली घाटियों में यह स्वयं पैदा होता है।

पोदीने की पत्तियों का पोषक मान

पोदीने की प्रति 100 ग्राम पत्तियों में 84.9 प्रतिशत नमी, 4.8 ग्राम प्रोटीन, 2.0 ग्राम रेशा, 200 मिग्रा कैल्शियम, 15.6 मिग्रा, लोहा, 1620.0 माइक्रोग्राम बीटाकैरोटिन, 9.7 मुक्त व 114.0 माइक्रोग्राम कुल फोलिक एसिड तथा 27 मिग्रा विटामिन सी पाया जाता है। हमारे शरीर को कैल्शियम वानस्पतिक स्रोत में हरी पत्तेदार सब्जियों से प्राप्त होता है। पोदीना भी कैल्शियम का अच्छा स्रोत है। गर्भवती व धात्री महिलाओं को कैल्शियम व लौह लवण के लिये हरी पत्तेदार सब्जियाँ खाने के लिये कहा जाता है। पोदीना भी इन दोनो पोषक तत्वों का अच्छा स्रोत है। गर्भवती महिला का शिशु अपनी माता के शरीर से सभी पोषक तत्व प्राप्त करता है अतः गर्भवती महिला के शरीर में किसी भी पोषक तत्व मुख्य रूप से कैल्शियम व लौह लवण की कमी नहीं होनी चाहिये। इसके साथ–साथ पोदीना फोलिक अम्ल का भी अच्छा स्रोत है जो हमें खून की कमी या रक्ताल्पता नामक रोग से बचाता है। विटामिन सी की अच्छी मात्रा होने के कारण पोदीना लौह लवण के अवशोषण में भी सहायक है।

पोदीने के घरेलू उपयोग

पोदीने का प्रयोग हम अपने दैनिक भोजन में कई प्रकार से कर सकते हैं।

सुखा कर

पोदीने के पत्तों को अच्छी तरह साफ करके सुखा दीजिये। सूख जाने के बाद हाथ से रगड़ कर चूर्ण बना लीजिये फिर उस चूर्ण को वायुरोधी डिब्बों में भर लीजिये। जब पोदीने की पत्तियॉ उपलब्ध न हों उस समय पोदीने की पत्तियों का प्रयोग किया जा सकता है।

पोदीने की खट्टी व चटपटी चटनी

- कच्चा आम/कैरी, हरी मिर्च, पोदीने के पत्ते व नमक सभी को मिला कर पीस लीजिये। चटनी तैयार है।
- पोदीन के पत्ते, सूखी लाल मिर्च, नमक व लहसुन की कलिया पीस लीजिये फिर उसमें इमली का पानी डालिये, चटपटी चटनी तैयार है।
- काले तिल व पोदीने की चटनी– काले तिल साफ करके भून लीजिये अब पोदीने के पत्ते, तिल, मिर्च व नमक पीस लीजिये। खट्टी करने के लिय नीबू का रस मिलाइये।
- टमाटर, हरी मिर्च, पोदीने के पत्ते व नमक पीस लीजिये। इसमें आप नीबू का रस भी स्वादानुसार खट्टा करने के लिये मिला सकते है।

पोदीने का रायता

- दही लेकर अच्छी तरह फेंट लें व उसका मठ्ठा बना लें फिर सूखा पोदीने का चूर्ण, नमक, मिर्च पाउडर व भुना जीरा मिलायें।
- उपरोक्त विधि से मठ्ठा बनाकर हरी पोदीने की पत्तियाँ व हरी मिर्च को पीस कर पेस्ट बना लें व मठ्ठे में मिला दें साथ में भुना जीरा व नमक मिलायें।
- बेसन लेकर उसमें बारीक–बारीक प्याज व हरी मिर्च काटे व हल्का सा नमक मिलाये तथा गाढ़ा घोले और उसे एक ही तरफ फेंटें। अब उसकी पकौड़ियाँ तलें और उन पकौड़ियों को गर्म पानी में डालें कुछ देर के लिये जिससे वो मुलायम हो जाये। अब पोदीने की हरी पत्तियॉ, हरी मिर्च व लहसुन की कलियों को पीस लें तथा मठ्ठे में मिलायें। नमक डालें व पकौडियों को ठंडी करके रायते में मिला दें।

ऊपर से जीरे, कुटी हुई लाल मिर्च व हींग का छौंक लगायें। सभी विधियों से बनाये गये रायते पेट के लिय बहुत अच्छे होते है।

पोदीने व आम का पना

कच्चे आम लेकर उबाल लें। छिलका व गुठली अलग करे व गूदे को अच्छी तरह मसल लें। मसले हुए गूदे में कम या ज्यादा पानी मिलाये यह आपकी इच्छा पर निर्भर है कि आप कैसा पसंद करते है गाढ़ा या पतला। उसमें भुना जीरा, नमक, लाल मिर्च पाउडर, गुड़/चीनी, स्वादानुसार व हरी पोदीने की पिसी हुई पत्तियाँ या पोदीने का चूर्ण मिलाये। फ्रिज में रखकर ठंडा करें और पीयें। आम व पोदीने का पना पेट के लिये बहुत लाभदायक है तथा उसे पीने से लू नहीं लगती है।

पोदीने की पूड़ी

बेसन, सूजी व आटा तीनों बराबर मात्रा में लें। फिर हरी मिर्च, पोदीना, व प्याज को बारीक काट लें अब नमक अजवायन व कटी हुई प्याज, हरी मिर्च व पोदीना को आटे में मिलायें और कड़ा गूँथ लें। अब छोटी–छोटी लोइयाँ बना कर पूड़ी बेलें और सुनहरी तल ले।

पोदीने का चीला

छना हुआ बेसन लें। उसमें बारीक प्याज, हरी मिर्च, व पोदीना काट कर डालें। अब लहसुन की छिली हुई कलियाँ व अजवायन को पीस ले व बेसन में डाल दें। स्वादानुसार नमक डालें व बेसन में पानी डाल कर पतला घोल बना लें। तवा गर्म करके उसके ऊपर तेल डालें फिर चमचे से घोल को तवे के ऊपर फैला दें तथा धीमी ऑच पर दोनो तरफ से सेंक लें।

जापानी पोदीना की उन्नत किस्में

- **शिवालिकः** इस प्रजाति में 0.4–0.5 प्रतिशत तेल होता है। कुछ किसान 150 लीटर तेल का उत्पादन एक बार में एक हेक्टेअर से ले लेते हैं।
- **एम एम एस–1:** यह किस्म जल्दी कटाई के लिये उपयुक्त है। इसमें 70–80 प्रतिशत मेन्थोल होता है। एक हेक्टेअर से 120 लीटर तेल मिलता है।
- **हाइब्रिड 77:** इस प्रजाति सेएक हेक्टेअर से 130 लीटर तेल मिलता है। इसमें 85 प्रतिशत मेन्थोल होता है। यह प्रजाति बीमारियों के लिये प्रतिरोधी है।
- **हिमालयः** एक हेक्टेअर से 150 लीटर तेल प्राप्त होता है।

कृषि तकनीक

उपयुक्त भूमि

पोदीना मुख्य रूप से मध्यम से लेकर भारी मृदाओं में जिनमें कार्बनिक पदार्थ प्रचुर मात्रा मे हो उगाया जा सकता है। भारत में पोदीना का उत्पादन बलुई, बलुई दोमट मिट्टी एवं हल्की चिकनी मृदाओं में किया जाता है। भारी एवं चिकनी मृदाओं में पोदीना का अच्छा विकास नहीं हो पता है। इसके लिय मृदा का पी. एच. मान 6 से 7.5 उत्तम रहता है।

जलवायु

पोदीना एक वर्षीय फसल है। एक वर्ष में इसकी तीन कटाई लेते हैं। जहॉ गर्मियॉ लम्बी हो एवं सर्दियाँ छोटी वहॉ इसकी फसल सफलता पूर्वक ली जा सकती है।

नर्सरी तकनीक

पोदीना की बुआई दो प्रकार से की जा सकती है (क) सीधे सकर्स की बुवाई करके (ख) पौध तैयार करने के पश्चात् उसकी रोपाई करके पौध तैयार करने हेतु एक एकड़ क्षेत्र हेतु 80 किलो सकर्स की आवश्यकता होती है। एक एकड़ क्षेत्र के पौधरोपण हेतु पहले 1000 वर्ग फीट में क्यारी बना लेते है फिर उसमें खाद देकर क्यारी को पानी से भर लेते है। अब सकर्स के छोटे–छोटे टुकड़े कर लेते है पर यह ध्यान देने वाली बात है कि सकर्स के प्रत्येक टुकड़े में एक नोड्/गाँठ आवश्य होनी चाहिये। अब सकर्स को पानी से भरी क्यारी में डाले देते हैं तथा झाड़ू या डंडे से टुकड़ों को इधर–उधर क्यारी में फैला देते हैं। ऐसा करने से मिट्टी पानी में मिल जाती है तथा पानी गंदा हो जाता है मिट्टी टुकड़ों से चिपक जाती है। जब पानी सूख जाता है तब सकर्स मिट्टी में चले जायेंगे। इसके बाद इन पर हल्की राख, गोबर की खाद या मिट्टी डालकर जड़ों को दबा देते हैं। नर्सरी में हर दूसरे तीसरे दिन फौवारे से पानी देते रहें। इनका जमाव 7 से 20 दिन में हो जाता है। पौधा 35 दिन का होने पर इसे खेत में रोपाई कर दें।

भूमि की तैयारी

खेत में गहरी जुताई करें व फिर एक पानी दें। एक एकड़ में लगभग चार कुन्तल गोबर की खाद डाले फिर उसे मिट्टी में अच्छी तरह मिला दें व पाटा चला दें। पौधा लगाने के पूर्व यदि खेत में पानी दे दिया जाये तो गीले खेत में पौधा जल्दी जड़ पकड़ेगा। अगर सूखे खेत में लगाया गया है तो पौध रोपण के तुरन्त बाद पानी दें।

सकर्स लगाने का समय

पोदीना लगाने का उपयुक्त समय 15 जनवरी से 15 फरवरी है। इस समय लगाये गये पोदीने से मई, अक्टूबर व नवम्बर में कटाई ले सकते हैं। अगर

पानी की उचित व्यवस्था नहीं है तो पोदीना जुलाई व अगस्त में भी लगाया जा सकता है।

रोपड़ विधि

पोदीने के सकर्स सीधे भी खेत में लगा सकते है या देशी हल से दो से ढाई इंच गहरा हल चलाकर उसके पीछे सकर्स के टुकड़े लगा दे। सीधे खेत में सकर्स लगाने पर खेत में खरपतवार अधिक होने की सम्भावना रहती है।

नर्सरी में तैयार पौधों को लगाते समय उनके अन्तर का विशेष ध्यान रखना चाहिये।

अगर वर्ष में तीन फसलें लेनी हैं तो पौधे से पौधे की दूरी दो x दो फीट रखें। अगर वर्ष में दो फसलें लेनी हैं तो यह दूरी डेढ़ x डेढ़ फीट रखनी चाहिये। वर्ष में एक ही फसल लेनी है तो पौधे से पौधे की दूरी एक x एक फीट रखनी चाहिये। अन्त में पौधो के विकास के बाद इनके बीच की दूरी एक इंच रह जायेगी।

सिंचाई

सकर्स लगाने के तुरन्त बाद खेत में पानी दें। गर्मियों में खेत में विशेष नमी बनाए रखे। सर्दियों में पोदीना प्रायः मृत पड़ा रहता है उस समय 15–20 दिन में पानी देना चाहिये।

निराई–गुड़ाई

पौध रोपण के बाद 20–25 दिनो के अन्दर एक निराई–गुड़ाई की आवश्यकता होती है। इसके बाद पौधा स्वयं ही इतना फैल जाता है कि निराई–गुड़ाई की जरूरत नहीं पड़ती है।

फसल की कटाई

जब पोदीने पर जामुनी रंग के फूल आने शुरू हो जाये तब यह समझना चाहिये कि फसल परिपक्व हो गई है। उस समय फसल की कटाई करनी चाहिये। अगर फूल आने से पहले काट लिया जाये तो मेन्थोल की मात्रा कम रहती है तथा बहुत बाद में काटने पर पत्ते झड़ने लगते है।

तेल प्राप्ति

फसल काटने के 6 घंटे बाद से 3 दिन तक वाष्प आसवन विधि द्वारा तेल निकाला जा सकता है। तेल प्राप्ति के बाद उसे किसी स्टेनलैस स्टील कन्टेनर में भर कर अँधेरे कमरे में रख देने से यह तेल दो वर्ष तक खराब नहीं होता। प्लास्टिक कन्टेनर में यह तेल 6 माह में ही खराब हो सकता है।

भूमि जीव संकुल रहे गए सरद रितु पाइ।

सदगुर मिलें जाहिं जिमि संसय भ्रम समुदाइ।।

भावार्थः– *(वर्षा ऋतु के कारण) पृथ्वी पर जो जीव भर गए थे, वे शरद् ऋतु को पाकर वैसे ही नष्ट हो गए जैसे सद्गुरु के मिल जाने पर संदेह और भ्रम के समूह नष्ट हो जाते हैं।*

स्रोत : रामायण किसकिन्धा काण्ड

गुणकारी पुदीना

मिथलेश तिवारी एवं जसवंत सिंह

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

पुदीना रूचिकर, उष्ण, वायु और कफ नाशक है। यह मल–मूत्र की रोकथाम करने वाला है। यह खांसी, संग्रहणी, अजीर्ण, अतिसार, हैजा में लाभप्रद है। यह कृमि नाशक है व वमनको रोकता है।

- पुदीने के ताजे रस को शहद के साथ मिलाकर सेवन करने से पेट दर्द में लाभ होता है।
- घमौरियां होने पर पुदीने में गुड़ मिलाकर उबालें और ठंडा होने पर उसे पीयें। इससे घमौरियां दूर हो जाती है।
- पुदीने के रस में पानी मिलाकर कुल्ला करने से सूजे हुए टांसिल में आराम मिलता है।
- पुदीने की चटनी बनाकर चेहरे पर लेपकर के एक घंटे बाद धोने से चेहरा सुंदर हो जाता है।
- पुदीना व अदरक का रस मिलाकर पीने से शीत ज्वर में आराम मिलता है।
- पुदीना, तुलसी, काली मिर्च, अदरक आदि का काढ़ा पीने से वायु का प्रकोप दूर होता है और भूख लगती है।
- पुदीने के रस की 3–4 बूंदे नाक में डालने से जुकाम ठीक होता है। नाक का बहना रूकता है।
- पुदीना व तुलसी का रस मिलाकर पीने से टायफाइड रोग में राहत मिलती है।
- पुदीने का रस शहद के साथ सेवन करने से आंतों की खराबी और पेट रोगों का इलाज होता है। आंतों के पुराने रोगियों के लिए पुदीने के ताजे रस का सेवन अमृत तुल्य माना गया है।
- पुदीने और तुलसी का काढ़ा पीने से अक्सर आने वाला बुखार दूर होता है।
- पुदीने के ताजे रस अथवा अर्क का सेवन करने से कफ, सर्दी एवं मस्तिष्क की सर्दी से राहत मिलती है।
- पुदीने के पत्तों को पीसकर दाद पर बार–बार लगाने से लाभ होता है।
- ताजा पुदीना, छुहारा, काली मिर्च, सेंधा नमक, हींग, काली किशमिश और जीरा इन सब की चटनी बनाकर उसमें नीबू का रस निचोड़कर खाने से भंदाग्नि दूर होती है, व पाचन शक्ति बढ़ती है।
- वमन व दस्त होने की स्थित में पुदीने में चीनी पीसकर खाने से अथवा इसे दही में मिलाकर खाने से राहत मिलती है।
- अजीर्ण होने पर पुदीने के रस में काला नमक मिलाकर चाटने से लाभ होता है।
- पुदीना एवं तुलसी के 10–10 पत्तों का काढ़ा बनाकर पीने से मलेरिया रोग में लाभ होता है।
- पीदीना, तुलसी, काली मिर्च, अदरक आदि का काढ़ा पीने से वायु का प्रकोप दूर होता है और भूख लगती है।
- खांसी होने पर पुदीने के रस में काला नमक मिलाकर चाटने से लाभ होता है। अथवा पुदीने व अदरक के रस में थोड़ा–सा शहद मिलाकर चाटने से खांसी मिटती है।
- एक कप पानी में दो चम्मच पुदीने का रस और आधा नींबू का रस मिलाकर पीने से पेट दर्द में तुरंत राहत मिलती है।
- पुदीने के पत्तों को चबाने से मुख की दुर्गंध दूर होती है।
- पुदीने के रस में नीबू का रस, अदरक का रस एवं शहद मिलाकर सेवन करने से हैजा व बमन में शीघ्र में शीघ्र राहत मिलती है।
- पुदीने व घनियां को पीसकर लेप बनाकर चेहरे पर उबटन की तरह लगाने से मुहांसे दूर होते है।
- पुदीने के रस में नींबू रस मिलाकर, लगाने से दाद मिटते हैं।

मानव भोजन में प्रोटीन का महत्व

ब्रह्म प्रकाश, अश्विनी कुमार शर्मा एवं मोहम्मद अशफाक

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

कार्बोहाइड्रेट तथा जल के पश्चात् प्रोटीन मनुष्यों के लिए परम आवश्यक तत्व है। प्रोटीन सभी जीवधारियों का एक अभिन्न अंग है। माँसपेशियों के ऊतक, रक्त, हड्डियाँ, बाल तथा त्वचा का अधिकांश भाग प्रोटीन द्वारा ही निर्मित होता है। यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि हमारे शरीर के शुष्क भार का 45% अंश प्रोटीन द्वारा ही बना होता है।

प्रोटीन कई अमीनो अम्लों के बड़े–बड़े अणुओं से निर्मित होता है जो एक दूसरे के साथ पेप्टाइड तथा डाई–सल्फाइड बन्धों द्वारा जुड़े रहते हैं। प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट्स तथा वसा से रासायनिक संरचना में भिन्न होते हैं क्योंकि इनमें कार्बन, हाइड्रोजन व ऑक्सीजन के साथ–साथ नाइट्रोजन तथा गंधक भी पाया जाता है। शरीर की प्रत्येक कोशिकाओ के विकास के रख–रखाव तथा सतत् वृद्धि हेतु नाइट्रोजन नितान्त आवश्यक है। इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि नाइट्रोजन जीवन का ही आधार है।

हमारे शरीर की वृद्धि के लिए प्रोटीन अत्यन्त लाभकारी है। अतः यह हम सभी, विशेषतया नवजात शिशुओं, बच्चों, गर्भवती तथा दुग्धपान कराने वाली महिलाओं के लिए नितान्त आवश्यक है। प्रोटीन के कुछ महत्वपूर्ण कार्य निम्नवत् हैं :

शरीर के नए ऊतकों का निर्माण

गर्भावस्था, बच्चों की वृद्धि, घावों के भरने, शल्य चिकित्सा, जलने तथा अन्य रोगों से रिकवरी हेतु विभिन्न अमीनों अम्लों की पर्याप्त मात्रा में आपूर्ति हेतु प्रोटीन का भोजन में समावेश परम आवश्यक है।

शारीरिक संरचना का रख–रखाव

हमारे शरीर में ऊतकों की रिपेयरिंग हेतु प्रोटीन का कोई अन्य विकल्प नहीं है क्योंकि प्रोटीन पुननिर्माण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हमारे शरीर में समय–समय पर ऊतक टूटते रहते हैं तथा साथ ही शरीर से अमीनों समूहों से कुछ नाइट्रोजन का उत्सर्जन भी होता रहता है। अतः नाइट्रोजन सन्तुलन के रख–रखाव हेतु प्रोटीन को भोजन में निरन्तर सम्मिलित रखना आवश्यक होता है।

आवश्यक यौगिकों के उत्पादन

शरीर में उपस्थित एन्जाइमों, हार्मोनों तथा एण्टीबौडीज, जो उपापचयी क्रियाओं में सक्रिय योगदान करते हैं, प्रोटीन द्वारा ही निर्मित होते हैं। मानव शरीर में महत्वपूर्ण क्रियाओं के संचालन में अहम् भूमिका निभाने वाले हार्मोन भी प्रोटीन ही होते हैं, उदाहरणार्थ रक्त में शर्करा स्तर पर नियन्त्रण रखने वाला हार्मोन इन्सुलिन भी प्रोटीन है।

जल सन्तुलन का नियमन

अन्तर्कोशिकीय तथा अन्तराकोशिकीय प्रकोष्ठों के बीच में अर्द्धपारगम्य झिल्ली द्वारा द्रवों के विनिमय के लिए उत्तरदायी कई कारकों में प्रोटीन भी एक प्रमुख कारक है।

रक्त को उदासीन बनाए रखने में सहायक

रक्त प्लाज्मा में उपस्थित प्रोटीन बफर की भाँति कार्य करताहै। यह प्रोटीन अम्ल व क्षार दोनों से ही अभिक्रिया कर सकता है। इस प्रक्रिया द्वारा प्रोटीन रक्त को उदासीन बनाए रखने में सहायक होता है। जो कोशिकाओं के सामान्य क्रिया–कलापों के लिए आवश्यक दशा है।

ऊर्जा का स्रोत

कुछ विशेष दशाओं में, जब मनुष्य कम कार्बोहाइड्रेट तथा कम वसायुक्त भोजन करता है, तो प्रोटीन को ऊर्जा उत्पादन हेतु प्रयुक्त होना पड़ता है। अमीनों अम्लों के संवहन के पश्चात् कार्बनिक अम्लों के उपापचय से ऊर्जा उत्पादित होती है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रोटीन मानव शरीर के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। विभिन्न खाद्य स्रोतों से प्राप्त प्रोटीन विभिन्न अमीनो अम्लों के क्रम, अनुपात तथा डाईसल्फाइड बन्धों के कारण भिन्न होती है। प्रोटीन में कुछ अमीनों अम्लों की उपलब्धता उस खाद्य पदार्थ को अधिक पौष्टिक बना देती है। वास्तव में प्रोटीन लगभग 23 अमीनों अम्लों द्वारा बना होता है जो पेप्टाइड तथा डाईसल्फाइड बन्धों द्वारा जुड़े रहते हैं। इनमें से 8 अमीनों अम्लों को आवश्यक अमीनो अम्ल कहा जाता है क्योंकि ये वयस्क मानव में संश्लेषित नहीं हो पाते अतः इनको भोजन में समाहित करना नितान्त आवश्यक होता है। इनको

लाइसिन, ट्रिप्टोफैन, फिनायल एलानिन, मीथियोनिन, ल्युसिन आइसोल्युसिन, थ्रियोनिन तथा वैलीन नामक अमीनो अम्लो के रूप में जाना जाता है। इनके अतिरिक्त, हिस्टीडिन तथा आर्गिनिन नामक दो अमीनो अम्ल बच्चों के लिए आवश्यक होते है। अन्य अमीनो अम्ल जो मानव शरीर में स्वयं उत्पादित हो जाते है, को अनावश्यक अमीनो अम्ल कहा जाता है। परन्तु आवश्यक अमीनो अम्ल की भाँति ही उपापचायी क्रियाओं हेतु महत्वपूर्ण होते है। इस प्रकार किसी खाद्य पदार्थ में उपस्थित विशिष्ट अनावश्यक अमीनो अम्ल की मात्रा तथा अनुपात का भी क्रान्तिक महत्व होता है। प्रयोगिक तौर पर, अधिकांश प्रोटीनों में सभी अमीनो अम्ल विभिन्न मात्राओं में उपस्थित रहते हैं। परन्तु इनमें आठ आवश्यक अमीनो अम्ल का अनुपात ही यह निर्धारित करता है कि प्रोटीन उच्च गुणवत्ता की है अथवा निम्न गुणवत्ता की है।

एक प्रोटीन के अमीनो अम्ल क्रम से अभिप्रायः है कि इसमें आवश्यक अमीनो अम्लों का मात्रात्मक सम्बन्ध अनुपात तथा प्रतिशत क्या है। पौष्टिकता के स्तर के आधार पर प्रोटीन को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है सम्पूर्ण प्रोटीन, आंशिक सम्पूर्ण प्रोटीन तथा अपूर्ण प्रोटीन। माँस, मुर्गी, मछली, दूध व अण्डे सम्पूर्ण प्रोटीन के स्रोत हैं जबकि धान्य फसलें, दलहनी तथा तिलहनी फसलें आंशिक रूप से सम्पूर्ण प्रोटीन की श्रेणी में आती है क्योंकि इनमें एक या दो आवश्यक अमीनो अम्ल अनुपस्थित होते हैं। उदाहरणार्थ धान्य फसलों में लाइसिन तथा दलहनी फसलों में मीथियोनिन तथा ट्रिप्टोफैन नामक आवश्यक अमीनो अम्लों का अभाव होता है। इनको सीमित अमीनों अम्ल भी कहा जाता है। गेहूँ में लाइसिन, धान, मक्का, मूँगफली, नारियल तथा तिल में ल्युसर्न, धान व मूँगफली में थ्रियोनिन, दलहनी फसलों, सोयाबीन तथा नारियल में मीथियोनिन नामक अमीनो अम्ल नहीं होते है। जिलेटिन व मक्का से प्राप्त प्रोटीन अपूर्ण प्रोटीन होती है। यह अपूर्ण प्रोटीन मानव शरीर के लिए अधिक महत्व नहीं रखती है क्योंकि इनमें आवश्यक अमीनों अम्लों की मात्रा बहुत कम होती है।

सारिणी 1 में निहित कुछ चयनित खाद्य पदार्थों में उपलब्ध प्रोटीन की मात्रा दर्शाती है कि वानस्पतिक स्रोतों से प्राप्त प्रोटीन तथा पशुओं से प्राप्त प्रोटीन में अर्न्त तथा अन्तरा सामूहिक विभिन्नतांए होती है।

जब प्रोटीन युक्त कई खाद्य पदार्थों को एक साथ उपभोग में लाया जाता है। तो उनकी प्रोटीन की अमीनो अम्ल सरंचना एक दूसरे की पूरक बन जाती है। संयोगवश भारतीयों की भोजन आदतें आवश्यक अमीनो अम्ल के सन्दर्भ में एक दूसरे के पूरक का कार्य करती है। धान्यों एवं दालें इस का एक उदाहरण है। धान्यों को दालों के साथ खाने से धान्यों से अतिरिक्त मीथियोनिन प्राप्त हो जाता है जिसका दालों में अभाव होता है। खीर, खिचड़ी, दोसा, इडली व दही बड़ा जैसे लोकप्रिय व्यंजन सुगमता से प्राप्त होने वाले प्रोटीन के स्रोत हैं जो अमीनो अम्लों से होने वाले कुपोषण को रोकने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। ये व्यंजन अमीनो अम्लों की पूरकता के सर्वोत्तम व सर्वसुलभ साधन हैं।

सारिणी 1 कुछ चुने हुए खाद्य पदार्थो तथा स्रोतों में प्रोटीन की मात्रा

खाद्य पदार्थ	प्रोटीन की मात्रा (प्रतिशत)
सोयाबीन	40.0
मूंगफली	26.7
मूंग	24.5
उर्द	24.0
मछली	22.6
अरहर	22.3
काजू	21.2
बादाम	20.8
चना	20.8
खोया	20.1
तिल	18.3
बकरे का माँस	18.2
अण्डा	13.0
गेहूँ	11.8
मक्का	11.0
चावल	6.8
नारियल	6.8
दूध	3.2 से 3.5

प्रोटीन की गुणवत्ता केवल आवश्यक अमीनो अम्लों पर ही नहीं निर्भर करती अपितु शरीर से अवशोषण हेतु प्रोटीन की पाचकता तथा अमीनो अम्लों की कार्यिक उपलब्धता पर भी निर्भर करती है। प्रायः पशुओं से प्राप्त प्रोटीन सुगमता से पच जाती है जबकि वानस्पतिक प्रोटीन कम पचती है जिससे उनके अमीनो अम्ल अवशोषण हेतु कम प्रभावी रूप से र्निमुक्त होते हैं। प्रोटीन की गुणवत्ता जानने हेतु अमीनो अम्ल सरंचना के अतिरिक्त इसका जैविक मान (बी0 वी0), शुद्ध प्रोटीन उपयोग (एन0पी0यू0) तथा प्रोटीन दक्षता अनुपात (पी0ई0आर0) का आंकलन आवश्यक है।

खाद्य पदार्थों के प्रसंस्करण का भी पोषण गुणवत्ता पर अनुकूल तथा प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। प्रसंस्करण तथा भण्डारण के दौरान, प्रोटीनों की आणविक संरचना के होने वाले परिवर्तन मानव शरीर के लिए कम उपयोगी हो सकते है। यद्यपि पारम्परिक खाद्य पदार्थों के व्यावसायिक प्रसंस्करण से प्रोटीन के जैविक मान पर कोई उल्लेखनीय प्रभाव नहीं पड़ता है।

प्रोटीन की प्रतिदिन प्रति व्यक्ति उपभोग की संस्तुत मात्रा उनके औसत भार के अनुपात पर निर्भर करती है (सारिणी 2)। वयस्क मनुष्य की प्रोटीन आवश्यकता एक ग्राम प्रति कि.ग्रा.

सारिणी 2 समाज के विभिन्न वर्गो के लिए प्रोटीन की संस्तुत मात्रा

समाज के विभिन्न वर्ग	प्रोटीन की संस्तुत मात्रा (प्रति व्यक्ति प्रति दिन)
वयस्क पुरूष	1ग्राम/कि.ग्रा. शारीरिक भार
वयस्क स्त्री	1ग्राम/कि.ग्रा. शारीरिक भार
गर्भवती स्त्री	1 ग्राम/कि.ग्रा. शारीरिक भार + 10 ग्राम प्रोटीन
दुग्धपान कराने वाली स्त्री	1 ग्राम/कि.ग्रा. शारीरिक भार + 20 ग्राम प्रोटीन
शिशु	1.5 से 2.3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. शारीरिक भार
बच्चे	22–41 ग्राम
युवा	50–60 ग्राम

शारीरिक भार होती है। गर्भावस्था में गर्भस्थ शिशु के विकास तथा दुग्धपान कराने वाली महिलाओं को पर्याप्त दुग्घ आपूर्ति हेतु अधिक प्रोटीन की आवश्यकता होती है। बच्चों में वृद्धि के दौरान भी उनके शारीरिक भार के अनुपात से अधिक प्रोटीन की आवश्यकता होती है।

पर्याप्त मात्रा में प्रोटीन को आहार में सम्मिलित करने से शारीरिक वृद्धि सही होती है। जबकि कम मात्रा में प्रोटीन लेने से न तो शरीर लम्बा होता है अपितु कमजोर माँसपेशियों के कारण शारीरिक विकास भी कम होता है। आवश्यक मात्रा में प्रोटीन लेने से कुछ संक्रमणों से अवरोधिता, रोगो से हुई क्षति की शीघ्र प्रतिपूर्ति, घावों के भरने तथा शल्य चिकित्सा से शीघ्र उबरने में सहायता मिलती है। 1–3 वर्ष के शिशुओं में प्रोटीन की कमी से क्वाशिओरकर नामक रोग हो जाता है जिनसे उनकी शारीरिक व मानसिक वृद्धि रूक जाती है। इस रोग से पीड़ित शिशुओं का शरीर सूज जाता है, त्वचा तथा बाल सूख जाते हैं, रक्त की कमी हो जाती हैं भूख भी कम लगती है तथा अपच की समस्या रहती है।

यद्यपि वयस्क मनुष्य अपनी शारीरिक आवश्यकता से अधिक प्रोटीन को सहन कर लेते है परन्तु शिशुओं व बच्चों में प्रोटीन बाहुल्य आहार शारीरिक विकार पैदा कर सकता है कुपोषण से निजात दिलाने हेतु जब प्रोटीन की मात्रा भोजन में बढ़ानी भी हो तो भी उसे धीरे–धीरे बढ़ाना चाहिए। यह विश्वास किया जाता है कि प्रोटीन के उपापचय में जल की आवश्यकता के बढ़ने के कारण शरीर में द्रवों का असन्तुलन हो जाता है।

हाल में किये गए अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि प्रोटीन बाहुल्य भोजन लेने से शरीर में कैल्शियम सन्तुलन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। मूत्र द्वारा कैल्शियम उत्सर्जन तथा भोजन में ली जाने वाली प्रोटीन की मात्रा का सीधा सहसम्बन्ध देखा गया है। भोजन में प्रोटीन की मात्रा बढ़ा देने पर सभी मनुष्यों के मूत्र में अधिक कैल्शियम उत्सर्जित हुआ।

यद्यपि प्रोटीन की अधिक मात्रा लेने से उच्च रक्तचाप तथा गुर्दो तथा यकृत को क्षति होने के कोई साक्षात प्रमाण नहीं मिले हैं परन्तु दीर्घकाल तक प्रोटीन धनी भोजन खाने की सलाह नहीं दी जाती है क्योंकि प्रोटीन की अधिक मात्रा लेने से स्वस्थ मनुष्यों के स्वास्थ्य में कोई लाभ नहीं होता है।

इस प्रकार मनुष्यों के लिए प्रोटीन भोजन का एक अति आवश्यक अवयव है यदि हम भोजन की पोशकता के सुधार पर ध्यान दें तो हम प्रोटीन की कमी से होने वाली समस्याओं से निजात पा सकतें हैं

इसका स्वाद प्रसाद बहुत है जनभाषा रसवंती।
ऋतुओं में बसंती है ये, रागों में मधुवंती।।
भाषाऐं हो चाहे जितनीं, ये सबकी हमजोली।
स्वागत करती हिन्दी सबका, बिखरा कुमकुम रोली।।

वीरेन्द्र मिश्र

सेहत की संजीवनी

मिथिलेश तिवारी एवं जसवंत सिंह

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

आपके रहन–सहन और चुनिंदा चीजों पर निर्भर करता है कि आने वाले समय में आप कितने चुस्त–दुरूस्त तरीके से जीवन जिएंगे। सच तो यह है कि अच्छी सेहत का बीज आज बोएगें, तो ही भविष्य में स्वस्थ फसल तैयार होगी।

पोटेशियम की पकड़

लंबी उम्र तक मजबूत इरादों के साथ–साथ मजबूत सेहत भी तो चाहिए। पोटेशियम से भरपूर आहार आपको मजबूत रखेंगे। आलू व साग के अलावा कुछ खास फल जैसे केले और पपीते न चुराएं। इनमें पोटाशियम की प्रचुर मात्रा होती है। अमेरिकन जर्नल ऑफ क्लीनिकल न्यूट्रीशन द्वारा एक शोध के परिणाम के मुताबित 65 वर्ष के जो बुजुर्ग पोटेसियम युक्त आहार नियमित लेते हैं, उनमें ऐसा आहार न लेने वालों की तुलना में 3.6 प्रतिशत अधिक वसा सहित मांस पेशियों वाले ऊतक होते हैं। यह बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि आमतौर पर उम्र अधिक होने के साथ–साथ व्यक्ति की मांसपेशियों 4.4 पाउंड नष्ट हो जाती हैं, जिससे कई बार स्वास्थ्य बुरी तरह प्रभावित भी होता है। यह चरण 65 वर्ष की आयु के बाद शुरू होता है। लेखक व फिजीशियन डाफेनमिलर ने लंबी उम्र तक जीने वाले स्वस्थ लोगों पर *द जंगल इफेक्ट* किताब लिखी है। वे मांसपेशियों की मजबूरी के लिए रोज 4.7 ग्राम पोटाशियम अपने आहार में शामिल करने की सलाह देते है। रोज 5–6 तरह के फल व सब्जियां खाने पर पोटेसियम की पूर्ति हो सकती है। नमक कम खाएं, क्योंकि नमक शरीर में मौजूद पोटेसियम को कम कर देता है।

'बी' सेब्रेन

अपने मस्तिष्क को लंबे समय तक स्वस्थ और फुर्तीला बनाए रखने में विटामिन बी 12 का अच्छा योगदान होता है। यह हमें सीफूड, अंडे व चिकन से मिल सकता है। जिन लोगों के खून में इस पौष्टिक तत्व की मात्रा कम होती है, उनमें ध्यान केंद्रित करने की क्षमता में भी कमी पायी जाती है। जो लोग विटामिन बी–12 युक्त पौष्टिक आहार लेते हैं, उनके मस्तिस्क को बाकी लोगों की तुलना में 6 गुना कम सिकुड़ने की शिकायत होती है। पर्याप्त मात्रा में बी–12 हमें अपने आहार से ही प्राप्त हो जाता है। लेकिन कुछ लोगों को सप्लीमेंट लेने की जरूरत होती है। आंतों में 65 वर्ष की आयु में उन रसायनों की कमी हो जाती है, जिनसे आहार में मौजूद विटामिन बी–12 पचा पाने में मुश्किल होती है। इस उम्र में इसके वैकल्पिक श्रोत प्रयोग करें तो बेहतर है।

मीठा मिजाज

मीठे से परहेज करें, पर दूसरों से अपना मिजाज मीठा रखें, क्योंकि आपके खुश रहने का अंदाज और सकारात्मक सोच आपकी लंबी व स्वस्थ आयु की संजीवनी है। एक पत्रिका द्वारा 30 लोगों के मिजाज पर हुए शोध के मुताबिक खुशी कई बीमारियों से सुरक्षित रखता है। सिगरेट नहीं पीने पर जितना किसी व्यक्ति का शरीर स्वस्थ रह सकता है, उससे कहीं ज्यादा स्वस्थ शरीर खुश रहने से रहता है। एक अन्य शोध के अनुसार जो व्यक्ति आशावादी और सकारात्मक सोच के होते हैं, वे बहुत कम बीमार पड़ते है और अपने जीवन का पूरा आनंद लेते है। आप भी खुश रहिए और खुश रहने के उपाय ढूंढ़िए। जैसे मेडिटेशन और खुशमिजाज लोगों से दोस्ती।

प्रोबायोटिक से पुष्ट शरीर

दही शरीर के लिए फायदे मंद है। लेकिन दही प्रोबायोटिक हो, तो और भी अच्छा है। सामान्य दही की तुलना में प्रोबायोटिक दही में लेक्टोवेसिलस बैक्टीरिया ज्यादा होते है। ये खाना पचाने की क्षमता को मजबूत करते हैं। आंतों से जुड़ी बीमारियां दूर रहती हैं। खमीर उठे खाद्य पदार्थों में भी प्रोबायोटिक होता है। इसकी सप्लीमेंटी गोलियां भी केमिस्ट के पास मिलती हैं जो फिजीशियन की सलाह पर आप ले सकते हैं। द वंडर ऑफ प्रोबायोटिक के लेखक जॉन आर. टेलर के मुताबिक अगर आपका हाजमा सही नहीं रहता है, तो अच्छे बैक्टीरिया की मदद लेने में कोई हर्ज नहीं। प्रोवायोटिक सप्लीमेंट मे 52 प्रतिशत अपच की समस्या दूर होगी।

डॉक्टर 'डी'

आर्काइव्स ऑफ इंटरनल मेडिसिन द्वारा एक शोध किया गया, जिसमें प्रोफेसर वेल ने पाया कि जिन लोगों के खून में विटामिन डी का स्तर कम होता है, उनके किसी भी तरह की खतरनाक बीमारी होने पर मरने की आशंका अधिक होती है। विटामिन डी से कार्डियों बैस्कुलर बीमारी, हाई ब्लड प्रेशर, कुछ खास तरह के कैंसर व ऑटोइम्यून बीमारियां दूर रहती हैं। डेयरी प्रोडक्ट के अलावा मछली और अंडे विटामिन डी के अच्छे स्रोत हैं।

सूर्य की किरणों से भी विटामिन डी मिलता है, लेकिन इसमें हमें पर्याप्त मात्रा में विटामिन डी नहीं मिल पाता। रोज हर व्यक्ति को 1000 आई यू विटामिन डी चाहिए। जैसे–जैसे उम्र बढ़ती है इसकी जरूरत अधिक होती है, फिजीशियन की सलाह पर कैल्शियम के साथ विटामिन डी का सप्लीमेंट ले सकते है।

मीट की मनाही

रेडमीट खाने की इच्छा अपने दिमाग से निकाल दें, तो बेहतर है। इसमें से चुरे टेड फैट होते हैं, जिसके कारण धमेनियां अवरूद्ध हो जाती हैं, नतीजा कार्डियो–वैस्कुलर बीमारियां। इतना ही नहीं कैंसर जैसी बीमारियों के भी खतरे बढ़ जाते हैं। हाल में हुए एक शोध के मुताबिक जो लोग मीट का सेवन बहुत अधिक करते हैं, उनमें रेड मीट न खाने वालों की तुलना में 60 प्रतिशत कैंसर के खतरे अधिक होते हैं। रेडमीट के कारण हृदय रोग, डाइबिटीज और अल्जाइमर रोग की आशंका भी ज्यादा होती है। मीट की जगह मछली, चिकन व सोयाबीन खाएं।

मेन्यू में मछली

कुछ वसा वाली मछलियों में इकोसापेंटानोइक एसिड (इपीए) और डोकोसाहेक्सानोइक (डीएचए) नाम के 2 ओमेगा–3 फैटभ एसिड प्रचुर मात्रा में होते हैं, जो उम्र भर पकड़ बनाए रखने में सहायक है ओमेगा–3 फैटी एसिड से हृदय रोग की आशंका कम होती है। ओमोगा–3 फैटी एसिड से आंखों की रोशनी भी लंबी उम्र तक बनी रहती है। जो लोग हफ्ते में 1 दिन भी मछली खाते हैं, उनमें उम्र के साथ–साथ कम जो रहो तीन जरें 50 प्रतिशत कम प्रभावित होती है। कोशिश कीजिए हफ्ते में एक बार मछली खाएं। छोटी मछलियां भी फायदेमंद है। सैलमीन, टूना, ट्राउट खास तौर पर फायदेमंद मछलियां है। मछलियों को खूब तेल–मसालों के साथ नहीं पकाया जाए, तो अधिक फायदेमंद होती है।

कसरत की कामयाबी

नियमित व मध्यम् श्रम वाले व्यायाम करें, जैसे जेजवॉकिंग, साइकिलिंग, रस्सी कूद आदि। ब्रिटिश जर्नल ऑफ स्पोर्ट्स एंड मेडीसिन में प्रकाशित एक शोध के मुताबिक दौड़ भाग करता हुआ एक चुस्त–दुरूस्त आदमी 10 साल अधिक और स्वस्थ रूप से जीता है। व्यक्ति अगर अपने यौवन काल में जितना व्यायाम करेगा, आगे की उम्र में उतना ही स्वस्थ जीवन जिऐगा। तो अब यह मान लीजिए कि व्यायाम करना आपके स्वास्थ्य का बीमा है।

हिन्दुस्तान के लिये देवनागरी लिपि का ही व्यवहार होना चाहिए, रोमन लिपि का व्यवहार यहाँ हो ही सकता।

महात्मा गाँधी

मनुष्य सदा अपनी मातृभाषा में ही विचार करता है, इसलिए अपनी भाषा सीखने में जो सुगमता होती है। दूसरी भाषा में हमको वह सुगमता नहीं हो सकती।

डा. मुकुन्दस्वरूप वर्मा

तीन मुक्तक

सुधीर कुमार शुक्ल

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

यहाँ उनके बगीचों में भी,
पत्ता हिल नहीं सकता।
धावों की जुबानों को,
कोई भी सिल नहीं सकता।।
यहॉ के आज मौसम में,
यह छाया क्यूँ अंधेरा है।
किसी का दल नहीं मिलता,
किसी से दिल नहीं मिलता।।

– ● –

तुम्हारी ही हिमाकत में,
सजाते हम रंगोली हैं।
जनों के संग यहाँ जम के,
करते कुछ ठिठोली हैं।।
यह कैसी आग नफरत की,
सियासत ने लगाई है।
जो खेले संग होली थे,
वहीं देते भी गोली हैं।।

– ● –

तरफदारी किसी के संग,
अधिक दिन कर नहीं सकते।
सियासत से ही संदूकें,
अधिक दिन भर नहीं सकते।।
जो सच्चे हैं, भोले हैं,
वहीं रहते है गुरवत में।
यह खादी के लुटेरों से,
अधिक दिन डर नहीं सकते।।

– ● –

मुझे याद है ....

योगेश मोहन सिंह

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

मुझे याद है वो बचपन के दिन
वो माँ के आँचल मे छिपना
वो पापा के संग टहलना
वो दोस्तों के संग स्कूल जाना
मुझे याद है .....

छोटी–छोटी बातों पर लड़ना झगड़ना
वो शाम को दोस्तों के संग खेलना
वो देर से घर आने पर माँ का डाँटना
मुझे याद है .....

अब उम्र के इस दौर में
न जाने वो दिन कहाँ गये
अब न वो दोस्त रहे न मिलना जुलना
न वो मिलकर मस्ती करना
मुझे याद है .....

जीवन अब मशीन हो गया
ज़िम्मेदारियों के अधीन हो गया
मुझे याद है .....

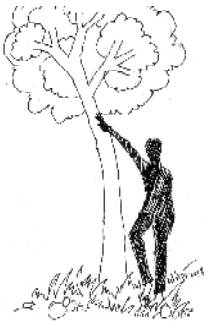

मरने की उतावली क्यों?

ब्रह्म प्रकाश

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

आज मानव जीवन हो गया है व्यस्त व तनावपूर्ण।
पर इस तनाव को मस्तिष्क पर छाने नहीं दीजिए।।
बहुत कार्य करने पर भले आ गई हो थकान।
पर इस थकान की स्मृति बार बार नहीं कीजिए।।
हो खराब वक्त, हुई हो लड़ाई, अपमान या दुर्घटना।
इनसे अपनी नींद को न दूर भागने दीजिए।।
कितना भी हो शारीरिक, मानसिक व भावनात्मक तनाव।
जीवनी शक्ति को इनसे क्षरण न होने दीजिए।।
जलते दीपक का तेल यदि हो गया हो समाप्त।
रूई की बत्ती के सहारे दीपक जलाना नहीं चाहिए।।
चाहे जितनी प्रबल समस्याओं से रहें हो आप जूझ।
सबका एक साथ समाधान ढूँढना नहीं चाहिए।।
अपने को बचाना चाहते हैं यदि आप शारीरिक तनाव से।
श्रम व आहार–विहार में सन्तुलन बनाए रखना चाहिए।।
चिन्ता, तनाव, निराशा, ईष्या द्वेश को जानें शत्रु।
दूर रखें, इनको दिल से लगाना कभी नहीं चाहिए।।
मन के कुविचार ही शरीर को कर देते है रोगयुक्त।
स्वस्थ विचारों को ही मन में सदा स्थान देना चाहिए।।
उच्च रक्त चाप व हृदय रोग से बचने की है आशा प्रबल।
आधुनिक सभ्यता द्वारा प्रदत्त जीवन दर्शन बदलना चाहिए।।
अपने दुःख कष्टों के लिए भाग्य व भगवान को मत कोसें।
सदैव सकारात्मक चिन्तन से ही स्वास्थ्य लाभ करना चाहिए।।
स्वस्थ शरीर के लिए पौष्टिक भोजन भी है परम आवश्यक।
पर मानसिक स्थिति भी सन्तुलित और शुचितर होनी चाहिए।।
शरीर के सभी अंगों का सम्राट होता है आपका मस्तिष्क।
उसका पोषण आहार से नहीं, विचारों से करना चाहिए।।
शरीर में शक्ति का स्रोत नहीं होता केवल भोजन।
पुष्ट शरीर हेतु मानसिक स्थिति का संतुलन होना चाहिए।।
रोगी नहीं बनना चाहते, चाहते हो यदि रहना स्वस्थ।
तो घर में प्रेम, सोहार्द व सहयोग का वातावरण होना चाहिए।।
घृणा, ईर्ष्या, कलह–कलेश से नसों में प्रवाह होता है मंद।
प्रसन्नता व निर्भय भावना से शारीरिक मालिश होनी चाहिए।।
कुविचार से ही होते रक्तचाप, मधुमेह, अपच व हृदय रोग।
बचके अवांछनीय चिन्तन से हल्की–फुल्की जिन्दगी बितानी चाहिए।।
छोटे मोटे रोग ही नहीं, कैंसर, रक्तचाप, यक्ष्मा व हृदय रोग।
इनसे निजात पाने हेतु भय व आंतक के काँटे बीनना चाहिए।।
भय, ईर्ष्या, घृणा, निराशा, अविश्वास बनाते हैं शरीर को अस्वस्थ।
आमोद–प्रमोद आशा व प्रेम से तन को स्वस्थ रखना चाहिए।।
क्रोध, आवेश व निराशा से विषैले रसायन तन में होते हैं उत्पन्न।
स्वस्थ जीवन हेतु दवा नहीं, विचार व चिंतन में संशोधन होना चाहिए।।
प्रसन्न मन स्थिति की नींव पर शरीर रूपी भवन होता र्निमित।
अतः निष्कलुश, निष्पाप, निर्दोष व पवित्र जीवन जीना चाहिए।।
रक्त संचार, श्वांस प्रश्वास, आंकुचन–प्रकुंचन से होता मस्तिष्क नियन्त्रित।
इस प्रकार मन को शरीर राज्य का अधिपति माना जाना चाहिए।।
दुश्चिंताए, कुंठाएँ, उलझनें व ग्रथिन्याँ चिंतन की विकृतियाँ है।
अतः दवादारू की जगह रोगी की मन स्थिति बदलनी चाहिए।।
शारीरिक, पीड़ा, दर्द, वेदना के जितने कारण शरीर में विद्यमान रहते।
उनसे अधिक मानसिक कारणों को इनके लिए उत्तरदायी मानना चाहिए।।
विपरीत परिस्थिति में निर्बल होते किकर्तव्यविमूढ़ व निराश।
ऐसी स्थिति में भी मनोबल के साथ, आगे बढ़ते रहना चाहिए।।
प्रकृति की सभी शक्तियाँ करती है मनुष्य के हित में ही काम।
पर आसावधानी व आलस्य से कोई अहितकार कार्य नहीं करना चाहिए।।
जीवन में किसी भी क्षेत्र में नहीं मिल सकती सफलता अनायास।
निरन्तर प्रयत्न करते हुए अपनी शक्ति विकसित करने रहना चाहिए।।
निसन्देह वस्तुएं व उपलब्धियां प्रत्येक मानव को होती है स्वयं सिद्ध।
पर प्राप्त करने की पात्रता व सुरक्षा हेतु शक्ति विकसित करनी चाहिए।।
यौवन का सम्बंध, तन की अपेक्षा मन से अधिक होता हैं।
शरीर भले ही बूढ़ा हो पर मन सदा युवा बने रहना चाहिए।।
आपके जीवन पथ पर समस्याओं के काँटों के पहाड़ हों।
परन्तु इन बातों से निराश व हताश नहीं होना चाहिए।।
रोगरहित और दीर्घायु वाले जीवन का रहस्य जानना जो चाहो।
व्यस्त रहकर हर समय, निराशावादी विचारों से दूर रहना चाहिए।।
अकर्मण्यता के कारण ही मानसिक शक्तियां पड़ती है कमजोर।
बचकर इनसे मानसिक प्रखरता स्थिर बनाए रखना चाहिए।।
निष्क्रियता अपनाकर प्रभावित करते क्यों अपने बुढ़ापे को।
व्यस्तता को बुढ़ापे की सौ दवाओं की एक दवा मानना चाहिए।।

सफेद बाल व लटकती त्वचा, इन्सान के बुढ़ापे की पहचान नहीं।
निष्क्रियता को वृद्धावस्था का प्रतीक चिन्ह माना जाना चाहिए।।
बीते दिनों पर खेद व्यक्त करने या हर्ष मनाने का कोई औचित्य नहीं।
अतीत की सस्मृतियां बहुत अधिक एकत्र नहीं करना चाहिए।।
आयु का संख्या से है पर यौवन से रत्ती भर सम्बन्ध नहीं।
मन स्थिति को प्रसन्नचित युक्त रख चिरयुवा बने रहना चाहिए।।
लाखों योनियों के बाद सत्कर्मों से पाए हो यह मानव जीवन।
मरना तो एक दिन है ही सबको पर उतावली नहीं दिखाना चाहिए।।

जन्म दिन

अपरेश मुखर्जी

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

माँ तुम रो रही हो,
तुम्हारी आँखों से आँसू बह रहे है,
किन्तु क्यों ?
आज तो तुम्हारा जन्म दिन है **14 सितम्बर**
आज तुम्हारे बच्चें तुम्हें माँ कहकर पुकार रहे है।
चारों तरफ तुम्हारी पूजा हो रही है,
फिर तुम क्यों रो रही हो।
आज तो तुम जंजीरों से मुक्त हुई हो।
किन्तु कितने दिन ?
सिर्फ एक पखवाड़े तक,
इसके बाद फिर मुझे ढकेल देना काल कोठरी में
माँ कहकर नहीं पुकारेगा
यह तुम्हारा समाज फिर भूल जायेगा मुझे
और अंग्रेजी भाषा को करेगा प्यार।
इतने वर्ष बीत गये,
तुमलोगों ने अपनी माँ को नहीं पहचाना।
माँ कहकर क्यों नहीं पुकारते हो।
एक पखवाड़े के बाद क्यों नहीं करते हो मेरी पूजा
क्यों कालकोठरी में ढकेल देते हो वर्षभर
और मनाते हो मेरे नाम पर **'हिन्दी दिवस', 'हिन्दी पखवाड़ा'**

ग़ज़लें

एस.आई. अनवर

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

किसी से क्या अब हम बतलायें

किसी से क्या अब हम बतलायें, कोई समझ ना पायेगा,
चिटख़ गया है दिल शीशे सा, अब ना जुड़ने पायेगा।
भले हो गई देर अगर अब भी ना जागे,
वीरां होगा आंगन और ये घर खड़ा रह जायेगा।
सोच समझ कर करो फ़ैसला, कर लो ख़ुद को क़ाबू में,
निकल गया जो तीर तो लौट कमान में फिर ना आयेगा।
या तो लोगों को बतलाओ, या लिख लो अपने जज़्बातों को,
कहीं अगर जो हुआ हादसा, तू ही मुजरिम कहलायेगा।
क्या सही था, क्या ग़लत है, हो गई जो पहचान तुझे,
झूठ फ़रेब की इस दुनिया में फिर ना गच्चा खायेगा।
फ़ख्र किया जो अपने फैसलों पे तुमने,
जान नतीजा बाद में अपने को ग़लत तू पायेगा।
समझा रहा हूँ मैं तुम्हें कुछ अच्छी बातें,
पर ऐसी बातों का मौजूं ना समझ में तेरे आयेगा।
हुई जो ख़्वाहिश पूरी तेरी ख़्वाब में 'अनवर',
रात में उठकर गीत ख़ुशी के भैरवी राग में गायेगा।

वक़्त की रफ़्तार

वक़्त की रफ़्तार है कि थमती नहीं,
बढ़ती ही जाती है और घटती नहीं।
जी लो इसको तुम ख़ुशी में डूब कर,
ज़िन्दगी ये बार–बार मिलती नहीं।
बात को तुम तौल लो कहने से पहले,
ये बिगड़ती है तो फिर बनती नहीं।
जो अकेले में सुना करते थे तुम,
लोगों की ये भीड़ वो सुनती नहीं।
फूले हुए थे हम कभी जिस चीज़ पर,
वो भी मेरे पास अब रहती नहीं।
लाख सोये हैं मुसाफ़िर इस जगह में,
क़ब्रे हैं लोगों की ये बस्ती नहीं।
ख़्वामख़्वाह रक्खा है तुमने अपना हाथ,
ये वो रग है जो कभी दुखती नहीं।
चोट से जो उठ गई थी मेरी गरदन,
अब किसी के सामने झुकती नहीं।
चल पड़ी जो बात इक झटके से उनकी,
लाख कोशिश के भी ये रुकती नहीं।
देखना मुश्किल था पहले एक बार,
अब जो देखूँ नज़रें ये फिरती नहीं।
पहले सोचा सब बता दूँ पर छुपाया,
क्योंकि 'अनवर' बात सब सच्ची नहीं।

कुछ तो रुके!

अपने किरदार को संवारने की कोशिश से क़ब्ल,
दुआ करो कि गुनाहों का सिलसिला तो रुके।
सफ़र के शौक़ में चलने से आ गईं मंज़िल,
बड़ी थकान थी अच्छा हुआ क़दम तो रुके।
कश्तियॉ लौट के साहिल पे ही आयेंगी कभी,
मौजों में ज़ोर से उठता हुआ तूफ़ां तो रुके।
वक़्त आने दे बताऊंगा मैं इस ग़म का सबब,
अपने हालात पे लोगों की ये हंसी तो रुके।
ख़ुद–ब–ख़ुद भीड़ से कर लूँगा मैं ख़ुद को अलग,

तेज़ रफ़्तार से चलती हुई गाड़ी तो रुके।
दिल के जज़्बात को काग़ज़ पे कहॉ तक लिक्खूं,
ख़त्म हो जाए स्याही कि ये क़लम तो रुके।
ख़ुद–ब–ख़ुद शौक़ तेरा शाएरी का होगा ख़त्म,
हाथों में पकड़ा क़लम और मुँह की ये जुबॉ तो रुके।
ख़ुदा के शुक्र से है बच रहा आशियॉ 'अनवर',
रोज़ चलती हुई आंधी की पर हवा तो रुके।

ख़्वाहिशें

भटके हुए को राह की कोई डगर मिले,
काली अंधेरी रात की कोई सहर मिले।
मुंसिफ़ बना तो ख़ुद ही वो करता है ऐसे जुर्म,
मुजरिम भी जिनसे भागते और ख़ौफ़ज़दह मिले।
खोया है जो यहॉ पे कुछ ऐसा है बदहवास,
भटके मुसाफ़िरों से पता पूछता मिले।
सुनते तो हो बताओ मुझे कोई इसका हल,
आख़िर तो इन उल्झनों का कोई सिरा मिले।
इन शोख़ियों को छोड़ दो गर्दन को करलो नर्म,
ऐसा ना हो कि जिस्म से ये सर कटा मिले।
कर जाए जो इलाज ज़िन्दगी के दर्द का,
खा लूंगा उसको शौक़ से जो ऐसा ज़हर मिले।
दिल की तड़प का दर्द उतर आए सामने,
हर बार तेरी आंख का आंसू गरम मिले।
चेहरे जहॉ चमकते हों दिल के सुकून से,
बस जाऊँ उस जगह पे जो ऐसा शहर मिले।
हर बार तेरे ख़ौफ़ से न पूछा हाल–ए–दिल,
कर लूंगा मैं सवाल जो अबकी नज़र मिले।
गुज़रे दिनों का दर्द करे आज भी मुझको तंग,
मिट जाए एक पल में कोई ऐसी दवा मिले।
महकी हों ख़ुश्बुओं से दिल को सुकून दे,
'अनवर' तुझे हयात की ऐसी हवा मिले।

बचपन के मौसम

जब हम छोटे बच्चे थे, सारे सपने अच्छे थे
नानी अम्मां के होठों पे सारे क़िस्से सच्चे थे
मीठे कितने लगते थे, आम जो सारे कच्चे थे
जब हम छोटे बच्चे थे..
गर्मी ख़ूब पड़ती थी, लू भी दिनभर चलती थी
सब कहते कि घर में बैठो, लेकिन हम कब रुकते थे
घर में सिर्फ़ सुराही थी और पानी उसका पीते थे
जब हम छोटे बच्चे थे..
पीली ऑधी आती थी, पेड़ों को ख़ूब हिलाती थी
अगले दिन बाज़ार में सारे आम ही आम बिकते थे
घर के कच्चे आंगन में हम चारपाई पर लेटा करते थे
जब हम छोटे बच्चे थे..
जब भी सावन आता था, एक झड़ी लग जाती थी
सब कहते कि छुट्टी होगी, छुट्टी भी हो जाती थी
जीवन में संघर्ष कहॉ था, हल्के कितने बस्ते थे
जब हम छोटे बच्चे थे..
बादल ख़ूब गरजते थे, सारे पेड़ महकते थे
घर के कोने में हम बैठे भुट्टे खाया करते थे
रात के काले अँधियारे में जुगनू ख़ूब चमकते थे
जब हम छोटे बच्चे थे..
सर्दी ऐसी पड़ती थी घर में दुबके रहते थे
हीटर का माहौल नहीं था, आग जलाया करते थे
जैकेट की क्या बात करें हम, स्वेटर में ख़ुश रहते थे
जब हम छोटे बच्चे थे..
फ़ुरसत इतनी रहती थी धूप में लेटा करते थे
मेहमानों के आने से घर की कुण्डी खूब खड़कती थी
बोझ नहीं, ख़ातिर करने को अपना फ़र्ज़ समझते थे
जब हम छोटे बच्चे थे..
छुट्टी जब भी होती थी छत पर पतंग उड़ाते थे
मौज मनाने अक्सर हम पिकनिक पर जाया करते थे
सड़कों पर तब धुऑ नही था रिक्शे बहुत से चलते थे
जब हम छोटे बच्चे थे, सारे सपने अच्छे थे

ऊँ चक्षु देवाय नमः

साहबदीन

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

दोहा

गुरुवर उमा–उमापति, गणपति शारदमातु।
प्रथम वन्दना जनक निज, आदि शक्ति मम मातु।।1।।
"दीन" हीनरस, ज्ञानसों, छंद शक्ति दोमातु।
आँसू मोती प्रेम के पिरोजाहिंजोमातु।।2।।

चौपाई

वन्दउँ अश्रु हिये धरि धीरा। बिनु वाणी कह राज गंभीरा।।1।।
नर–नारी जो जगत मंझारी। सबके चरनन नमन हमारी।।2।।
परम पवित्र आँस मैं माना। तासों विनय कीन धरि ध्याना।।3।।
नर–नारी बालक अरु वृद्धा। जो–जती–ज्ञान मन श्रद्धा।।4।।
बिन आँसू को यदि जग माहीं। देखा–सुना कतहुँजग नाहीं।।5।।
अश्रु विविध–विधि नयन निहारी। प्रनवउँ सकल नयन भरिवारी।।6।।
प्रथमहिं शिशु के अश्रु पुनीता। निज अभित्रा कहहिं सविनीता।।7।।
बिलखति कबहुक धीर बिसारी। सुनतहिं बिलिखि परैमहतारी।।8।।
सो बिलोकि मुनि ध्यान बिसारहिं। धन्य–धन्य जय मातु उचारहिं।।9।।
पति घर जात पिता घर छूटत। एक संग अबला मन डूबत।।10।।
सुख–दुख अश्रु साथ ही उपजैं। तासों मोह नारिमन सिरजैं।।11।।
अमित मोह मन धीर अपारा। अश्रु बहाय रचा संसारा।।12।।
दूजे आधि–व्याधि के भारी। पुनि जब होति जगत से न्यारी।।13।।
इनकी कथा कहे नहिंआवै। समुझति नयन नीर भरि आवै।।14।।
मातु–सुता–सुत सों बिलगावति। विलखि–विलखि निज हिये लगावति।।15।।
तेहि अवसर धीरजहू भागा। ह्वै अधीर मन रोवै लागा।।16।।
स्रवहिं अश्रु जस मनि कै माला। टूटे हार सरिस तेहि काला।।17।।
प्रसव काल आँसू गंभीरा। के हि विधि कहौं जान मन धीरा।।18।।
प्रसवत सकल धीर मन भागा। साथहिं भयी जननि सुख लाग।।19।।
असहनीय आँसू एक ओरा। अमित खुशी साथहिंमन शोरा।।20।।
संततिहीन के आँसू हीरा। संततिवान के अश्रु गंभीरा।।21।।
ताके आँस कहौं केहि भाँती। गोद सूनिजाकी होइ जाती।।22।।
क्षुधा तृषित बिलखहिं धन हीना। उनके आँसू विधि हरि लीना।।23।।
पी–आँसू हरि ध्यान लगावैं। धन्य आँस जोतपनि बुझावैं।।24।।
जब प्राणी परलोक सिधारै। नयन बहैं नहिं बचन उचारै।।25।।
तेहि छन मित्र कुटुम परिवारा। को असजो नहिं आँसू डारा।।26।।
बारे शिशु जेहिमातु–पितागे। ताके आँसू कौन गिनैंगे।।27।।
इनकी दशा निहारि–निहारी। सज्जन बिलखहिं समय विचारी।।28।।
तेहि अवसर कछु अवसरवादी। झूंठै रोय कहैं बरबादी।।29।।
जोड़ी जुगल फूटि जेहि जाती। ताके आँसू भये संघाती।।30।।
जोगी–जती–सती–सन्यासी। ज्यों जल बीच मीनहो प्यासी।।31।।
उनमुन रहहिंसदा दुख भारी। राखहिं निजहिय आँस संभारी।।32।।
प्रेम सिन्धु उमड़े बहि जाहीं। अतिदुख सूखि नयनमाहुँ जाहीं।।33।।
नयनोदक की महिमा भारी। मनसंताप नसावन हारी।।34।।
उनकी गति समुझी नहि जाई। जो बिनु कारन आँस बहाई।।35।।
स्रवहिं अश्रु नयनन बहु भाँती। अति दुख भए मनहु की थाती।।36।।
याही भाँति सकल जग माहीं। आँसू सों वंचित कोउ नाहीं।।37।।
भाँति–भाँति रोवनिजग माहीं। अश्रु रूप दूसर जग नाहीं।।38।।
प्रभु कहुँ आँसू परमपियारे। निर्मल हिय आँसू हरि हारे।।39।।
हिय राखहिं आँसू मति धीरा। आँसू हरहिं सकल मन पीरा।।40।।

दोहा

चालीसा पढ़ि सुनि गुनहिं, सुमिरहिं श्रीत्रिपुरारि।
भाव–भाव में पावहीं हृदय कपाट उधारि।।1।।
आँसू की जड़ प्रेमहै, जो अथाह–गहिरान।
प्रेम बिना इस जगत में, ज्ञान, शरीर मशान।।2।।
अश्रु देखि पाहन द्रवैं, नहि उर–हीन कृपालु।
"दीन" विनय तासों करैं, होऊ अश्रु दयालु।।3।।

ऊँ शांतिः

भारतीय संस्कृति का विश्व व्यापी विस्तार

मालती शर्मा[1] एवं दीपक राय[2]

[1]पूर्व प्रधानाचार्या, फतेहपुर गर्ल्स इण्टरमीडिए कालेज, फतेहपुर

[2]भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है। प्राचीनकाल से ही भारतवासी संसार के दूसरे देशों से संबंध रखते आ रहे हैं। उस समय यहाँ के लोगों में अद्‌भुत उत्साह था, वे बड़े साहसी होते थे। भारत की भौगोलिक स्थिति भी उन्हें सुदूर देशों तक जाने में सहायक बनी। भारत संसार के सभ्य देशों से समुद्री मार्ग से जुड़ा था। अपनी इसी स्थिति के कारण प्राचीन काल से भारत जल और थल दोनों मार्गों द्वारा उत्तर पश्चिम और दक्षिण पूर्व के देशों से जुड़ा रहा।

संक्षेप में, भारतीयों ने अनेकानेक प्रदेशों व द्वीपों के आदिवासियों को सभ्यता व संस्कृति का पाठ पढ़ाया। उनके जीवन का प्रत्येक पहलू भारतीयता से प्रभावित रहा। फ्रांसीसी विद्वान सिलवान लेवी का कथन है– "ईरान से चीन समुद्र तक साइबेरिया के तुषाराच्छादित प्रदेशों से जावा और बोर्नियों टापू तक और ओशोनिया से शोकोटरा तक भारत ने अपने विश्वास, अपनी कथाओं और अपनी सभ्यता को फैलाया है। उसे इस बात का पूर्ण अधिकार है कि अज्ञान के कारण उसे संसार के इतिहास में जो पद प्राप्त नहीं हो सका, उस पद को अब प्राप्त करें और मानव आत्मा की प्रतीक महान जातियों के बीच अपना स्थान ग्रहण करें।"

यहाँ के लोगों ने सारी दुनियाँ को ज्ञान गंगा में निमज्जित किया, धर्म की दीक्षा दी, आत्मबोध कराया और विश्वगुरू बने। विश्व का कोई भी कोना यहाँ की संस्कृति से अछूता नहीं है। भारतवर्ष ने जिन देशों में अपनी संस्कृति का विस्तार किया वे कुछ इस प्रकार है :–

इंडोनेशिया

- इंडोनेशिया के अनेक नगरों के नाम भारतीय नगरों के समान हैं जैसे– अयोध्या, तक्षशिला, हस्तिनापुर, गांधार, विष्णुलोक एवं लवपुरी आदि। यहाँ की राजधानी जकार्ता वस्तुतः 'यज्ञकर्ता' शब्द का अपभ्रंश है।
- विष्णु वाहन गरूण इण्डोनेशिया निवासियों का श्रद्धापात्र है, उनके नाम 'गरूड एयरवेज कम्पनी' चलती है। 'गरूड़ पर सवारी कीजिए' – 'गरूड़ गति से प्रवास करिए' जैसे विज्ञापन बाँटे व चिपकाए जाते है।
- इंडोनेशिया में रामलीला बहुत लाकप्रिय है और यह क्रमशः अधिकाधिक कलात्मक होती गई है। यहाँ की संस्कृति में 'रामायण' के लिए गहरी श्रद्धा है। न्यूयार्क में एक इण्डोनेशियाई होटल का नाम 'रामायण होटल' है।

सुमात्रा

- सुमात्रा का प्राचीन माम 'श्रीविजय' था।
- सुमात्रा में पाए जाने वाले प्राचीन खंडहरों में से अधिकांश शिव मंदिर हैं। यहाँ अभी भी रामसीता, हनुमान, रूद्र शिव, भवानी दुर्गा के मंदिर हैं और यथावत पूजा होती है।

जावा

- जावा में रामलीला का बड़ा महत्व है। इसे प्राचीन काल में मवद्वीप कहते थे।
- जावा में पर्वतों के नाम सुमेरू, अर्जुन, रावण आदि हैं तथा नदियों के नाम सरयू, वृंदा, प्रयाग, भगवन्ता आदि हैं। यहाँ पर संस्कृत भाषा अंकित शिला लेख भी प्राप्त हुए हैं।
- यहाँ के साहित्य में संस्कृत शब्दों और श्लोकों का उपयोग किया गया है। रामायण एवं महाभारत की कथाएं यहाँ के साहित्य में भरी पड़ी हैं।
- चीनी यात्री फाह्यान जब अपने देश लौट रहा था तो वहीं पर ठहरा था।

बाली द्वीप

- पारिवारिक पूजा में सबसे अधिक महत्वपूर्ण 'सूर्य सेवन' या 'शिव' की सूर्य के रूप में पूजा है। इसके अतिरिक्त पारिवारिक धार्मिक कर्मकाण्डों में वे सब संस्कार भी किए जाते हैं जो कि गुह्य सूत्र में बताए गये हैं जैसे जन्म संस्कार, नामकरण संस्कार, कर्णभेदन संस्कार, विवाह संस्कार, दाह संस्कार आदि।
- पूजा में घृत, कुश एवं मधु तथा पवित्र जल का उपयोग होता है।
- शवों का दाह संस्कार कर जलाया जाता है, और श्राद्ध कर्म किए जाते

हैं।

- शैव प्रतिमाओं की समय–समय पर शोभा यात्रा निकालीजाती है तथा रामलीला की धूम रहती है।

चीन

- ईसा की प्रथम सदी में खोतान से बौद्ध धर्म चीन पहुँचा।
- चीनी धर्म पुस्तक 'चोकिंग' में कश्मीर से हिंदुओं के उस देश में पहुंचने और सुव्यवस्थित समाज व्यवस्था बनाने का उल्लेख है।
- भारतीय बौद्ध भिक्षुओं का प्रवाह भारत से चीन की ओर अनवरत रूप से होता रहा। फलतः चीन में धर्मचक्र प्रवर्तन का क्रियाकलाप द्रुतगति से अग्रगामी होता चला गया। कई ग्रंथों का चीनी भाषा में अनुवाद हुआ।
- विशाल मंदिर, मठ, गुहा, बिहार एवं स्तूपों पर भारतीय संस्कृति व शैली की अभिन्न छाप रही है। जो उनके ध्वंसावशेषों से स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

चम्पा

- आज का अन्नाम देश ही प्राचीन काल का चम्पा राज्य था।
- यह राज्य हिन्दू और बौद्ध मन्दिरों से अलंकृत था।
- विष्णु, कृष्ण, गणेश, बुद्ध आदि की प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं।
- सोलहवीं शताब्दि में मंगोलों के आक्रमण द्वारा प्राचीन सम्यता के अस्तित्व का क्षरण हुआ।

कम्बोज

- यहाँ की राजधानी अंगोरथोम थी।
- यहाँ का राजा यशोधर्मा अर्जुन व भीम जैसा वीर और सुश्रुत सा विद्वान और नृत्य कला में पारंगत था।
- यहाँ शैव और वैष्णव दोनों धर्म उन्नतशील दशा में थे।
- यहाँ रामायण, महाभारत और पुराण आदि का सम्मान था।
- यहाँ आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति का प्रचार था।

मलाया

- इस उपनिवेश का नाम लवकुश था।
- यहाँ अगस्त ऋषि का पूजा व दान का वर्णन मिलता है।
- महिसासुर मर्दिनी की प्रतिमा व नन्दी का सिर मिला है जो यहाँ के लोगों के शैव होने का प्रतीक है।
- भारतीय सभ्यता व संस्कृति का पूर्ण प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

जर्मनी

- जर्मनीवासियों की मान्यता है कि वे आर्य रक्त के विशुद्ध उत्तराधिकारी हैं।
- जर्मन विद्वानों ने सिद्ध किया है कि जर्मन शब्द 'शर्मन' का अपभ्रंश है और यह नामकरण तत्समय पहुँचे भारतीय ब्राम्हणों ने किया है और वहाँ उपलब्ध खण्डहरों में मंदिरों और देवी–देवताओं की मूर्तियों के जो अवशेष प्राप्त हुए हैं, उनसे स्पष्ट कि प्राचीन काल में अमेरिका एक प्रकार से भारत का सांस्कृतिक उपनिवेश ही था। इन्द्र, अग्नि, गणेश, शिव और सूर्य की मूर्तियाँ वैसी ही हैं जैसी भारत में पायी जाती हैं। मंदिरों और भवनों का निर्माण भी भारतीय वास्तुकला के अनुरूप ही था।
- भारतीय पौराणिक उल्लेख और मैक्सिकों में प्रचलित 'किजकस' गाथाओं में आश्चर्यजनक साम्य मैक्सिकों निवासियों की प्राचीन सम्यता 'मय' कहलाती है।
- कपूरिगो (ग्वाटेमाला) में उपलब्ध शिला प्रतिमाओं में स्पष्ट भारतीय शिल्प छलकता देखा जा सकता है। जिस प्रकार अनेक खंभों वाले मंदिर भारत में जहा–तहाँ दीख पड़ते हैं, उसी प्रकार 'यूक्टास' के ध्वंसावशेष 'थाइलैण्ड का लक्स'(हजार स्तम्भी) को देखा जा सकता है।
- पेरू शब्द का अर्थ संस्कृत में 'सूर्य का देश' है–सूर्य पुत्रों का देश। सूर्य अस्त होने पर रात्रि को वहाँ रहने का देश पेरू कहा जाए, यह स्वाभाविक है। भारतीयों का दिया यही नामकरण पेरू में अभी भी प्रचलित है।
- अमेरिका के तत्वदर्शी 'बिल्डयूरेड्स' ने भारतभूमि को अनेक दृष्टिकोण से माता माना है। कनाडा के मूल निवासी 'इण्डियन' शब्द से ही संबोधित किये जाते हैं।
- अमेरिका के इलियट की रचनाओं में तथा कविताओं में उपनिषदों के संदर्भ भरे पड़े हैं।

तिब्बत

- कैलाश मानसरोवर का शिवतीर्थ–तिब्बत, बौद्धधर्म का केन्द्र है।
- देवी–देवताओं, के प्रति श्रृद्धा– निष्ठा भारत के समान तथा साधना– उपासना भारतीय योग विद्या का ही अनुकरण यहाँ के लोगों ने किया।
- बौद्ध धर्म के अनेक ग्रन्थों का अनुवाद तिब्बती भाषा में हुआ। जिनमें 'काँजर' और तांजूर प्रमुख है।
- राजा जनक की राजधानी जनकपुर (मिथिला) यहीं थी।
- स्कन्द पुराण के अनुसार श्रीकृष्ण

नेपाल के आराध्य भगवान पशुपति नाथ के दर्शनार्थ नेपाल गये थे।

- गौतम और कपिल मुनि के आश्रम उसी क्षेत्र में थे। याज्ञवल्क्य, विश्वामित्र, श्रृंगी श्रृषि का कार्य क्षेत्र भी यहीं था।
- नेपाल प्रदेश का नामकरण उसकी नैतिक विशेषता एवं धर्मनिष्ठा के आधार पर है।
- हिंदू धर्म व संस्कृति का मुख्य देश।
- बौद्ध धर्म व संस्कृति का मुख्य देश।
- बौद्ध–हिंदू धर्म में समन्वय का दर्शन होता है।
- श्री सत्यकेतु विद्यालंकार के मतानुसार अग्रवंशी राजा अग्रसेन के पूर्वज नेमिनाथ ने इस देश को बसाया था।
- गोरखा 'गो रक्षक' का अपभ्रंश हैं।

भूटान

- दक्षिणी भूटान में सनातनी हिन्दू धर्म शेष में बौद्ध धर्म प्रचलित है।
- भारतीय संस्कृति व धर्म का प्रभाव सभी ओर परिलक्षित है।

बर्मा

- अशोक के समय से ही भारत व वर्मा का संबंध स्थापित हुआ।
- इस क्षेत्र में विशाल विष्णु मंदिर है जिसकी दीवारों पर दशावतारों की प्रतिमाएं अंकित हैं।
- हिन्दू देवी–देवताओं और रीति–रिवाजों का अनुकरण होता है।
- यहाँ पर जाति प्रथा नहीं है।
- यहाँ पर बौद्ध धर्म के 'हीनयान' सम्प्रदाय का खूब प्रचार था।

श्रीलंका

- श्रीलंका के धर्म, कलाव संस्कृति पर भारतीय प्रभाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है।
- राजतंत्र चलाने वाले विज्ञान–धर्म–गुरू तथा व्यवसायी भारतीय वंशधर ही रहे हैं।
- उत्तर भारत के भारतीयों ने ही द्वीप को बसाया। धर्मप्रचारक (बौद्ध) संघमित्रा और महेन्द्र पहुंचे थे।
- भारतीय धर्म ग्रन्थों रामायण आदि में स्वर्णगिरी लंका के विषय में वर्णन मिलता है।

कम्बोडिया

- कम्बोडिया का प्राचीन नाम कनान था।
- इतिहासकार के. केण्डलई और ली0 टोओ युआन के कथनानुसार ईसा की तीसरी शताब्दी में यहाँ हिंदू राज स्थापित हो चुका था।
- सोमा (कम्बोडियन) और कौडिन्य (भारतीय) से उत्पन्न पुत्र कम्बोडिया का शासक बना। वर्मन बन्धु सभी इसी वंश के थे।
- यहाँ के लोग शैव धर्म के अनुयायी थे और भाषा संस्कृत थी।

जापान

- जापान की नारा नगरी में मथुरा वृंदावन जैसी रागरंग की धूमधाम रहती है।
- जपान में सूर्य देवता की पूजा होती है। वह अपने को सूर्य की संतान मानते हैं।
- ऐतिहासिक अवशेषों के अनुसार सूर्यवंशी राजाओं ने यहाँ पहुंचकर शासन सूत्र संभाला और राज्य व्यवस्था का सूत्रपात किया। बाद में बौद्ध प्रचारक वहाँ पहुंचे और बौद्ध धर्म खूब फला–फूला।
- जपानी अक्षर हिंदी की तरह ही ध्वनिपरक होते हैं, उनकी वर्णमाला का क्रम देवनागरी जैसा ही है।

रूस

- ईसा की दसवीं शताब्दी तक रूसी लोग उन्हीं देवताओं की पूजा करते थे जो भारत में पूज्य होते थे।
- रूसी पुरातत्व विभाग की खोज में ऐसे अनेक स्मारकों, मंदिरों, विद्यालयों, भित्ति चित्रों, शिलालेखों, ग्रंथों, मूर्तियों तथा भग्नावशेषों का संग्रह किया है, जो उसमें प्राचीनकाल में भारतीय संस्कृति एवं बौद्ध धर्म के प्रसार का प्रमाण देते हैं।

साइबेरिया

- साइबेरिया के प्राचीन मंदिर में स्थित मूर्तियां हिन्दू देवताओं की हैं। यहाँ का बड़ा मंदिर 'महाकाल' देवता का है, जिसका स्तवन संस्कृत श्लोकों में होता था। यहाँ के नगर में 108 स्तूप खंडहर रूप में हैं।

मिश्र

- प्राचीन काल में मिश्र भारतीय संस्कृति का प्रमुख केन्द्र था। इस सुरम्य क्षेत्र को सर्वप्रथम भारतीयों ने ही आबाद किया था। भविष्य पुराण में ऋषियों के मिश्र में जाने और वहाँ सभ्यता का विस्तार करने का स्पष्ट वर्णन है।
- मिस्र पर शासन करने वाले 'हिस्री' (क्षमी) राजा सूर्य और वरूण की पूजा करते थे। मंदिरों की परिक्रमा करने का प्रचलन था। मृतकों की चिता जलाई जाती थी और 13 दिन का शोक मनाया जाता था।
- पिरामिडों में सुरक्षित शवों तथा अन्यत्र पाई गई खोपड़ियों में से 80 प्रतिशत आर्य नस्ल के लोगों की है।

जीवन की सार्थकता

सुधीर कुमार शुक्ल

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

यह एक विचारणीय प्रश्न हैं कि हमारा जीवन किस प्रकार से सार्थक हैं। क्या हम इस राष्ट्र, समाज या व्यक्ति किसी के लिए भी परोक्ष या अपरोक्ष रूप से लाभकारी हैं। क्या हम अपने जीवन के अलावा दूसरों के बारे में भी ध्यान देते हैं ? क्या हम उतने ही संवेदनशील है जितना कि हम दूसरों से अपेक्षा रखते हैं।

मनुष्य का जीवन मात्र भोजन तथा प्रजनन के लिए ही नहीं हुआ हैं। यह अन्य सभी जन्तु विज्ञान के जीवों पर अवश्य लागू होता हैं। मनुष्य का मष्तिष्क सर्वाधिक विकसित होने के कारण ही यह शारीरिक बल से कम विकसित होने के बावजूद सभी जंतुओं पर अधिकार रखता है। इसका दुरूपयोग भी हमारे सामने उपलब्ध है। वनों को काटकर अन्य जंतुओं के लिए निवास एवं खाद्यान्न पदार्थों की कमी मनुष्य ही कर रहा है।

आज प्राकृतिक संसाधनों का दोहन इस प्रकार से हो रहा है कि हमारे सामने एक बड़ी चुनौती है। अगले पचास वर्षों के बाद पृथ्वी के अधिकतर भू भाग पर पेयजल के लिए हाहाकार मच सकता है। इसको प्रत्यक्ष उदाहरण अभी भी कहीं न कहीं उपलब्ध है। हमारे पूर्वजों ने धार्मिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक अनुष्ठानों में प्रकृति का इस प्रकार समावेश किया था कि वह हमारे संस्कारों में ऐसा रच बस गया था कि हम जाने या अनजाने उसकी रक्षा करते रहे। पीपल के पेड़ का न काटना, गन्ने के पकने पर त्यौहार जैसे देवोत्थानी एकादशी, केले एवं आम के पत्ते का विभिन्न अनुष्ठानों में प्रयोग, नया अन्न आने पर उसकी पूजा, अन्न देवता जैसा सम्मान, जल, वायु, अग्नि को देवताओं का मान क्या इसका प्रतीक नहीं है कि हम अपने दैनिक जीवन में प्रकृति को समेटकर ऐसा वातावरण बनाए रहे जिससे प्रकृति की रक्षा होती रही। लेकिन आज हम किधर जा रहे हैं, हम अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी चला रहे हैं। क्या हमारा जीवन सिर्फ अपनी पीढ़ी तक सीमित है। अगर हमारे पूवर्जों ने ऐसा सोचा होता तो क्या हम आज इस रूप में होते?

एक अन्य बिंदु जो कि लगातार राष्ट्रवासियों को उद्वेलित कर रहा है वह है हमारी सामाजिक व्यवस्था में विभिन्न वर्गों के बीच में बढ़ती खाईं। जिसको हमारे आज के नीति नियामकों ने पाल पोस कर बढ़ाया है। शिक्षा व्यक्तित्व के विकास में सहायक होती है लेकिन हमारी शिक्षा का गिरता स्तर आने वाले समय के लिए संदेश है कि हमारी राह सही नहीं है। मात्र डिग्री हासिल करने से क्या होगा? हमारी सरकारी शिक्षा चाहे जैसी हो लेकिन गैर सरकारी रूप से अध्यात्म, योग, धर्म, मूल्यों में हम विश्व में प्रारम्भ से ही अग्रणी रहे हैं। हमें इसकी ओर ध्यान देते रहना है। हमारे जीवन का उद्देश्य सिर्फ भोजन की व्यवस्था एवं जनसंख्या में वृद्धि कर पृथ्वी का भार बढ़ाना ही नहीं है। जिंदगी के पलों में कुछ पल इस सोच पर भी दीजिए एवं अच्छा रहेगा कि इस पर अमल भी करते रहें नही तो आगे आने वाली पीढ़ियॉ हमें कभी माफ नहीं करेंगी। **आखिर हमारे जीवन की सार्थकता क्या है?**

नैतिकता का पतन

चन्द्र प्रकाश सिंह

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

जीवधारियों में अपने आप को श्रेष्ठतम कृति मानने वाला मानव क्या सचमुच में श्रेष्ठ है? उत्तर सकारात्मक होगा, यह सम्भावना प्रबल होना भी स्वाभाविक है। परन्तु किसी भी विषय पर प्रश्नचिन्ह लगने पर स्वाभाविक प्रतिक्रिया होना भी अपने आप में एक स्वाभाविक क्रिया होती है। इन्हीं क्रियाओं एवं प्रतिक्रियाओं के विश्लेषण से स्पष्ट होगा कि मानव कितना श्रेष्ठ है उसकी श्रेष्ठता में जिस वस्तु का महानतम योगदान है वह मानव का विकसित मस्तिष्क ही है मानव के विकसित मस्तिष्क ने ही प्रकृति में एसी परिस्थितियां उत्पन्न की जो कि अन्य जीवधारियों की अपेक्षा मानव के प्रति अत्यधिक अनुकूल थी। प्रकृति में अपने को बेहतर समायोजित करने के बाद पाशविक प्रवृत्तियों के निराकरण हेतु मानव ने एक सामाजिक व्यवस्था की स्थापना की जिसमें मानवीय मूल्यों के आधार पर नैतिक, सामाजिक व आर्थिक

विषयों पर नियम व उपनियम बनाये जिनके अंतर्गत रहकर मानव विकास की सीढ़ियाँ चढ़ता रहा। विकास इसलिए सही नहीं हो सका क्योंकि जिन नैतिक मूल्यों के सहारे उसने विकास की यात्रा प्रारम्भ की थी वही नैतिक मूल्य आज उसे विकास में बाधक बनते नजर आने लगे। मनुष्य जाति का एक वर्ग नैतिक मूल्यों में आस्था इसलिए नहीं रखता क्योंकि आर्वाचीन परम्पराओं व कथित आधुनिक विकास में नैतिक मूल्यों का कोई मूल्य ही नहीं। और वह इन अमूल्य नैतिक मूल्यों को अपने विकास में बाधा मानता है।

मगर क्या यह सच है? क्या विकास की सीमा मात्र भौतिक वस्तुओं का संचयन व उपभोग है? यदि हाँ, तो विकास की इस संकीर्ण मानसिकता में एक पशु भी जी सकता है जिसे अपने खाने, बच्चे पैदा करने व पालने तक सीमित माना जाता है। फिर हम पशु से भिन्न कहाँ? अगर हम अपने स्वार्थ के लिए किसी दूसरे का धन हड़प या छीन लेते है, अहंकार, लालच या द्वेशवश किसी की हत्या कर या करवा देते हैं, परनारी के उपभोग में बेशर्म बन जाते है, नैतिक उपदेश देकर अनैतिक कार्य करते हैं, धर्म की आड़ में अधर्म करते हैं, रक्षक बनकर भक्षक बनते हैं आदि–आदि तो हम पशुओं से भिन्न कहाँ हैं? कहाँ है हमारी नैतिकता व हमारे मानवीय मूल्य?

हम श्रेष्ठ तभी हैं जब दूसरे मानव को भी अपने जैसा मानव समझकर व्यवहार करते हैं। प्रकृति के प्रत्येक जीव व वस्तुओं की सेवाओं को प्रकृति प्रदत्त गुणें के आधार पर उपभोग करते हैं ताकि मानव व प्रकृति में संतुलन बना रहे। मानव में निहित दुर्गुणों से प्रेरित क्रियाओं व प्रतिक्रियाओं पर नियन्त्रण करते हरें। तभी हम नैतिकता के पतन पर नियन्त्रण कर सकते है।

शार्टकट् का प्रयोग करें: समय की बचत करें

धर्मेंद्र चंद पंत, अरविन्द कुमार यादव एवं नागचंद

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

रोजमर्रा के प्रयोग में कंप्यूटर का महत्व काफी बढ़ गया है। आज के समय में यदि किसी को कंप्यूटर की जानकारी नही है तो वह पूरी दुनिया से कट गया है अैर कार्यालय के कार्यों में भी उसे काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। कंप्यूटर का प्रयोग बढ़ जाने से कार्यालयों में टाइपिंग मशीन का प्रयोग बंद हो गया है। कंप्यूटर के प्रयोग में यदि हम उसके कुछ की–बोर्ड शॉर्टकट्स को जानते हैं तो हमें उस पर काम करने में काफी आसानी और समय को भी बचाया जा सकता है।

Ctrl + A का प्रयोग कर पेज के सभी कंटेंट select कर सकते है।

Ctrl + B का प्रयोग करके सामग्री को Bold कर सकते है।

Ctrl + C का प्रयोग करके सामग्री को copy कर सकते हैं।

Ctrl + E का प्रयोग करके सामग्री को कंप्यूटर स्क्रीन के बीचे में ला सकते है।

Ctrl + F का प्रयोग किसी सामग्री को ढूंढ़ने में ला सकते है।

Ctrl + I का प्रयोग करके सामग्री को Italic कर सकते है।

Ctrl + J का प्रयोग करके सामग्री अथवा लाईन को Justify कर सकते है।

Ctrl + L का प्रयोग करके सामग्री अथवा लाईन को बायें में कर सकते है।

Ctrl + P का प्रयोग करके प्रिंट विन्डो को खोला जा सकता है।

Ctrl + R का प्रयोग करके सामग्री अथवा लाईन को दायें कर सकते है।

Ctrl + S का प्रयोग किसी फाइल का Save करने के लिए।

Ctrl + U का प्रयोग करके सामग्री को अंडर लाइन कर सकते हैं।

Ctrl +V का प्रयोग करके pest कर सकते हैं।

Ctrl + X का प्रयोग करके सामग्री को cut किया जा सकता हैं।

Ctrl +Y का प्रयोग करके सामग्री को Redo किया जा सकता हैं।

Ctrl + Z का प्रयोग करके किसी किए हुए कार्य को Undo किया जा सकता हैं।

Ctrl + Shift +F का प्रयोग करके Font बदला जा सकता हैं।

Ctrl + Shift+> का प्रयोग करके क्रमशः 1 Point फांट को बढ़ाया जा सकता हैं।

Ctrl +] का प्रयोग करके क्रमशः फांट को घटाया जा सकता हैं।

Ctrl +Backspace का प्रयोग करके कर्सर के दायें तरफ शब्द को Delete किया जा सकता हैं।

Ctrl +End का प्रयोग करके Document के अंत में जाया जा सकता हैं।

लघु कहानियाँ एवं जानकारियाँ

दिलदार हुसैन

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

श्रम से बड़ा कोई देवता नहीं

एक बार देवता देवता धरती पर आए। उन्हे उम्मीद थी कि धरतीवासी उनका स्वागत करेंगे। उन दिना खेतों में धान की फसल लहरा रही थी। सभी लोग काम में लगे हुए थे। उनकी ओर किसी ने आँख उठाकर भी नहीं देखा। देवता सोचते थे, धरती के लोग उनसे मिलेंगे, तो खुश होंगे। वे वरदान माँगेंगे। फिर उन्होंने पता लगाना चाहा कि आखिर क्यों लोग उन्हें देखकर प्रभावित नहीं हुए। पर हर इंसान काम में व्यस्त था। इसलिए वे पृथ्वी से बोले 'बहन' तुम्हारे ये पुत्र इतने व्यस्त क्यों दिखाई दे रहे हैं ? हमारे पास नही आते। हम देवतागण है, उन्हे वरदान देना चाहते है यह सुनकर पृथ्वी मुस्कराई और बोली, यहां भी एक देवता निवास करते है'। मेरे ये पुत्र आजकल उन्ही की पूजा कर हरे है। आप सही समय पर नहीं आए है। यह बात देवताओं के समझ से परे थी। वे सोचने लगे कि आखिर ऐसा कौन सा देवता है, जो पृथ्वी पर निवास करता है। उन्होने पृथ्वी से उनका उत्तर समझााने का आग्रह किया। तब पृथ्वी ने एक आदमी को बुलाया और उसकी हथेली देवताओं को दिखाती हुई बोली 'इनका देवता यहाँ रहता है। मेरे पुत्र आज कल उसी की पूजा–अर्चना कर रहे हैं पर इसकी तो कोई शक्ल –सूरत नही है। यह दिखाई नहीं देता। देवता विस्मृत होकर बोले। पृथ्वी बोली, 'उस देवता का नाम है श्रम जो हथेली में निवास करता है और जहाँ श्रम की पूजा होती है, वहाँ देवताओं का क्या काम।' पृथ्वी की बात सुनकर देवता सारी बात समझ गए और निराश भाव से वापस चले गए।

सच्चा दोस्त ही दुर्लभ हीरा

वो वार्ड में लेटे हुए उदासी में डूबे थे 15 दिनों से अस्पताल में बीमारी से जूझ रहे थे मगर इक्का–दुक्का लोगों ने उनकी खबर ली पर फेसबुक और ट्विटर पर उनके दोस्तों की लिस्ट सैकड़ों में दिखती है। दरअसल दोस्ती को लेकर हम भ्रम के युग में जी रहे हैं। हम चाहें जितने सोशल हो जाए दोस्तो की तादाद् इक्का–दुक्का ही होती है ऐसा भी हो सकता है कि आपका कोई दोस्त हो ही नही सारे परिचित भर हों । मेरा सारा जीवन अकेले और बिना दोस्त के बीता।

सच्चा मित्र मिलना एक दुर्लभ हीरे के मिलने जैसा है दोस्त बनाना सिर्फ आप पर निर्भर नहीं करता यह दोनों तरफ की कोशिश का नतीजा होता हैं। दोस्ती न तो मनचाही हो सकती है। और न ही एकाएक सच्ची दोस्ती धीरे बढ़ने वाले पौधों की तरह होती है। और उसे यह दर्जा पाने से पहले तमाम मुश्किलें सहकर भी मजबूती से खड़ा रहना पड़ता है। सुकरात ने कहा है कि दोस्ती में जल्दबाजी नहीं करों और दोस्ती करो तो उसे अंत तक निभाओं। दोस्ती से अधिक उसे अंत तक निभाना सबसे बड़ी कसौटी है ऐसा नहीं कि मैने किसी से दोस्ती नहीं की जब भी मैने किसी में ईमानदारी की झलक देखी उसकी तरफ हाथ बढ़ाया उसने थामा भी लेकिन वह बस अपना फायदा देखता रहा जब भी मुझे उसकी जरूरत महसूस हुइ उसे खुद से दूर ही पाया ।

कुछ सामान्य जानकारियाँ

मिलावटी खाद्य पदार्थों की जाँच

फलों का निरीक्षण

यदि फल समान रूप से एक ही रंग के है और उसका डंठल भी उसी रंग में पका हुआ है तो यह अन्य किसी कार्बनिक पदार्थ से पकाये जाने का द्योतक है। पर प्राकृतिक रूप से पके फलों में चमक नहीं मिलेगी तथा फल चकत्तेदार तथा एक सिरे से पककर दूसरे सिरें तक पकता हुआ जायेगा।

शहद

शहद की कुछ बूंदे कागज के टुकड़े पर डालकर जलाने पर यदि चिटचिटाहट की आवाज आती है तो इसमें चीनी एवं पानी की मिलावट हैं।

नारियल का तेल

इसे फ्रिज मे रखें, यदि शुद्ध होगा तो नारियल तेल जम जायेगा अन्य तेल नहीं।

नमक में चाक की मिलावट

एक गिलास पानी में एक चम्मच नमक घोलें यदि चाक की मिलावट है तो पानी दुधिया हो जायेगा।

मिर्च पाउडर मे रंग की मिलावट

पानी पर मिर्च पाउडर डाले यदि रंग है तो पानी रंगीन हो जाएगा मगर भूसी मिली है तो वह पानी के ऊपर तैरेगी

ऐसे ही धनिया मे भी घोड़े की लीद मिली है तो वो भी पानी के ऊपर तैरेगी।

दूध में यूरिया की पहचान

थोड़े से दूध में आधा चम्मच सोयाबीन का आटा मिलाये तथा पाँच तथा पाँच मिनट बाद धोलमे लाल लिटमरू पेपर डाले यदि लिटमरू पेपर का रंग नीला हो जाये तो दूध मे यूरिया की मिलावट है।

चीनी में खड़िया पाउडर की मिलावट की पहचान

एक गिलास में एक चम्मच चीनी घोले यदि चाक पाउडर की मिलावट है तो वो नीचे बैठ जायेगी तथा शुद्ध चीनी घुल जाएगी।

दूध में पानी की मिलावट

दूध की कुछ बूँदे चिकनी सतह पर डाले शुद्ध दूध धीरे–धीरे निशान छोड़ते हुए बहेगा जबकि पानी मिला दूध बिना निशान छोड़े तेजी से बहेगा।

दूध/खोया में वनस्पति घी की पहचान

थोड़े से दूध मे 10 बूँद नमक का तेजाब–एवं एक चम्मच चीनी मिलाये पाँच मिनट बाद यदि घोल लाल–रंग का हो जाये तो उसमें वनस्पति घी की मिलावट है।

खरीदारी करते समय रखे ध्यान

- प्रमाणित एवं रजिस्टर्ड फर्म से सामान खरीदे।
- मानक बाट माप तराजू से तौल या माप कर दी गयी वस्तु खरीदे।
- लकड़ी, ईंट, पत्थर के बाट का प्रयोग गैरकानूनी है।
- कपड़ा खरीदते समय मीटर के दोनों किनारों पर निरीक्षक की सील देखें।
- तराजू की भुजा पर निरीक्षक की सील लगी होती है इसको देखने से उसकी वैद्धता की पुष्टि होती है।
- पेट्रोल, डीजल पम्पों में डिलीवरी लेने मे जल्दबाजी न करें। शून्य मीटर की रीडिंग अवश्य देखें।
- रसोई गैस सिलैण्डर की सील टूटी होने पर उसे न लें।
- सोने चांदी के गहने मानक बुलियन, बांटों से तौलावें।
- मिठाई विक्रेता की ओर से मिठाई के साथ डिब्बे को तोलकर देना अवैधानिक है।
- भुगतान करने के बाद बिल व रसीद जरूर लें।
- रसीद पर विक्रेता का नाम, पता, तारीख देने फर्म का रजि. नम्बर देखें
- टैक्सी मे यात्रा करते समय मीटर किराया को अवश्य देखें।

चुटकुला

एस.आई. अनवर

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

कन्फ्यूजन

एक बार मैं अपने बेटे को साइंस में animal voices के बारे में पढ़ा रहा था कि a horse neighs, a donkey brays, a tiger roars, a dog barks वग़ैरह–वग़ैरह। बेटे को और समझाने के लिए मैने हिन्दी में बताना शुरु किया कि हर जानवर की अलग–अलग आवाज़ होती है, जैसे कि हाथी की आवाज़ को चिंघाड़ना कहतें हैं, शेर की आवाज़ को दहाड़ना, गाय, भैंस की आवाज़ को रंभाना कहतें हैं, वग़ैरह–वग़ैरह। बताने के बाद मैने फिर से अंग्रेज़ी में पूछना शुरु किया और पूछा, a dog..? इस पर बेटा बोला, भौंक्स !

आपके पत्र

भारत सरकार
राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति

हिन्दुस्तान एरोनॉटिक्स लिमिटेड
उपसाधन प्रभाग, लखनऊ

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान ने जून/दिसम्बर 2012 को समाप्त छमाही अवधि में पत्रिका प्रकाशन एवं हिंदी कार्यशाला के आयोजन (इक्षु - द्वितीय पुरस्कार) का सराहनीय कार्य किया है।

राजभाषा कार्यान्वयन हेतु इस कार्यालय के अधिकारियों/कर्मचारियों का यह प्रयास अत्यंत प्रशंसनीय है।

(संजय कुमार पाण्डेय)
सचिव
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति
एवं
उप प्रबंधक, मानव संसाधन
(सुविधा प्रबंधन-राजभाषा)
एच.ए.एल., उपसाधन प्रभाग, लखनऊ

(चन्द्र कैलाश विश्वकर्मा)
अध्यक्ष
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति
एवं
महाप्रबंधक
एच.ए.एल., उपसाधन प्रभाग,
लखनऊ

भारत सरकार
राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति

हिन्दुस्तान एरोनॉटिक्स लिमिटेड
उपसाधन प्रभाग, लखनऊ

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान ने जून/दिसम्बर 2012 को समाप्त छमाही अवधि में राजभाषा कार्यान्वयन की दृष्टि से चतुर्थ स्थान प्राप्त किया है। इसके फलस्वरूप इन्हें प्रतीक चिह्न प्रदान किया जाता है।

इस कार्यालय के अधिकारियों/कर्मचारियों का यह प्रयास विशेष सराहनीय है।

(संजय कुमार पाण्डेय)
सचिव
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति
एवं
उप प्रबंधक, मानव संसाधन
(सुविधा प्रबंधन-राजभाषा)
एच.ए.एल., उपसाधन प्रभाग, लखनऊ

(चन्द्र कैलाश विश्वकर्मा)
अध्यक्ष
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति
एवं
महाप्रबंधक
एच.ए.एल., उपसाधन प्रभाग,
लखनऊ

इक्षु का प्रथम अंक प्राप्त हुआ। इस अंक में राजभाषा, गन्ना, शर्करा एवं गुड़ सम्बन्धी लेख, स्वास्थ्य सम्बन्धी लेख, व्यंग्य, कहावतें, कविता, गज़ल एवं गीत, लघु कहानी, सामान्य कृषि एवं पशुपालन सम्बन्धी लेख, विज्ञान एवं राजभाषा संबंधी गतिविधियां से संबंधी सारी जानकारियाँ इस पत्रिका में समाहित हैं जो कि गागर में सागर समान हैं। गन्ना पर लिखे गये लेखों से लोगो को काफी जानकारी मिलेगी साथ ही गन्ने का पौराणिक महत्व भी लोगों को पता चलेगा। राजभाषा के लेख से राजभाषा संबंधी संवैधानिक अनुबंधों के बारे में कार्यालय में कार्य करने वाले लोगों के बारे में जानकारी मिलेगी। चीनी के मूल्यों के उतार चढ़ाव के ऊपर भी अच्छी जानकारी समाहित किया गया है।

इस अंक में आपके द्वारा डाले गये व्यंगय **'भारतीय अर्थव्यवस्था की रेखागणित'** को काफी अच्छे ढ़ग से लिखा गया है। लघु कहानी में **'कन्यादान'** भी बहुत अच्छा लगा। पत्रिका में समाहित सभी रचनाकार बधाई के पात्र हैं। अंत में इस आकर्षक अंक के लिए संस्थान तथा इसमें कार्य करने वाले सभी व्यक्ति बधाई के पात्र हैं।

डा. शिवेन्द्र कुमार
प्रधान वैज्ञानिक एवं प्रधान
पूर्वी क्षेत्र के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का अनुसंधान परिसर
अनुसंधान केन्द्र, राँची

छमाही पत्रिका **'इक्षु'** को पढ़ने का मौका मिला इस अंक में अपने विभिन्न विषयों पर लेखों का संग्रह किया है वह काफी सराहनीय है। हिन्दी की शान को आगे बढ़ाने में सहायक और सफल प्रकाशन हेतु संपादक मंडल को ढ़ेर सारी बधाइयाँ।

डा. जे. सिंह
प्रधान वैज्ञानिक
भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

सर्वप्रथम **'इक्षु'** के प्रथम अंक को निकालने के लिए आप सभी संपादक मंडल को धन्यवाद। आपका प्रथम अंक हमने पढ़ा जो काफी अच्छा लगा। इसमें आपके द्वारा विभिन्न विषयों पर लेखों का संग्रह काफी सराहनीय है। इस तरह कीपत्रिका के निकलने से लोगों को हिंदी में कार्य करने के लिए काफी जागरूकता मिलेगी। साथ ही इस पत्रिका में वैज्ञानिक लेखों को हिंदी में लिखने के लिए वे सभी लेखकों की भी सरहना करनी होगी कि वे अपने विचारों को इतने सरल भाषा में लिखा।

आपने पिछले हिन्दी पखवाड़े में इतने सारे कार्यक्रमों को किया इसका ब्यौरा देना काफी सराहनीय है। इससे आपके संस्थान का हिंदी के प्रति लगाव का पता चलता है। राजभाषा में वैज्ञानिक लेखन को बढ़ावा देना इस पत्रिका के माध्यम से राजभाषा का प्रचार–प्रसार एक सराहनीय कदम है। इस अंक के लिए बधाई एवं अगले अंक के लिए शुभकामनाओं के साथ.....।

डा. गोविन्द पाल
वरिष्ठ वैज्ञानिक
बीज अनुसंधान निदेशालय, मऊ

सर्वप्रथम **'इक्षु'** के प्रथम अंक भेजने के लिए धन्यवाद। आपके संस्थान से प्रकाशित इक्षु पत्रिका में आप लोगों द्वारा काफी विषयों पर रचना का समावेश किया गया है। वह काफी सराहनीय है। गन्ने के बारे में इतनी सारी जानकारी इस पत्रिका के द्वारा प्राप्त हो रही है गन्ना की बुवाई से लेकर उसके लगने वाले बिमारियों एवं पौराणिक महत्व यह सभी जानकारी काफी सराहनीय है। राजभाषा में वैज्ञानिक लेखों को लिखने काफी प्रोत्साहन मिलेगा। एक सार्थक अंक आप लोगों के प्रयास से हमें प्राप्त हुआ इसके लिए आपके संस्थान की पूरी टीम को हार्दिक बधाई देता हूँ।

श्रीमती अर्चना सिंह
व्यायाम शिक्षिका
जवाहर नवोदय विद्यालय
सरोजनी नगर, लखनऊ

23 लखनऊ •शनिवार •23 मार्च 2013 हिन्दुस्तान खेल मंत्राल

भारतीय गन्ना संस्थान में चार दिवसीय खेल का समापन

करनाल बना चैम्पियन

लखनऊ। प्रमुख संवाददाता

फुटबाल प्रतियोगिता की विजेता करनाल की टीम

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में हुए चार दिवसीय खेलकूद में राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान करनाल ने शानदार प्रदर्शन करते हुए ओवरआल चैम्पियनशिप जीत ली है। एथलेटिक्स में सिफेट लुधियाना की दीपिका गोस्वामी और पुरुषों में करनाल के रजनीश कुमार सर्वश्रेष्ठ एथलीट बने। एनबीएफजीआर लखनऊ को सबसे अनुशासित टीम का खिताब दिया गया। खेलकूद का समापन महापौर डा. दिनेश शर्मा ने किया। लखनऊ की विज्ञानी वी. विशा कुमारी व शिमला की श्यामलता को विशेष पुरस्कार दिए गए।

आखिरी दिन का आकर्षण फुटबाल का खिताबी मुकाबला रहा। इसमें करनाल की टीम ने एनडीआरआई, करनाल ने सीएसएसआरआई, करनाल को हराकर स्वर्ण पदक जीता। वॉलीबाल (शूटिंग) में भी एनडीआरआई, करनाल की टीम ने एनबीएजीआर, करनाल को हराकर स्वर्ण पदक जीत लिया। कबड्डी में भी एनडीआरआई, करनाल ने अपना स्वर्ण अभियान जारी रखते हुए फाइनल में बिहार को हरा दिया। बास्केटबाल में गेहूं अनुसंधान निदेशालय, करनाल ने अनुज कुमार के शानदार खेल से एनडीआरआई करनाल को शिकस्त देकर खिताब जीत लिया। बैडमिंटन टीम चैम्पियनशिप के फाइनल में सीपीआरआई शिमला ने एनडीआरआई करनाल को शिकस्त दी। बैडमिंटन महिला सिंगल व डबल में सीफेट लुधियाना के खिलाड़ियों ने बाजी मारी। कैरम पुरुष वर्ग में मेजबान संस्थान के आनंद मोहन श्रीवास्तव ने खिताब अपने नाम किया।

एथलेटिक्स की 1500 मीटर पुरुष दौड़ में एनडीआरआई, करनाल के रजनीश कुमार ने स्वर्ण व अनिल कुमार ने रजत पदक जीता। 400 मीटर पुरुष रिले में एनडीआर आई, करनाल की टीम ने स्वर्ण प्राप्त किया। रजत पदक मेजबान संस्थान, लखनऊ को मिला। पुरुषों के जैवलिन थ्रो में करनाल के चंद्रभान ने स्वर्ण व संदीप देसवाल ने रजत पदक जीते।

www.samaylive.com

राष्ट्रीय सहारा

राष्ट्रीयता • कर्तव्य • समर्पण

लखनऊ । शनिवार • 23 मार्च • 2013

करनाल के खिलाड़ियों का रहा दबदबा

स्वतंत्र भारत

लखनऊ, बृहस्पतिवार, 21 मार्च 2013 (14)

महिलाओं के नाम रहा खेल प्रतियोगिता का दूसरा दिन

लखनऊ, संवाददाता। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में चल रहे चार दिवसीय खेल प्रतियोगिता के दूसरे दिन अलग-अलग खेलों में महिलाओं ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। २०० मी० दौड़ के महिला वर्ग में सिफेट लुधियाना की दीपिका गोस्वामी ने प्रथम स्थान प्राप्त कर अपने संस्थान का नाम रोशन किया वहीं ... की मनीषा तथा करनाल की ... रानी क्रमशः दूसरे व तीसरे स्थान पर रहीं। गोला फेंक प्रतियोगिता में महिलाओं ने पूरे दम-खम के साथ हिस्सा लिया जिसमें शिमला की श्यामलता ने ७.३२ मी० तक गोला फेंक कर प्रथम स्थान प्राप्त किया जबकि सुनीता ठाकुर व लखनऊ की विनम्रता मंहिद्रा क्रमशः द्वितीय व तृतीय स्थान पर रहीं।

The pioneer

'Important to lay stress on national food security'

लखनऊ •मंगलवार •19 फरवरी 2013 हिन्दुस्तान

किसानों ने उन्नत खेती के तरीके जाने

लखनऊ | निज संवाददाता

तकनीक का विकास कर किसान पैदावार बढ़ा सकते हैं। यह बात पूर्व मंत्री अशोक वाजपेई ने सोमवार को भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान (आईआईएसआर) के हीरक जयंती समारोह एवं एग्रोटेक 2013 के समापन समारोह में कही।

उन्होंने समारोह में भाग लेने वाले प्रतिभागियों को सम्मानित भी किया। ओपन बेस्ट स्टाल का अवार्ड सोनालिका ट्रैक्टर, बेस्ट इंटीग्रेटेड स्टाल का अवार्ड यूपीएल एडवांटा, बेस्ट सीड स्टाल अवार्ड न्यूजी को मिला। कृषि अनुसंधान संस्थान दिल्ली को बेस्ट रिसर्च इंस्टीट्यूट स्टॉल अवार्ड मिला।

संस्थान के वैज्ञानिक डॉ. एके शाह ने बताया कि फैजाबाद, बरेली, उन्नाव सहित कई जिलों के तीन हजार से अधिक किसानों ने खेती की नई तकनीक की जानकारी हासिल की। लकी ड्रॉ में रमेश चंद्र और रिजवान ने साइकिल जीती। सात वर्षीय पारूल ने टीवी जीता। इसके अलावा सौ से अधिक किसानों ने टार्च, मोबाइल सहित अन्य उपहार हासिल किया।

खेल

कैनविज टाइम्स

14

महिला वर्ग में विशा को दोहरी सफलता

लखनऊ, 17 अप्रैल 2013 दैनिक जागरण | 5

गुणवत्तायुक्त शोध के लिए महत्वपूर्ण 'एम' फैक्टर

• एमएस स्वामीनाथन ने जनहित में शोध करने को कहा

पद्धति, गन्ना में अधिकतम-न्यूनतम उत्पादन चक्र, उच्च गुणवत्ता के निवेशकों की कमी है। इस अवसर पर संस्थान के निदेशक डॉ. सुशील सोलोमन ने संस्थान द्वारा विकसित कोलख 94184 प्रजाति के बारे में बताया कि उत्तर प्रदेश व बिहार में यह प्रजाति काफी सफल रही है। इसके अलावा गन्ना कटाई, बोवाई आदि के लिए विकसित यंत्रों की जानकारी दी।

Sunday pioneer

'Scientists may strengthen research capabilities by using Doppler radar'

The pioneer

Scientists imparted training in SAS

लखनऊ

कैनविज टाइम्स

6

शोध से मिलेगा उच्च गुणों वाला गन्ना

MyCi

वैज्ञानिक शोध में नई चुनौतियों का ख्याल रहे

स्पोर्ट्स

14 डेली न्यूज

रजनीश को 800मी.दौड़ में पहला स्थान

उत्तरी क्षेत्रों के शोध संस्थानों की खेल-कूद प्रतियोगिता शुरू

हिन्दी कार्यशाला
दिनांक - 28-3-2013
व्याख्यान: हिन्दी साहित्य में हास्य कविता का महत्व
भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
हिन्दी कार्यशाला

Diamond Jubilee
National SugarFest

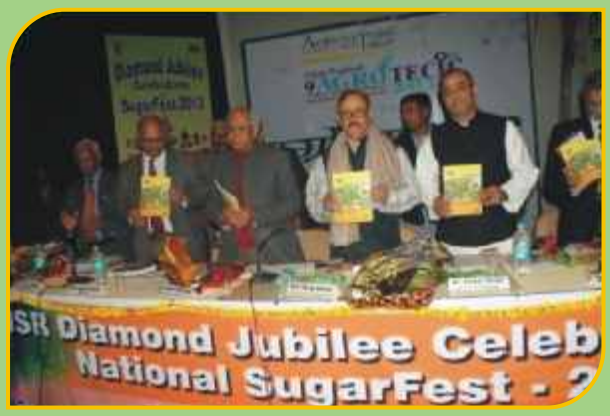

गन्ना खेती
माहवार मार्गदर्शिका
Monthly Package of
Sugarcane Cultivation

army printing press
www.armyprintingpress.com
Lucknow (0522) 6565333